आर.एन.आई. नं. 3653/57
मुद्रण तिथि 5 से 8 मार्च, 2021
डाक प्रेषण तिथि 10 मार्च, 2021

वर्ष : 79 अंक : 03
फाल्गुन, 2077 मूल्य : ₹ 10
पृष्ठ संख्या 104

डाक पंजीयन संख्या Jaipur City/413/2021-23
WPP Licence No. Jaipur City/WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

मार्च, 2021

Website : www.jinwani.in

शरीर नश्वर है, जाने वाला है, तो क्यों नहीं इस शरीर से जितना बन सके, उतना दान देकर जीवन सफल कर लूँ।

– आचार्य श्री हीरा

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

With Best Compliments :
Rajeev Nita Daga Foundation Houston

जय गुरु हस्ती जय महावीर जय गुरु हीरा-मान

अंक सौजन्य

वीरमाता श्राविकारत्न
श्रीमती प्रेमकुमारीजी मेहता
(1933-1997)
सांसारिक सुपुत्र तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय
श्री प्रमोदमुनिजी से संथारा ग्रहण

दृढ़धर्मी
विनयवान्
एवं
गुरु चरणों में
समर्पित

संघसेवी, वीरपिता सुश्रावक
सी.ए. श्री सूरजमलजी मेहता
(1929-2000)
संयोजक, पल्लीवाल क्षेत्र
(1982 से जीवन पर्यन्त)

आपके सुपुत्र अनन्य गुरुभक्त, सहृदय, करुणाशील सुश्रावकरत्न सी.ए. श्री प्रकाशचन्द जी मेहता (1950-1992) अत्यन्त विनयवान्, संघसेवा में समर्पित रहे। सुपुत्रवधू श्राविकारत्न श्रीमती पुष्पाजी मेहता (1950-2018) गुरुभक्ति में समर्पित रहीं एवं संथारा पूर्वक प्रयाण किया। सुपुत्र श्रावकरत्न श्री कमलचन्दजी मेहता (1958-2018) आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत, संयमित जीवन, साधु-साध्वियों के अध्यापन में समर्पित रहे।

गुरु चरणों में श्रद्धावनत एवं संघसेवा में समर्पित
सी.ए. क्रान्ति मेहता-कमला मेहता (सुपुत्र-सुपुत्रवधू)
सी.ए. इंजीनियर किरन मेहता-सुनीता मेहता (सुपुत्र-सुपुत्रवधू)

सुपौत्र-सुपौत्रवधू

सी.ए. मनीष (अ.भा.श्री जैन रत्न युवक परिषद् अध्यक्ष)-संगीता मेहता
सी.ए. प्रफुल्ल-सी.ए. यशु मेहता, इंजीनियर जिनेन्द्र-अंकिता मेहता

सुपौत्री-सुपौत्री दामाद

पूजा-नितिन बुरड़, सी.ए. पूर्णिमा-सी.ए. प्रदीप जैन, सी.ए. विनिता-सी.ए. मितेश कोठारी

जय गुरु हस्ती जय महावीर जय गुरु हीरा-मान

अंक सौजन्य

अनन्य गुरुभक्त श्राविकारत्न
स्व. बदामबाईजी नागसेठिया
4 दिवसीय सजग चौविहार संथारा

अनन्य गुरुभक्त श्रावकरत्न
स्व. मोतीलालजी नागसेठिया
9 दिवसीय सजग चौविहार संथारा
उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा.
के मुखारविन्द से

अनन्य गुरुभक्त श्रावकरत्न स्व.
प्रेमचन्द मोतीलालजी नागसेठिया
11 दिवसीय चौविहार संथारा
व्याख्यात्री महासती श्री
पद्मप्रभाजी के मुखारविन्द से

अनन्य गुरुभक्त युवारत्न स्व.
रूपेश कुमार प्रेमचन्दजी नागसेठिया
एक घण्टे का चौविहार संथारा
(35 वर्ष की आयु में)

:: विनीत ::

हुकुमचन्द-सौ. कंचनबाई नागसेठिया
सागरचन्द-सौ. सपना नागसेठिया
पीयूष-सौ. किरण नागसेठिया

सौ. रेखा बोरा, सौ. मेघा कोठडीया, सौ. छाया सुराणा, सौ. श्रेया चोरड़िया, सौ. साची अलीझाड़, विपुल, दिव्या, केशर (श्रुती), हर्ष एवं समस्त नागसेठिया परिवार होलनांथा (महाराष्ट्र)

ISSN 2249 - 2011 हिन्दी–मासिक

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
प्लॉट नं. 2, नेहरुपार्क, जोधपुर (राज.), फोन-0291-2636763
E-mail : absjrhssangh@gmail.com

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
अशोककुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182, के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997
जिनवाणी वेबसाइट- www.jinwani.in

卐 प्रधान सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

卐 सह–सम्पादक
नौरतनमल मेहता, जोधपुर
मनोज कुमार जैन, जयपुर

卐 सम्पादकीय कार्यालय
ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाजनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : 0141-2705088
E-mail : editorjinvani@gmail.com

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2021-23
WPP Licence No. JaipurCity-WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

परिजूरइ ते सरीरयं,
केसा पंडुरया हवंति ते।
से चक्खु-बले य हायइ,
समयं गोयम! मा पमायए।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 10.22

हो रहा जीर्ण यह तन तेरा,
हो रहे केश ये धवल पककर।
घट रहा नयनबल है तेरा,
गौतम! प्रमाद क्षण का मतकर।।

मार्च, 2021
वीर निर्वाण सम्वत्, 2547
फाल्गुन, 2077

वर्ष 79 अंक 3

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु.
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु.
स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
संरक्षक सदस्यता : 11000/-
साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/साभार नकद राशि ``JINWANI'' बैंक खाता संख्या SBI 51026632986 IFSC No. SBIN 0031843 में जमा कराकर जमापर्ची (काउन्टर-प्रति) अथवा ड्राफ्ट भेजने का पता 'जिनवाणी', दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार,जयपुर-302003 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, E-mail : sgpmandal@yahoo.in

मुद्रक : डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-4043938

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	सत्य	–डॉ. धर्मचन्द जैन	7
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	–डॉ. धर्मचन्द जैन	10
विचार-वारिधि-	आत्म-शक्ति	–आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	11
प्रवचन-	धर्म का रस आने पर	–आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	12
	आलोचना पाठ	–मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी	16
	पुण्य-प्रकाश	–तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.	19
	खटपट को झटपट करें दूर	–श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा.	23
	उपयोग की साधना : मोक्षमार्ग की आराधना	–श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	27
प्रासङ्गिक-	अनन्त उपकारी अप्रमत्त साधक गुरु हीरा	–श्री जवाहरलाल कर्णावट	30
शोधालेख-	श्रावकों का श्रेष्ठ वचन-व्यवहार	–श्री त्रिलोकचन्द जैन	34
जीवन-व्यवहार-	व्यावहारिक जीवन के नीति वाक्य (3)	–श्री पी.शिखरमल सुराणा	41
चिन्तन-	बारह भावना की उपयोगिता	–श्री लड्डूलाल जैन	42
English-section	**Jain History, Philosophy, Beliefs and Practice**	*–Sh. H. Kushal Chand*	43
तत्त्व-चर्चा	क्या किसी जीव को बचाने का भाव हिंसा है?	–डॉ. धर्मचन्द जैन	50
वैज्ञानिक आलेख -	जैन जीवनशैली का वैज्ञानिक अन्वेषण	–श्री नमन डागा	54
धर्म और विज्ञान -	विज्ञान पर अहिंसा का अंकुश आवश्यक	–डॉ. दिलीप धींग	58
आध्यात्मिक-चिन्तन-	2021 में 21 दिन का लॉकडाउन	–श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'	63
गीत/कविता-	गुरु हस्ती की साधना का.....	–श्री धर्मचन्द जैन	29
	जैनधर्म का क्या कहना	–श्रद्धेय श्री अभयमुनिजी म.सा.	49
विचार/चिन्तन-	छोड़ने जैसा स्वभाव	–संकलित	26
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	–श्री गौतमचन्द जैन	68
पाक्षिक पत्र-	पक्खी पत्र	–आचार्य श्री रत्नसेनसूरिजी	52
रिपोर्ताज-	आचार्य श्री हस्ती दीक्षाशताब्दी सम्पूर्ति सप्ताह के अविस्मरणीय पल	-श्री ऋषभ जैन	70
	तपस्विनी बहिन बिन्दुजी मेहता की 150 दिवसीय तपस्या के पूर का पीपाड़ में उत्सव	-श्री गिर्राज जैन	75
समाचार-विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	78
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	89
बाल-जिनवाणी -	विभिन्न आलेख/रचनाएँ	–विभिन्न लेखक	91

10 मार्च 2021
जिनवाणी 7
ISSN 2249-2011

सम्पादकीय

सत्य

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

जब हम सत्य की बात करते हैं तो प्राय: उसका अभिप्राय सत्य बोलना ही ग्रहण करते हैं, क्योंकि श्रमणों के पाँच महाव्रतों में एवं श्रावकों के पाँच अणुव्रतों में मृषावाद से विरमण का प्रतिपादन किया गया है, अर्थात् झूठ बोलने के त्याग का विधान किया गया है। झूठ बोलने का त्याग भी तीन करण एवं तीन योग से होता है–न स्वयं झूठ बोलना है, न दूसरों से झूठ बुलवाना है और न ही झूठ बोलने वाले का समर्थन करना है। ये तीन करण हुए। तीन योगों से अभिप्राय है मन में भी झूठ बोलने का विचार या संकल्प नहीं लाना है, वचन से झूठ नहीं बोलना है और शरीर से भी झूठ की चेष्टाएँ नहीं करनी हैं। झूठ बोलने का कार्य तो प्राय: वचन के रूप में ही होता है, किन्तु आगमकारों ने कितना गहरा विचार किया है कि झूठ बोलने के त्याग का मन एवं काया से भी सम्बन्ध माना है।

अब प्रश्न यह है कि सत्य क्या है? सत्य को जानने पर ही सत्य का कथन किया जा सकता है। जो सत्य को नहीं जानता, मिथ्या को ही सत्य समझता है वह सत्य का कथन कैसे कर सकेगा? सत्य की महिमा जगत् में अनादिकाल से चली आ रही है, आज भी है और आगे भी रहेगी। उपनिषद् में सत्य की ही विजय का कथन है–**'सत्यमेव जयते।'** आचाराङ्गसूत्र (1.1.3) में कहा गया है–**'पुरिसा सच्चमेव समभिजाणाहि'** अर्थात् हे पुरुषों! तुम सत्य को ही भली–भाँति जानो। यह सत्य को सम्यक् प्रकार से जानने की प्रेरणा है। आचाराङ्गसूत्र में सत्य को जानने के लिए धैर्य की आवश्यकता स्वीकृत है, अत: यह भी कहा गया है– **'सच्चम्मि धिइं कुव्वहा'** (आचाराङ्गसूत्र 1.2.3) सत्य में धृति करो। सत्य को जानने में धैर्य रखो। पूरी तरह मनोयोग से सत्य को जानो। जीवन का एवं जगत् का सत्य क्या है? जिन्होंने सत्य को जाना है वे ही जीवन में सत्य का आचरण कर सकते हैं।

लोक में जो विद्यमान है, अस्तित्ववान् है वह सत् है तथा उस सत् का भाव सत्य है। जो वस्तु संसार में जैसी है उसे उसी रूप में बिना मिलावट के जानना सत्य को जानना है तथा उसका उसी रूप में कथन करना सत्य को कहना है।

सत्य को जानना कठिन नहीं है। जो सत्य को जानना प्रारम्भ करता है उसे सत्य का बोध होने लगता है। अपने आस–पास दृष्टिपात करें, अपने भीतर दृष्टिपात करें तो सत्य का बोध होने लगता है। शान्त एवं तटस्थ चित्त से धैर्य के साथ, बिना उत्तेजना के, बिना राग–द्वेष के जब समता में रहकर जाना जाता है तो सत्य का बोध होता है। राग–द्वेष युक्त एवं अशान्त चित्त में सत्य धूमिल हो जाता है। तब न अपने भीतर के सत्य का बोध होता है और न बाहर के सत्य का ज्ञान होता है।

सत्य को अपने अनुभव से भी जाना जा सकता है तथा आप्त शास्त्रों, आगमों एवं सत्यनिष्ठ गुरुजनों से भी जाना जा सकता है। अपने अनुभव का सत्य क्या है, जरा समता में रहकर जानें तो अनेक सत्य उद्घाटित होते हैं, यथा–

1. मेरे भीतर इन्द्रिय–सुखों की लोलुपता है। इन्द्रिय–सुखों की ओर आकर्षित होता हूँ। खाने–पीने की वस्तुएँ हों या अन्य इन्द्रियों के विषय, उनको महत्त्व देता हूँ। इस तथ्य को मैं यथाभूत जानता हूँ, वास्तविक स्थिति को सही रूप में जानता हूँ, तो कहा जा सकता है कि मैं इस सत्य को जानता हूँ। यदि मैं इस सत्य को छिपाता हूँ एवं किसी को बोलते समय इस सच्चाई को प्रकट करने में हिचकता हूँ, उसको मिथ्या रूप में प्रस्तुत करता हूँ

तो मैं असत्य का आचरण करता हूँ एवं असत्य का ही कथन करता हूँ।

2. मेरे भीतर अहंकार है, उस पर थोड़ा-सा आघात होने पर मुझे क्रोध आ जाता है-यह एक सत्य है। इसे जानने का सामर्थ्य समता एवं धैर्य की स्थिति में ही आ सकता है। मैं विनय से युक्त होकर अहंकार के विलय होने या उसके कमजोर पड़ने के सत्य को भी जान सकता हूँ। इस सत्य को जानने पर अपने में सुधार होना प्रारम्भ होता है। जब तक सत्य को अनुभव के आधार पर सम्यक् रूप में नहीं जानते हैं तक तब अपने भीतर के सुधार की सम्भावना नहीं है।
3. मैं अपनी लोभ भावना में दूसरों को हानि पहुँचाने हेतु तत्पर रहता हूँ, दूसरों का शोषण करने के लिए तत्पर रहता हूँ-यह भीतर का सत्य है। जिस दिन ध्यान मग्न होकर इस सत्य को जान लिया जाएगा तो अपनी लोभ-वृत्ति में कमी आना सम्भव है।
4. कई बार मैं व्यर्थ ही दुःखी होता रहता हूँ। बाहर में दुःख का कोई कारण ही नहीं है और मैं दूसरों को अपने दुःख का कारण समझता रहता हूँ। यह सत्य जब अपने अनुभव के स्तर पर प्रकट होता है तो आचाराङ्ग का वाक्य सार्थक हो जाता है कि- **'पुरिसा! सच्चमेव समभिजाणाहि।'**
5. मैं अपने को कितना धोखा देता हूँ, कितने बहाने बनाता हूँ, अपनी कितनी प्रतिज्ञाएँ निभाता हूँ, दूसरों का कितना विश्वासघात करता हूँ-इस प्रकार देखना प्रारम्भ करने पर भीतर का सत्य सामने आता जाता है।
6. बाहर को देखकर भी कभी-कभी सत्य का बोध होता है। प्रतिदिन समाचार पत्र में पचासों लोगों की मृत्यु के शोक सन्देश देखते हैं, कई परिचितों के मरण के समाचार सुनते हैं, कई बार श्मशान घाट पर दाहसंस्कार में जाते हैं तो यह सत्य ज्ञात होता है कि हम भी मरणधर्मा मनुष्य होने के नाते इसी प्रकार एक दिन इस प्यारी देह को, परिवारजनों, सगे-सम्बन्धियों, मित्रों को, ज़मीन-ज़ायदाद को एवं बैंक बैलेंस को यहाँ ही छोड़कर चले जायेंगे। जीवन की अनित्यता के इस सत्य को बाहर से जानकर भी भीतर से उस पर भरोसा आसानी से नहीं होता, इसीलिए इस सत्य को नज़र अन्दाज़ कर संग्रह एवं परिग्रह में तनाव भरा जीवन जीते रहते हैं। कोई हमें नहीं बाँधता, हम स्वयं ही बन्धन में बन्धते चले जाते हैं।
7. मृत्यु का क्षण आने पर कोई किसी को बचा नहीं पाता है। युवा पुत्र का देहान्त होने पर बूढ़े माता-पिता सिसकते रह जाते हैं। अपार धन-सम्पत्ति भी उसे बचा नहीं पाती। स्वयं चिकित्सक भी एक दिन मौत का मुँह देखते हैं-अशरणता के इस सत्य पर भी हमें कहाँ भरोसा होता है?
8. भ्रष्टाचार एवं रिश्वतखोरी का परिणाम बुरा होता है। भीतर में आत्मबल कमजोर पड़ता है। पकड़े जाने पर प्रतिष्ठा भी दाँव पर लग जाती है, फिर भी धन का लोभ एवं दुराचार का रस इस दोष में आबद्ध रखता है। इस सत्य को बाहर से देखने पर भी हम अपने पर लागू नहीं करते।

जीवन में सत्य को जानने के ऐसे अनेक उदाहरण हो सकते हैं, किन्तु सारभूत बात यह है कि जो सत्य को जानता है और उसे मन, वचन एवं काया के स्तर जीता है उसकी आत्मिक उन्नति निश्चित रूप से होती है। वह निर्भय बनता है, उसके चित्त में शान्ति होती है, वह स्थायी सुख की ओर अग्रसर होता है।

प्रश्नव्याकरणसूत्र में कहा है-**'सच्चं लोगम्मि सारभूयं'**-सत्य ही इस लोक में सारभूत है। सत्य को जानकर सत्य को बोलेंगे तो हमारे वचन कितने पावन होंगे, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। बोलने में हम दैनिक व्यवहार के स्थूल सत्य का भी प्रयोग करें तो उसकी भी जीवन में महत्ता है। वह भी व्यक्ति को प्रामाणिक एवं ईमानदार बनाता है। सत्य बोलने वाले के लिए कहा गया है-

विसस्सणिज्जो माया व होइ पुज्जो गुरुव्व लोअस्स।
सयणु व्व सच्चवाई, पुरिसो सव्वस्स होइ पियो।।

-भक्तपरिज्ञा प्रकीर्णक, 99

जो सत्यवादी होता है वह माता के समान विश्वसनीय होता है, पिता के समान लोक में पूज्य होता है तथा स्वजनों के समान सबका प्रिय होता है। भीतरी सत्य से अनभिज्ञ बाहरी क्रिया-कलापों एवं व्यवहार में जो वचन में सत्य का प्रयोग करता है, उसको भी इतना लाभ हो सकता है तो जो भीतरी सत्य को जानकर उसे जीने लगे, तो उसका तो कहना ही क्या? उसकी प्रगति का मार्ग उसे आगे से आगे दिखाई देने लगता है।

दशवैकालिकसूत्र (5.2.49) कहता है-**अणुमायं वि मेहावी मायामोसं विवज्जए।** जो वास्तव में मेधावी पुरुष है वह अणुमात्र भी मायामृषावाद का वर्जन करता है। तिल तुष मात्र भी झूठ का प्रयोग नहीं करता है।

विडम्बना यह है कि आज मनुष्य को सत्य से अधिक भरोसा झूठ पर है। वह कई बार झूठ बोलकर दण्ड से बचा है, झूठ बोलकर उसने धन कमाया है, झूठ बोलकर वह माता-पिता की डाँट से बचा है, समाज में झूठी प्रशंसा प्राप्त की है। किन्तु यह सब करके भी अन्त में उसके चित्त को तनाव और दुःख ही घेरे रहते हैं। वह स्वयं अपनी नज़रों में ऊँचा नहीं उठता और दूसरों को उसकी हक़ीकत ज्ञात होने पर वह दूसरों की नज़रों में भी गिर जाता है। वह अपनी विश्वसनीयता खो देता है। झूठ बोलने वाला स्वयं अपने मकड़जाल में फँस जाता है। झूठ से तात्कालिक लाभ अवश्य दिखाई पड़ता हो, किन्तु दीर्घकाल में वह आत्मघातक सिद्ध होता है।

जैन आगम सत्य बोलने के सम्बन्ध में एक विशेष संकेत यह करते हैं कि किसी के सम्बन्ध में ऐसा सत्य नहीं बोलना चाहिए जो घातक सिद्ध हो, इसलिए हितकारी एवं निरवद्य (निर्दोष) सत्य का प्रयोग करना चाहिए। सूत्रकृताङ्गसूत्र (1.6.23) में कहा है-**'सच्चेसु वा अणवज्जं वयंति।'** सत्य बोलते समय निर्दोष या निरवद्य सत्य बोलना चाहिए। यह सत्य के साथ अहिंसा का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जो हिंसाकारी सिद्ध हो ऐसे सत्य से बचकर उसे अहिंसक विधि से कहना-बुद्धिमानों का कार्य है। उत्तराध्ययनसूत्र (19.27) में कहा है-**'भासियव्वं हियं सच्चं'**-हितकारी सत्य बोलना चाहिए। किसी को अपमान जनक एवं संयम में उपरोधकारक वचन नहीं कहने चाहिए। जो इस प्रकार अहिंसा के साथ सत्य वचन का प्रयोग करता है वही जीवन के अपने भीतरी सत्य को जानने एवं उसका आचरण करने में निरन्तर आगे बढ़ता है।

यह भी ध्यातव्य है कि वचनों का प्रयोग सीमित एवं सार्थक होना चाहिए। अधिक बोलने में शक्ति भी व्यय होती है, समय भी अधिक लगता है एवं यदि बिना विचारे कोई शब्द निकल जाए तो उसका दुष्परिणाम भी भोगना पड़ सकता है। जो परिमित, निर्दोष एवं सोच-विचारकर सत्य वचन बोलता है वह सज्जनों के मध्य प्रशंसा प्राप्त करता है। (दशवैकालिकसूत्र 7.55)

जो सत्यनिष्ठ एवं सत्यवादी होता है उसकी कथनी-करनी में एकरूपता होती है, वह किसी से छल-कपट का व्यवहार नहीं करता, वह जैसा भीतर है वैसा बाहर रहता है। वह संसार की अनित्यता, अशरणता आदि के सत्य से परिचित रहकर निर्मल, निरासक्त जीवन जीने का प्रयास करता है।

सत्य को किस तरह एवं किस ज्ञान से जानते हैं, यह भी महत्त्वपूर्ण है। इन्द्रियों से जाना गया सत्य, बुद्धि के ज्ञान से कई बार निरस्त हो जाता है तथा बुद्धि का ज्ञान विवेक या प्रज्ञा से निरस्त हो जाता है। इसलिए दृष्टि को सम्यक् बनाकर सत्य का प्रज्ञा पूर्वक ज्ञान करके आचरण करने एवं हित-अहित का ध्यान रखकर सत्य बोलने में ही आत्म-विकास, अपरिमित आनन्द, निर्भयता का आस्वादन किया जा सकता है। राग-द्वेष पर विजय पाने का भी यह एक साधन है, क्योंकि क्रोधादि के वशीभूत होकर कहा गया सत्य भी असत्य हो जाता है।

तात्पर्य यह है कि जो सत्य को जानने के लिए तत्पर होता है वह प्रकाश के पथ पर गतिशील होता है तथा जो सत्य को जीवन में जीता है वही महावीर की भाँति पूर्ण ज्ञानी एवं मुक्त होता है। ■

10 मार्च 2021
जिनवाणी 10
ISSN 2249-2011

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

डॉ. धर्मचन्द जैन

कोहेण अप्पं डहति परं च, अत्थं च धम्मं च तहेव कामं। तिव्वं च वेरं पि करेंति, कोधा, अधमं गतिं वा वि उविंति कोहा।। -ऋषिभाषित, 36.12

अर्थ–क्रोध से जीव स्वयं को एवं दूसरे को दोनों को जलाता है। वह अर्थ, धर्म एवं काम को भी जलाता अर्थात् नष्ट करता है। क्रोध से वह तीव्र वैर उत्पन्न करता है तथा नीच गति को प्राप्त करता है।

विवेचन–नन्दीसूत्र में इसिभासियाइं अर्थात् ऋषिभाषितानि अथवा ऋषिभाषित की कालिक आगमों में गणना की गई है। इसमें वैदिक, बौद्ध, आजीवक, जैन आदि परम्पराओं के 45 अर्हत् ऋषियों के वचन संकलित हैं। वैचारिक दृष्टि से यह आगम भी अत्यन्त समृद्ध है। छत्तीसवें अध्ययन में तारायण ऋषि के वचन हैं, जो क्रोध के दुष्परिणों पर केन्द्रित हैं। उसी अध्ययन से यह 12वीं गाथा भी क्रोध के दुष्प्रभावों का संकेत कर रही है।

इस गाथा में प्रतिपादित है कि जो क्रोध करता है वह पहले स्वयं को जलाता है, फिर जिस पर क्रोध करता है, उसे जलाता है। क्रोध करने वाले को यह ज्ञात ही नहीं होता है कि वह क्रोध करके स्वयं का विनाश कर रहा है तथा साथ ही दूसरे को भी हानि पहुँचा रहा है। जो स्व-पर दोनों का विनाशक हो, ऐसा क्रोध करने का क्या लाभ? इस सत्य से हम जब तक अनभिज्ञ हैं तब तक क्रोध में प्रवृत्त होते रहते हैं। क्रोध का यह कथन क्रोध के स्थूल स्वरूप की दृष्टि से किया गया है, जिसमें चित्त असन्तुलित हो जाता है, भौंहे तन जाती हैं, तन, मन एवं आत्मा की शक्ति एकत्र होकर अशुभ पुद्गलों द्वारा विध्वंसक बन जाती है। यह क्रोध अनर्गल-प्रलापक वाणी के माध्यम से भी प्रकट होता है और शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग भी हिंसात्मक स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं। तीव्र क्रोध में ये क्रियाएँ तीव्र रूप में एवं अल्प क्रोध में अल्प रूप में प्रकट होती हैं।

एक विशेष बात इस गाथा में यह कही गई है कि क्रोध आत्मघातक होने के साथ धर्म, अर्थ एवं काम को भी जलाता है या बाधित करता है। भारतीय परम्परा में त्रिवर्ग की अवधारणा रही है-जिसमें धर्म, अर्थ एवं काम का समावेश होता है, क्रोध इन तीनों की पूर्ति में बाधक या विनाशक का कार्य करता है। त्रिवर्ग में मोक्ष को मिलाकर इन चारों को पुरुषार्थ चतुष्टय कहा जाता है, क्योंकि ये चारों जीव के लिए उपयोगी हैं। प्रस्तुत गाथा में यह व्यावहारिक सत्य उजागर किया गया है कि क्रोध का प्रभाव कहाँ तक पहुँचता है। क्रोध के क्षणों में जब चित्त अशान्त होता है तो धर्म साधना सम्भव नहीं होती। क्रोध एक पाप है, उसमें धर्मसाधना की सम्भावना नहीं बनती। क्रोधी व्यक्ति ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र की साधना स्वरूप, जीवों की रक्षा स्वरूप, क्षमा आदि दस भेद रूप एवं वस्तु के स्वभाव स्वरूप धर्म का साधक नहीं हो सकता। इसलिए जिसे अपने जीवन में धर्म को जीना है, उसे क्रोध का त्याग करना अनिवार्य है।

अर्थ अर्थात् धन एवं पदार्थों के अर्जन स्वरूप पुरुषार्थ भी इस क्रोध से बाधित होता है। साथ ही क्रोध के आवेश में प्राप्त धन का भी व्यक्ति विनाश कर बैठता है। वह क्रोध के क्षणों में अनुचित क़दम उठा लेता है तथा दूसरों से सम्बन्ध खराब कर लेता है। दशवैकालिकसूत्र में कहा गया है-**कोहो पीइं पणासेइ।** क्रोध प्रीति का नाश करता है। क्रोधी व्यक्ति के दूसरों के साथ सम्बन्ध दूषित हो जाते हैं, इससे वह अर्थार्जन के क्षेत्र में हानि कर बैठता है। क्रोध के कारण अनेक लोग अपना व्यवसाय सुचारु रूप से सञ्चालित नहीं कर पाते हैं। कभी-कभी नौकरी से हाथ धोना पड़ जाता है या व्यवसाय में घाटा लग जाता है।

इसी प्रकार काम पुरुषार्थ या काम की पूर्ति में भी

(शेषांश पृष्ठ 15 पर)

10 मार्च 2021
जिनवाणी 11
ISSN 2249-2011

विचार-वारिधि

आत्म-शक्ति

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.

- अपने भीतर रहने वाला जो चेतना का बीज है उसमें तो अनन्त शक्ति है। उससे अमित दिव्य शक्तियाँ प्रकट हो सकती हैं। आवश्यकता केवल इस बात की है कि सुयोग्य वातावरण में उस बीज को अंकुरित करें, उसे प्रस्फुटित करें।
- कारण छोटा होता है, परन्तु उससे निर्मित होने वाला कार्य विशाल होता है, भव्य होता है। आपने देखा होगा कि वटवृक्ष का बीज कितना छोटा-सा होता है, किन्तु उसका विस्तार बहुत बड़ा हो जाता है, बीज के आकार से कोटि गुणा अधिक। उसके निर्माण का कारण वह छोटा-सा बीज होता है। यदि बीज न हो तो मूल वृक्ष किससे पैदा हो? उसकी पत्तियाँ, शाखाएँ, प्रशाखाएँ, फूल, फल इत्यादि किससे उत्पन्न हों? यदि बीज ठीक स्थिति में है और उसे अनुकूल संयोग प्राप्त होता रहता है, तो समय पाकर वह इतना विस्तार करता है कि दर्शक उसके विस्तार को देखकर चकित हो जाते हैं।
- मकान के मलबे के नीचे दबे हुए बीज को समय-समय पर यदि वर्षा का पानी मिलता रहे, तब भी वह दबा हुआ बीज अपना विकास नहीं कर पाएगा। क्या उस बीज में विकास करने की योग्यता नहीं है? योग्यता अवश्य है। जब तक उस बीज पर से पत्थर और मलबा न हटा दिया जाए तब तक वह अंकुरित नहीं होगा। हमारे चेतन रूपी बीज पर भी गणनातीत गिरीन्द्रों से भी अधिक मलबे और कीचड़ का भार पड़ा हुआ है, जिसमें दबे हुए हमारे आत्म-देव में चेतना की योग्यता होते हुए भी उसका आगे विकास नहीं हो पाता।
- आत्मा का प्रकाश बड़ा है या बिजली का? बिजली के प्रकाश को खोजकर किसने निकाला? अमुक-अमुक चीज़ों को जुटाने से विद्युत् पैदा हो सकती है, इसे खोजकर निकाला है मनुष्य ने। बिजली का कनेक्शन नहीं होने पर भी बैटरी का खटका दबाते ही प्रकाश हो गया। बैटरी है, तो गाड़ी में बैठे हुए भी रेडियो के गीत सुन लोगे। मानव के मस्तिष्क ने ये सब चीज़ें खोज निकालीं। आत्मा इतनी तेजस्वी है कि उसने छोटे-छोटे जड़ पदार्थों में छिपी हुई शक्ति को प्रकट किया। तो शक्ति प्रकट करने वाला बड़ा या जिसने शक्ति दिखाई वह बड़ा? बिजली से अनन्तगुणी शक्ति हमारी आत्मा में है।
- यदि आत्मा को बलवान बनाना है तो कुछ त्याग को और अच्छाई को आचरण में लाना होगा।
- भूमि, कोठी, जायदाद और धन-सम्पत्ति, ये सब आपके निज के नहीं हैं। आपका निज तो वस्तुतः ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूपी आत्मगुण है। आप निज को भूलकर, निज के आत्म-गुण को भूलकर, जो आपका अनिष्ट करने वाला है, उसको अपना (निज) समझ रहे हो। इस भूमि, जायदाद आदि से ज्यादा सोच आपको ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप का होना चाहिए, क्योंकि ये आपके निज-गुण हैं। एक अल्प बुद्धि वाला व्यक्ति भी जिसे अपने कुटुम्ब का ध्यान हो, खतरे की स्थिति पैदा हो जाए तो जिस जगह वह वर्षों से रह रहा है, उस स्थान को छोड़ने में देर नहीं करेगा। पर बड़े आश्चर्य और दुःख की बात है कि आप निज घर को छोड़कर सर्वस्व नाशक शत्रु के घर में बैठे कराल काल की चक्की में पिसे जा रहे हो। फिर भी महाविनाश से बचने के लिए आपको कोई चिन्ता नहीं है।

-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

10 मार्च 2021
जिनवाणी 12
ISSN 2249-2011

प्रवचन

धर्म का रस आने पर

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के द्वारा सुराणा मार्केट स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन, पाली में रविवार 22 अगस्त, 2010 को फरमाए गए इस प्रवचन का आशुलेखन सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। **-सम्पादक**

संसार में साधना कर सिद्धि मिलाने वाले अरिहंत भगवन्त और धर्म अङ्गीकार कर साधना के पथ पर चलने वाले सन्त भगवन्तों के चरणों में कोटि-कोटि वन्दन!

वीतराग वाणी का अनमोल सूत्र है–अपने आपको जानना। क्यों जानना? जानने का कारण क्या? कारण यही है-अनन्तकाल से इस जीव ने पराये को अपना मान रखा है। दो-चार दिन के जमे संस्कार भी सहज नहीं छूटते। कोई दो-चार दिन चाय पी ले, चाय का स्वाद और रस आ जाय तो चाय छूटना मुश्किल लगता है। कोई पाँच-दस दिन अफीम खा ले, अफीम खाने की लत पड़ जाय तो उसे फिर चाहे जितना मना करो, वह छुपकर भी खायेगा जरूर। क्यों? तो उसे अफीम की आदत लग गई। इन्द्रियों के विषयों के प्रति मोह भाव अनन्तकाल से होने के कारण वे आसानी से छूटते नहीं। सही बात बताने पर भी उनका छूटना सहज नहीं। शास्त्र का अनमोल वचन है-"श्रद्धा है सार धार, श्रद्धा से खेवो पार।" जब तक यह श्रद्धा, रुचि, विश्वास या भावना नहीं बनती तब तक प्रेरणा निष्फल रहती है। थोड़ा-सा कहीं से निमित्त मिला नहीं कि भटकन शुरू हो जाती है।

घर में शादी का प्रसङ्ग हो और अधिक मेहमान आ गये, मिठाई की ज़रूरत है, सब अपने-अपने काम में लगे हुए हैं, उस समय पास में जो भाई खड़ा है उसे पैसे देकर कहते हैं-जा बाजार से मिठाई ले आ। वह भाई मिठाई लेने चला गया, पर रास्ते में उसे अपना एक दोस्त मिल गया। दोस्त ने हाथ पकड़ा और कहा-चल, मेटनी-शो में पिक्चर देखकर आते हैं। वह दोस्त के साथ पिक्चर देखने चला गया। क्यों गया? भीतर में पिक्चर देखने का रस है।

आपने कई बार किसी-न-किसी को ऐसा करते देखा होगा। संसार में रहते विकार भावना का मन में रस लगता है तो आदमी कर्त्तव्य तो भूलता ही है, अपने आवश्यक काम तक भूल जाता है। घर में या ऑफिस में काम करते वक्त कर्त्तव्य भूलकर, जरूरी काम छोड़कर, नौकरी जैसा प्रसंग गँवाकर, क्रिकेट की कॉमेन्ट्री देखने लग जाएगा, इन्द्रियों के विषय-सेवन में अपने-आपको झोंक देगा। कई तो परीक्षा तक छोड़कर भी विषय-सुख भोगने में लग जाते हैं। भले ही उन्हें बाद में पछताना और रोना ही क्यों न पड़े।

जितना रस संसार के प्रति है उतना रस धर्म के प्रति हो तो...? यह मानव तन, आर्यक्षेत्र, उत्तम कुल, सन्तों का समागम, वीतराग वाणी सुनने का सुअवसर धरे के धरे रह जाते हैं, क्यों? क्योंकि वह भोग भोगने के रस को भुला नहीं पाता। आप यहाँ जो प्रवचन-सभा में सामायिक-साधना में बैठकर जिनवाणी श्रवण कर रहे हैं इसमें आपकी पुण्यवानी काम कर रही है, लेकिन जिनको काम-धन्धे की आसक्ति है, घर से स्थानक के लिए प्रवचन-श्रवण को निकला है, रास्ते में कोई ग्राहक मिल जाय तो आप स्थानक पहुँचेंगे या दुकान?

संसार के लोगों में संसार के विषयों के प्रति मन में बसा रस उनसे संसारी कार्यों की भागदौड़ करवाता है, धर्मस्थान, सन्त-समागम और जिनवाणी-श्रवण सब छूट जाते हैं, क्यों? क्योंकि काम-धन्धे में और पैसे कमाने में रस है। आपमें से अधिकतर लोगों के लिए पैसा परमेश्वर है। वहाँ न तो सत्संग-सेवा प्रमुख है और न ही स्वाध्याय।

मैं कितने-कितने दृष्टान्त दूँ, आप ही नहीं, चरम शरीरी भी भटके हैं, इस जन्म में मोक्ष जाना है वे भी जब तक कर्म हैं, भटक सकते हैं। एक राजपुरोहित नया-नया पण्डित बना तो माता रोने लगी। बेटे ने पूछा-''माँ, क्या बात है आप रो क्यों रही हो?'' माँ ने कहा-बेटा! तेरे पिताश्री राजपुरोहित की गद्दी पर बैठे थे, तू अभी छोटा है उस जगह नहीं बैठ सकता, इसलिए मेरी आँखों में आँसू आ गये।'' बेटे ने माँ के आँसू देखकर सोचा कि मुझे पढ़-लिखकर और ज्ञान हासिल करना है। वह अध्ययन के लिए अन्यत्र चला गया। चला तो गया, लेकिन पास में पैसे नहीं थे। उसने किसी सेठ से मदद चाही, सेठ ने पढ़ने की व्यवस्था कर दी। व्यवस्था हो जाने से बच्चे को समय पर खाना-पीना मिलता रहा। भोजन बनाने और साफ-सफाई के लिए सेठ ने एक दासी को भी रख लिया। दासी सेवा करती। दासी की सेवा लेते-लेते उसके मन में विकार जग गया। आपने सुना होगा- कपिल पुरोहित दो मासा सोने के लिए आधी रात को घर से निकल गया। उसने सोचा मुझे राजा के पास सबसे पहले पहुँचना है। पहले-पहल पहुँचने वाले को राजा दो मासा सोना देगा।

उधर, पुरोहित का बच्चा भटक गया। भटकने का कारण क्या? भटकने का कारण था विकार-भावना। उसका पढ़ने में रस नहीं रहा। धर्म के क्षेत्र में भी जिनका भटकाव हो जाता है, उनका व्रत-प्रत्याख्यान टूटता है, व्रत-नियम में ढिलाई आती है और धर्म-कार्य में रस नहीं आता।

आपको जिस दिन धर्म-कार्य में रस लग जायेगा तप करना भारी नहीं लगेगा तो साधना में विकास होता रहेगा। भारी कब तक? जब तक रस न लगे। पाँच साल की एक बच्ची को पाठशाला भेजने के लिए पिताजी ने रिक्शे की व्यवस्था की। स्कूल की फीस भरी। स्कूल में नाम लिखवाया। मास्टर जी से निवेदन किया कि आप बच्ची का पूरा ध्यान रखें। सब-कुछ करने पर भी बच्ची स्कूल जाने में आनाकानी करने लगी तो उसके साथ कुछ मिठाई डिब्बे में रख कर दी, दो रुपये का एक नोट भी खर्च करने के लिए दिया, बच्ची एक दिन तो स्कूल गई, दूसरे दिन फिर बैठ गई कि मुझे स्कूल नहीं जाना।

बच्ची की जिद्द पूरी करने का प्रयास भी किया गया, फिर भी वह नहीं मानी तो पूछा-क्यों, क्या बात है स्कूल क्यों नहीं जाती?

बच्ची ने कहा-''पापा साथ चलें तो मैं स्कूल जाऊँगी नहीं तो नहीं।''

पापा को ऑफिस जाना था, लेकिन बच्ची की जिद्द पूरी करने के लिए पापाजी स्कूल तक गए और बच्ची की जिद्द पूरी की।

दूसरे दिन फिर वही बात कि मुझे स्कूल नहीं जाना। जैसे-तैसे मनाकर बच्ची के साथ माँ स्कूल छोड़ने गई तो वह स्कूल जाने को तैयार हुई।

तीसरे दिन फिर बच्ची के स्कूल न जाने की जिद्द की वजह से गाड़ी अटक गई। क्यों? बात यह कि अभी स्कूल का रस नहीं लगा। जब रस लग गया तो कहती है-पढूँगी, नहीं तो आगे कैसे बढूँगी? स्कूल जाते और पढ़ते-पढ़ते ऐसा रस लगा कि वह एक दिन की छुट्टी लेने को तैयार नहीं। घर में भाई की सगाई का दस्तूर है, पिताजी कहते हैं आज की तो छुट्टी ले ले, पर वह छुट्टी नहीं लेती है और कहती है-''पिताजी! आज तो स्कूल में टीचर महत्त्वपूर्ण प्रश्न कराएगी, मैं उन्हें नहीं छोड़ सकती।''

देखिए, जो बच्ची कहने-मनाने से स्कूल जाने को तैयार बड़ी मुश्किल से होती, वह आज की छुट्टी लेने को तैयार नहीं। क्यों? उसे पढ़ाई का रस लग गया। कल तक जो स्कूल जाने में आनाकानी करती, आज एक दिन की छुट्टी लेने को तैयार नहीं। घर में भाई के सगाई का दस्तूर है तो भी बच्ची का जवाब है-सगाई में मेरा क्या काम? यह काम तो मेरे बिना भी हो सकता है।

न जाने कितने दृष्टान्त हैं। बननी चाहिए भावना। जब तक भावना नहीं बनी तो पाँच रुपये देने भारी लगते हैं और जब भावना जग जाती है तो तिजोरी खोलते देर

नहीं लगती। महाराणा प्रताप को जंगल में घास की रोटी खाते उदास देखा तो भामाशाह ने कह दिया-''मेरे पास जितनी भी सम्पत्ति है, वह आप रखिये।'' भामाशाह हो या जगडूशाह या फिर खेमादे का ही उदाहरण क्यों न हो, ऐसे अनेक उदाहरण आपने सुने होंगे, कभी देखने में भी आए होंगे।

दान किस तरह दिया जाता है? कल तक जो नाम के लिए दे रहा था, अपनी प्रसिद्धि के लिए दे रहा था, आज देते वक्त किसी को पता नहीं। क्यों? उसकी सोच में वैसी भावना भर गई, देने में रस आ गया। उसके मन में विचार आया कि यह शरीर रहने वाला नहीं है। शरीर नश्वर है, जाने वाला है तो क्यों नहीं इस शरीर से जितना बन सके, उतना दान देकर जीवन सफल कर लूँ।

दान के क्षेत्र में ऐसे उदाहरण हैं तो तप के क्षेत्र में भी उदाहरणों की कमी नहीं है। छोटे-छोटे बच्चे, उम्र किसी की सोलह साल, किसी की सत्रह साल उन्हें रस आ गया तो एकान्तर तप कर गए। क्यों? उन्हें रस आ गया। सोच बनी कि चातुर्मास का मौका है क्यों न तपाराधन करके अवसर का लाभ उठाया जाय। करने वालों ने मासखमण किए हैं, पचास, इकसठ, इकहत्तर तक की तपश्चर्याएँ चल रही हैं। मैं नाम लेकर कहूँ-सुमेरसिंह जी बोथरा की मातुश्री लाडकँवरजी बोथरा इक्कीस-इक्कीस साल एकान्तर तप करते-करते इकसठ की तपस्या कर गई। इचरजकँवरजी लुणावत ने रस आ जाने पर 165 दिन की तपस्या कर ली।

आचार्य भगवन्त पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमल जी महाराज के अजमेर चातुर्मास में एक बहिन ने वन्दन करना चालू किया, आचार्य भगवन्त ने देखा तो कहा-बहिन! तुम्हारे तपस्या है, हो गई वन्दना, पर वन्दना में रस आया तो तपस्या में एक सौ आठ बार वन्दना कर गई। पारणे में सात द्रव्य लगाए जा रहे हैं उसमें भी एक तो पानी है, एक मञ्जन।

मैं आँखों देखी बात कहूँ-सन्तों के साथ रहने वाले आदमी को चार-पाँच तरह की मिठाइयाँ परोसती हैं, खुद भोजन में पाँच द्रव्यों की मर्यादा रखती हैं। एक बहिन की भावना-मुझे अस्पताल के हवाले मत करना, भगवान के हवाले करना। मुझे होश न हो तो भी संथारा करा देना। यह भावना कब बनती है?

धूलिया में एक बहिन से पूछा-''कितने वर्षों से एकान्तर चल रहा है?'' वह बोली-बाबजी! 35 साल से एकान्तर तप चल रहा है। संयोगवश उस बहिन का पति भी दर्शनार्थ आया हुआ था। पूछा-''भाई साहब! आप क्या सहयोग करते हैं?'' भाई ने कहा-''बाबजी! मैं 35 साल से ब्रह्मचर्य का पालन कर रहा हूँ। मेरे से तप तो नहीं बनता, मैं ब्रह्मचर्य-पालन करके ही इसके तप में सहयोग कर रहा हूँ।'' उस समय भाई की उम्र थी करीब 65 साल। वह जब 30-32 साल का रहा होगा तब से ब्रह्मचर्य का पालन कर रहा है।

तप में सहयोग करने वाले हैं तो कई ऐसे भी हैं जो तप में भी घर के काम को करने की बात करते हैं। रस जगा तो तप हो जाता है और रस नहीं तो एक टाइम भी भारी लगता है।

धर्म उपदेश से नहीं होता। उपदेश से तो हेय-ज्ञेय-उपादेय की जानकारी होती है। क्या छोड़ने योग्य है, क्या ग्रहण करने योग्य, इसकी जानकारी भी उपदेश से होती है। सुनने पर विश्वास जमता है और जब विश्वास जम जाता है तो बड़े से बड़ा तप भारी नहीं लगता।

आना चाहिए-रस! रस आ जाता है तो सत्रह महीने के बच्चे को छोड़कर दीक्षा लेने वाली बहिन भी है। इस परम्परा के मूलपुरुष पूज्य श्री कुशलचन्द्र जी महाराज ने सत्रह महीने के बच्चे को छोड़कर दीक्षा ले ली। घर में सब कुछ है, किसी चीज की कमी नहीं, पर पत्नी का स्वर्गवास हो गया तो विरक्ति आ गई। माँ से दीक्षा की आज्ञा माँगी, सहज आज्ञा नहीं मिली तो कुएँ की पाल पर जाकर लेट गए और कहा-''जब तक दीक्षा की आज्ञा नहीं तब तक यहाँ से उठूँगा नहीं।'' होनी चाहिए दृढ़ भावना। जगना चाहिए रस। धर्मनिष्ठ

श्राविका सुन्दरबाई की भावना बन गई तो 93 साल की उम्र में प्रतिदिन तेरह-तेरह सामायिक करके सावद्य-योग से विरति रखती है। 95 वर्ष की आयु में घेवरचन्द जी नाहर रोज़ाना पन्द्रह सामायिक करते हैं। यहाँ कई हैं जिन्हें दो सामायिक करने को कहा जाय तो जवाब आता है थोड़ी कमर सीधी करने के लिए कुछ विश्राम करके फिर सामायिक हो सकती है। अभी एक सामायिक भी इसलिए हो रही है कि महाराज को विनति करके बुलाया है, एक सामायिक भी नहीं करेंगे तो ठीक नहीं लगेगा।

रस लगने पर कहने की जरूरत नहीं पड़ती। महाराज हैं तो क्या, नहीं हैं तो क्या। उनकी तो सामायिक-साधना चलती रहती है। नासिक में रहने वाले घेवरचन्द जी बाघमार को नौ साल से अधिक समय हो गया, रोज एकलठाणा करते हैं। एकलठाणा में एक टाइम खाना, एक टाइम पीना। यहाँ हम प्रेरणा करते हैं, कहते हैं तो भी पर्व के दिनों में नौरंगी-ग्यारह रंगी में नाम लिखवाने में मनुहार करनी पड़ती है। एक तो मनुहार करने पर भी नाम लिखवाए, न भी लिखवाए, तो एक को डॉक्टर मना करता है कि तू तप मत कर। तप का रस लग गया तो मरने की परवाह नहीं। ऐसे लोग भावना से तप कर सकते हैं।

गदग के भाई गुलाबचन्द जी बाघमार उम्र करीब 95 साल, फिर भी रोज पन्द्रह सामायिक करते थे। यहाँ इस सभा में शायद ही कोई 90 साल का है, पर सामायिक, प्रतिक्रमण, संवर का कहना पड़ता है।

जगनी चाहिए भावना। होनी चाहिए श्रद्धा। रस आ जाने पर घर के बजाय स्थानक छोड़ने का मन नहीं होता। आज चाहे छोटे हों या बड़े, गरीब हों या अमीर सब मनुहार के बिना धर्म-करणी नहीं करते। आप जानते हैं-एक क्षण भी अमूल्य होता है। अन्तर्मुहूर्त में अनन्त-अनन्त कर्म काटे जा सकते हैं। रस आने पर जिस किसी शुभ प्रवृत्ति में भावना बन जाती है तो तप और स्वाध्याय तो क्या कोई भी प्रवृत्ति भारी नहीं लगती। उत्कृष्ट रसायन आ जाय तो तीर्थंकर गोत्र का बन्ध हो सकता है।

आप श्रीकृष्ण वासुदेव और श्रेणिक के उदाहरण सुन चुके हैं। उन्होंने तीर्थंकर गोत्र का बन्ध कर लिया। वह बन्ध कैसे हुआ? मैं अभी इतना ही कहकर समाप्त करूँ कि आज आपको जितनी अनुकूलता है, शायद वैसी अनुकूलता रहे या नहीं, कहा नहीं जा सकता। कल पता नहीं किसे कौनसी बीमारी घेर ले। क्षण भर का प्रमाद किए बिना आप धर्म-साधना में लग जायें तो श्रद्धा जगने पर पार निश्चित है।

भगवान का यह शासन 21वीं सदी के अन्त तक चलेगा। शासन के अन्त तक एक साधु, एक साध्वी, एक श्रावक और एक श्राविका मोक्ष जाने वाले होंगे। आपको पुण्य से अच्छा अवसर मिला है, अत: आप भावना जगाइये, रस पैदा कीजिए और इस शरीर से जितना हो सके व्रत-प्रत्याख्यान कर जीवन को सफल करें, इसी मंगल भावना के साथ।

(शेषांश पृष्ठ 10 का)

क्रोध विनाशक का कार्य करता है। क्रोध में आकर व्यक्ति कामपूर्ति के संसाधनों का भी विनाश कर बैठता है। अत: यह समीचीन ही कहा गया है कि क्रोध के कारण व्यक्ति धर्म, अर्थ एवं काम को भी जलाता है। अर्थात् इनका विनाशक या बाधक बनता है।

क्रोध के कारण व्यक्ति तीव्र वैर उत्पन्न कर लेता है। जिसके प्रति क्रोध में अपशब्द कहे जाते हैं या हिंसक व्यवहार किया जाता है उसके मन में क्रोधी के प्रति वैर उत्पन्न हो जाता है। यह वैर सहज शान्त नहीं हो पाता है। इसलिए क्रोधोत्पत्ति के क्षण में ही सजग होकर क्रोध रहित होना आवश्यक है।

क्रोध की अन्तिम हानि बतायी गई कि क्रोध में आकर व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हो जाए तो नीच गति में जाता है। निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि साधना में तो क्रोध हानिकारक है ही, गृहस्थ जीवन को जीने में एवं परलोक में भी यह हानि पहुँचाता है, अत: क्रोध सर्वथा परिवर्जनीय है।

10 मार्च 2021
जिनवाणी 16
ISSN 2249-2011

काव्य

आलोचना पाठ

मधुर व्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा.

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा सवाईमाधोपुर चातुर्मास 2020 में फरमाये गए इस आलोचना पाठ का संकलन श्राविकारत्न श्रीमती रजनीजी गोटेवाला ने किया है। **-सम्पादक**

हे वीतराग प्रभु तुम्हें, वन्दन करूँ दिन रात मैं,
अन्तर की पीड़ा से व्यथित, होकर कहूँ निज बात मैं।
हर जन्म में अज्ञान से, मिथ्यात्व का जीवन जिया,
भव-भव भटक कर अब प्रभो! मैंने तेरा आश्रय लिया।।

मेरे शुभाशुभ कर्म का, भव-भव चला जो सिलसिला,
तुम जानते सब कुछ प्रभो!, इक-इक गिनाऊँ क्या भला।
जन्मों जनम, मैंने किया, सेवन अट्ठारह पाप का,
अब आत्मशुद्धि मैं करूँ, शरणा लिया है आपका।।

(1) प्राणातिपात

चाहते सब जीव सुख, ये बात ना समझी कभी,
करुणा नहीं दिल में जगी, ये जीव हैं अपने सभी।
भोग-सुख की कामना में, कष्ट औरों को दिया,
निष्ठुर हृदय मेरा रहा, नहीं मैत्री का जीवन जिया।।

त्रस और स्थावर जीव की, द्वेषादि वैर-विरोध से,
हिंसा करी बन्धन में डाला, यतना दी क्रोध से।
अपना ही सुख सोचा सदा, आई नहीं घट में दया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(2) मृषावाद

सत्य ही भगवान है, इस पर नहीं चिन्तन किया,
बिसरा तेरी वाणी प्रभो!, मिथ्या जगत् का रस पीया।
सत्-असत् का भेद भी, जाना नहीं परमात्मा,
संसार को सच मानकर, मैंने भुलाई आत्मा।।

साँच को झूठा कहा और, झूठ को सच कह दिया,
धोखा दिया, तोड़ा भरोसा, कलंक भी झूठा दिया।
अपना बढ़ाने मान पद, उपदेश भी मिथ्या दिया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(3) अदत्तादान

लूट से अन्याय से, जितनी बढ़ी धन सम्पदा,
पर भव चले ना साथ में, इस भव बनी दुःख आपदा।
घात कर विश्वास का, लूटा पराये माल को,
हे नाथ! अब कैसे मैं काटूँ, पाप के इस जाल को।।

हमने करी प्रभु चोरियाँ, कई बार जग-व्यवहार में,
कम नाप में और तोल में, घपले किए व्यापार में।
स्वाध्याय जप-तप-त्याग, आराधन बिना आज्ञा किया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(4) मैथुन

तृप्ति नहीं है भोग में, इस बात का नहीं ज्ञान था,
परमार्थ की सोची नहीं, प्रत्यक्ष सुख पर ध्यान था।
बाहर दिखाई सत्यता, भीतर भरी दुर्वासना,
संयम कभी बरता नहीं, कैसे सफल हो साधना।।

पर नारी को चाहा प्रभो!, नहीं याद मर्यादा रही,
मन के विकार विलास में आसक्ति ही बढ़ती रही।
नाते कराये अन्य के, नहीं शीलव्रत खुद ने लिया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(5) परिग्रह

आत्म-वैभव को भुला, आरम्भ-परिग्रह में फँसा,
अन्तर का परिग्रह भी बढ़ा, हे नाथ! कैसी दुर्दशा।
धिक्कार मुझको है प्रभो!, मैं घोर कर्मों में रचा,
कैसे कहूँ प्रभो! आपसे, आकर के मुझको तू बचा।।

धन-धान्य वैभव जर जमीं, परिग्रह में हम बढ़ते रहे,
इस धूलि-सम धन के लिए, अपनों से हम लड़ते रहे।
आकाश सम बढ़ती हुई, इच्छा को न सीमित किया,

हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(6) क्रोध

सहना कभी सीखा नहीं, झगड़ा किया हर बात में,
ना मोल समझा प्रेम का, जीवन गया उत्पात में।
पर भव की परवाह ना करी, बस वैर की गाँठें रची,
बदले की मन में भावना, बोलो अधमता क्या बची।।

क्रोध की अग्नि में जलकर, क्रूरता मुझसे हुई,
चुभते वचन बोले प्रभो!, माधुर्यता मन से गई।
मन विरुद्ध जब भी हुआ, तन-मन का संयम खो गया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(7) मान

यश कीर्ति पाकर के प्रभो!, भूला स्वयं का हित सभी,
सत्कार में, सम्मान में, नहीं याद आए तुम कभी।
नहीं आत्म-दर्शन है कहीं, कोरा अहं का पुञ्ज है,
भव-भव मिलेगी ठोकरें, हे नाथ! अब यह रञ्ज है।।

शुभ कर्म से धन, ज्ञान, वैभव, पद प्रतिष्ठा जो मिले,
हर पल उसी का दम्भ भरके, अकड़ के तनके चले।
अभिमान गज पर बैठकर, अपमान औरों का किया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(8) माया

बढ़ती रही मन में कुटिलता, सरलता आई नहीं,
मतलब को अपना साधने, षड्यन्त्र भी लगता सही।
करके छलावा खोया जीवन, मैंने झूठी शान में,
प्रज्ञा मेरी कैसे जगे? प्रीति नहीं सद्ज्ञान में।।

ऊपर बहाया प्रेम निर्झर, छल-कपट अन्दर घना,
आचार हो व्यवहार हो, जप-तप हो चाहे साधना।
अच्छा दिखाने स्वयं को, पाखण्ड का जीवन जिया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(9) लोभ

इच्छा जगी धन पाने की, मन को मलिन मैंने किया,
सञ्चय में सुख माना सदा, नहीं दान दीनों को दिया।
लोभ और लालच के वश, पाई नहीं शान्ति कभी,
व्रत का नहीं पालन किया, आराधना छूटी सभी।।

तृष्णा मिटे, सन्तोष जगे, दो प्रभु ऐसी कला,
परमार्थ को मैंने भुलाया, लोभ ने मुझको छला।
होता रहा है लाभ जितना, लोभ उतना ही किया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(10) राग

इक अकेला आत्मा, सङ्गी या साथी है नहीं,
यह देह भी अपनी नहीं, धन सम्पदा कैसे रही।
राग तज चिन्तन किया तो, ज्ञान गौतम पा गये,
पर मोह में हम अन्ध बन, इस सीख को बिसरा गये।।

नश्वर पदार्थों में प्रभो!, हमने बढ़ाया राग को,
आसक्त बन तन-धन में मन, समझा नहीं बैराग को।
प्रीत प्रभु से ना हुई, बस राग दुनिया से किया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(11) द्वेष

कुछ भी बुरा मुझको कहा, अथवा किया नुकसान जो,
मेरा या परिजन का किया, कोई कभी अपमान जो।
मन में हुई दुर्भावना और द्वेष से बाँधे करम,
प्रतिशोध में मैंने भुलाया, हे प्रभो! समता धरम।।

मन का चाहा न हुआ तो, द्वेष की बुद्धि जगी,
अनबन हुई बोले नहीं, नफ़रत-सी फिर बढ़ने लगी।
जो नहीं मन को सुहाया, उनको अपमानित किया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(12) कलह

मैंने कई को दुःख दिया, इस क्लेश के परिवेश में,
मन में समाधि ना रही, सौहार्द खोया द्वेष में।
रहकर विभावों में सदा, बन्धन किये हैं घोरतम,
हे नाथ! अब कैसे बचूँ, मैंने गँवाया ये जनम।।

मेरे अहं पर जब लगी, हे नाथ! कोई चोट तब,
निज दर्प से मैं क्रुद्ध हो, गाली उन्हें दी बेअदब।
बात छोटी या बड़ी, मैंने कलह सबसे किया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(13) अभ्याख्यान

श्रेष्ठता अपनी दिखाने, अन्य को लाञ्छित किया,
औरों को बढ़ता देखकर, स्वीकार मैंने ना किया।
पाप अभ्याख्यान गहरा, कहते हैं आगम वचन,
'जैसा करे वैसा भरे', सुनकर भी ना सम्भला ये मन।।

आक्षेप झूठा औरों पे, मैंने दिया दुर्भाव से,
बिन समझ-सोच लगा दिये हैं, कलंक ईर्ष्या भाव से।
कर्म-फल को जानकर भी, क्यों नहीं डरता जिया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(14) पैशुन्य

खुद को हितैषी सिद्ध करने, कान सबके भर दिए,
और चाल भी दोहरी चली, अपनी प्रतिष्ठा के लिए।
खा के चुगली हे प्रभो!, मुझमें कुटिलता भर गई,
अपने ही बन्धु परिजनों में, दूरियाँ-सी बढ़ गईं।।

फूट डाली प्रेम में, और की कराई चुगलियाँ,
इसकी सुनी, उसको कही, हाँ खूब रस उसमें लिया।
पाप के धागों से मैंने, कर्मों का बन्धन किया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(15) पर परिवाद

निंदा करी पर की सदा, मैंने स्वयं की की नहीं,
दुर्भाव में जीवन जिया, सद्गुण की धारा ना बही।
ऊँचा दिखाने स्वयं को, औरों का गुण गोपन किया,
पर दोष ही देखे कहे, दूषित हुआ मेरा जिया।।

निंदा बुराई में सदा, खोते रहे जीवन के पल,
फँसते रहे इस पाप मल में, पर नहीं पाए सम्भल।
आत्म-हित सोचा नहीं, परिवाद में जीवन जिया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(16) रति-अरति

राग से आसक्त बन, वैराग्य ना आया जरा,
रति-अरति पाप के, परिणाम से मन ना डरा।
अच्छे नहीं हैं भाव दोनों, तुम रहो इन से परे,
शिक्षा प्रभो! पाकर तेरी, मैंने न कोई पग भरे।।

विषय-सुख में मग्न हो, डूबे रहे संसार में,
व्रत-नियम-प्रत्याख्यान ना आए कभी आचार में।
क्षणमात्र का सुख पाने में, चिर आत्म-सुख बिसरा दिया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(17) माया मृषावाद

दक्षता से झूठ बोला, सभ्य बन नाटक रचा,
माया मृषा के पाप से फिर, दोष ना कोई बचा।
कूट लेखों से सदा, धोखा अनेकों को दिया,
आसक्त हो संसार में, क्या-क्या नहीं मैंने किया।।

छल-कपट मन में रखा, मीठे वचन बाहर कहे,
दुनिया में खुद को यूँ दिखाया, प्रेम के झरने बहे।
गोपन किया निज दोष का, नहीं सत्य का पालन किया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

(18) मिथ्यादर्शन शल्य

सुदेव सुगुरु धर्म में, मैंने न की श्रद्धा कभी,
अरिहंत प्ररूपित तत्त्व को, मैंने नहीं समझा कभी।
गुरु ने सदा चेताया फिर भी, मैंने की अवहेलना,
पछता रहा है मन प्रभो!, बिसरा के तेरी देशना।।

'गौतम' से कहते हैं प्रभु, मिथ्यात्व पाप का मूल है,
जाना न स्व-पर भेद मैंने, हर जनम की भूल है।
अज्ञान की ऐसी दशा, समकित का अमृत न पीया,
हे नाथ! अब तो कर दो निष्फल, पाप जो मैंने किया।।

उपसंहार

अन्तर से यह आलोचना, करके अट्ठारह पाप की,
आत्मा मेरी निर्मल बने, प्रभु! हो कृपा यह आपकी।
गौतम सी हो स्वीकार्यता, निज भूल के प्रतिकार में,
चर्या रहे निर्दोष अब, जीवन के हर व्यवहार में।

-बजरिया, सवाईमाधोपुर (राज.)

भवसागर जिससे तरा जाये, जन्म-मरण का बन्धन काट करके आत्मा संसार से पार हो जाये, उस साधना को तीर्थ कहते हैं।

-आचार्यश्री हस्ती

10 मार्च 2021
जिनवाणी 19
ISSN 2249-2011

काव्य

पुण्य-प्रकाश

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. द्वारा प्रस्तुत रचना का 13 जून, 2020 को महासती श्री दिव्यप्रभाजी म.सा. द्वारा महावीर नगर जयपुर में दिव्यवाणी में गान किया गया जिसका संकलन श्रीमती सुनीताजी डागा ने किया है। पार्श्वनाथ जयन्ती, सन् 2020 में रचित यह काव्य हरिगीतिका छन्द में है तथा इसमें पुण्य की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है।

-सम्पादक

पुरिसादानीय पार्श्व प्रभु

सिद्धि मिली जिन जीव को, करनी है उनकी अर्चना।
सिद्धि पथ प्रकटित करे, अरिहन्त प्रभु की देशना।।
आचार्य वाचक सन्त भी, सिद्धि की महिमा गाते हैं।
परमार्थ परिचय प्रकट कर, परमार्थ पद को पाते हैं।।1।।

जीव ही वेदन करे, नवतत्त्व में वो प्रधान है।
प्रतिपक्षी जीव अजीव है और सात तो पर्याय हैं।।
पावित्र्य भाव ही पुण्य है, अरु पाप नीचे पातता।
आस्रव से आता कर्म तो संवर से वह रुक जावता।।2।।

निर्जरा है पावनी, धुनती पुराने पाप को।
भव कोटि सञ्चित कर्म को, हरती पुराने पाप को।।
बन्ध जीव अजीव का, प्रारम्भ जाने कोई ना।
छुटकारा पूरा अजीव से, कहलाता मोक्ष है वो ही ना।।3।।

नव तत्त्व सम्यक् जानता, अरु हेय को छिटकावता।
पाप आस्रव बन्ध से, क्षण क्षण ही बचता जावता।।
पुण्य संवर निर्जरा, अरु मोक्ष हितकारी सदा।
ज्ञेय सारे तत्त्व हैं, ज्ञाता तो जीव ही है सदा।।4।।

तत्त्व अष्ट में भेद ना, जिन मार्ग को जो जानते।
सम्प्रदाय व मान्यता, बस पुण्य में टकरावते।।
हेय कहते कोई तो, अरु कोई तीनों मानते।
पुण्य की आदेयता, सर्वत्र ही स्वीकारते।।5।।

प्रेरणा गुरुदेव की, कुछ तत्त्व चिन्तन करना है।
आगम सुधा का पान कर , उत्सूत्र विष को हरना है।।
परमेष्ठी पंच नमस्कृति, सब पाप की हो प्रणाशना।
पाप नाशक पुण्य का, नवकार करता प्रकाशना।।6।।

काय वचन मन गुप्ति को, संवर समाधि मानते।
दुष्ट योग निवारना, दीक्षा सुखद अपनावते।।
भक्ति तीनों योग से, प्रणिधान सु हितकारी है।
शुभ योग संवर पाप का, उपयोग शुद्धिबारी है।।7।।

पुण्य प्रकाश

देव गुरु अरु धर्म की, अनुपम कृपा आधार है।
पार्श्व प्रभु चिन्तामणि, दिन जन्म तत्त्व विचार है।।
हस्ती गुरु के इष्ट वो, साधे सभी के काज हैं।
पुरिसादानीय नाम से, विख्याति उनकी आज है।।1।।

गंगा नदी तट शोभती, वाराणसी शुभ चन्दना।
अश्वसेन नृपाल व, महारानी वामा नन्दना।।
च्यवन दसवें स्वर्ग से, जिननाम कर्म की अर्चना।
पुण्य अर्जित पूर्व का, सुरपति करे तस वन्दना।।2।।

वन्दना तीर्थेश की, आरोग्य बोधि लाभ हो।
कीर्तना है जिनेश की, उत्तम समाधि प्राप्त हो।।
दिव्य वाणी प्रभु की है, वह देशना यूँ कहती है।
पुण्य सातिशय बिना, श्रुत योग्यता नहीं रहती है।।3।।

पौष कृष्णा दशमी को, जन्मे थे जो भगवान हैं।
धरणेन्द्र व पद्मावती, सेवा में देव प्रधान हैं।।
पार्श्व भैरव यक्ष भी, महिमा से मण्डित करते हैं।
निर्विघ्न कार्य की पूर्णता, मंगल सु उत्तम वरते हैं।।4।।

जाने हुए जो दोष हैं, उनको नहीं जो त्यागता।
आतम गुणों को मानकर, उनको नहीं विकसावता।।
रागी वही द्वेषी वही, मिथ्यात्व रमता जावता।
तिर्यञ्च नारक दुर्गति, पीड़ा अनन्ती पावता।।5।।

मन के बिना संसार में, नहीं दोष को पहचानता।
संवर एवं निर्जरा धर्म को, असन्नी कैसे जानता?
अनाभोग मिथ्यादृष्टि तो, सबसे अधिक संसार में।
पुण्य बिन उस ज्ञान को, कैसे लहे संसार में।।6।।

सिद्ध जैसा जीव है, कर्मों के वश लाचार है।
क्षीर नीर में मिल पड़ा, खोई प्रभुता सार है।।
लोहे में अग्नि घुस पड़ी, पहचान अपनी गँवाई है।
कर्म सत्ता बलवती, जीवत्व पर मण्डराई है।।7।।

इक द्रव्य दूजे द्रव्य में, यदि कार्य कर सकता नहीं।
तब जीव सारे सिद्ध हैं, संसार बन सकता नहीं।।
अज्ञानी मिथ्यादृष्टि व, कहते कषायी जीव को।
बिन कर्म ऐसे नाम से, कैसे कहें भव जीव को।।8।।

इक द्रव्य दूजे द्रव्य में, बदले नहीं त्रिकाल में।
प्रतिपल सहायक बनते हैं, उपकारी परिणति काल में।।
पुद्गल प्रभावी जीव ही, चहुँ गति में गोता खाता है।
गति जाति काया प्राण भी, पुद्गल प्रभावी पाता है।।9।।

पुण्य पाप भी जीव के, पुद्गल प्रभाव दिखाते हैं।
तत्त्व सातों देख लो, संयोग पुष्टि कराते हैं।।
जीव के संयोग बिन, संसार रच सकता नहीं।
संयोगी पुद्गल के बिना तो, जीव रुल सकता नहीं।।10।।

संसारी जीव के भेद को, बहुविध दिखाया जाता है।
मार्गणाएँ अनेक हैं, उनमें बताया जाता है।।
आशाम्बरी मत में जिसे, कहते हैं नित्य निगोद से।
श्वेताम्बरी स्वीकारते, उसको ही अव्यवहार से।।11।।

सूक्ष्म अपर्याप्त या, यदि उदय साधारण रहे।
आयु मुहूर्त्त एक की, पावे नहीं आगम कहे।।
पैंसठ हजार व पाँच सौ, छत्तीस भव तक भी मरे।
पापकारी दुर्गति, दुर्मति से छुट्टी किम वरे?।12।।

बन्ध जीव अजीव का, आस्रव व पाप भी है वहाँ।
पुण्य यत् किञ्चित् रहा, छह तत्त्व मिलते हैं वहाँ।।
पर्याप्त होता है कभी, बन जाता बादर भी वहाँ।
नहीं छूटता है निगोद से बढ़ता नहीं आगे वहाँ।।13।।

मेघ कितने भी सघन, निशितम दिवस करते नहीं।
दोष हो उत्कृष्ट भी, चैतन्य गुण हरते नहीं।।
सत्ता से सिद्ध स्वरूपी है, व्यवहार में आया नहीं।
मरण धर्मा है नहीं, पर मरण सर्वाधिक वहीं।।14।।

सिद्धान्त है जिनराज का, सबसे निराली बात है।
उत्पाद व्यय अरु ध्रौव्य, तो प्रति द्रव्य रहते साथ हैं।।
पर्याय जब तक शुद्ध की, वरता नहीं है आत्मा।
द्रव्य शुद्धि भी नहीं योगी कषायी आत्मा।।15।।

पर्याय में संसार है, तब जीव संसारी रहे।
कर्म का बहुजोर है, लघुवय मरण जारी रहे।।
पुद्गल मिलन पर्याय ही, आस्रव प्रभु वाणी कहे।
अशुभता है कषाय से वृद्धि नहीं आगे लहे।।16।।

मुक्ति वरता जीव इक, अवसर अनुपम आता है।
सहता समता भाव से, वह पुण्य को विक्साता है।।
छह तत्त्व में बस पुण्य ही, उपकारी एवं हितकारी है।
शुभ योग काय का पुण्य ही, एकेन्द्री में सुखकारी है।।17।।

छुट्टी मिली है निगोद से, व्यवहार राशि आया है।
मिनिट अड़तालीस अधिक, आयु भी तब ही पाया है।।
प्रत्येक नाम को पुण्य में, प्रभु वीर ने फरमाया है।
मुक्ति गमन की योग्यता, शुभ योग से ही पाया है।।18।।

पुण्य से प्रत्येक त्रस, पञ्चेन्द्री मन को जब लहे।
पुण्य मन वचनादि भी, शुभ योग से उसमें कहे।।
उपयोग अच्छा जो करे, संयोग की अनुकूलता।
भोग तो बस पाप है, पैदा करें प्रतिकूलता।।19।।

पुण्य दोषी है नहीं, अरे दोष सारे पाप हैं।
मिथ्यात्व और कषाय को, प्रभु ने बताए पाप हैं।।
शुभ आस्रवों का कार्य तो, करता कभी ना कषाय है।
राग-द्वेष में न्यूनता, शुभ योग पुण्य की आय है।।20।।

मिथ्या ही भ्रमणा जो करे, उत्सूत्र की है प्ररूपणा।
पुण्य तजने का कहे, जिनमार्ग की नहीं अर्पणा।।
निर्जरा हो पाप की, अनुभाग पुण्य बढ़ाती है।
सम्यक्त्व संयम श्रेणियाँ, शुभ योग में प्रकटाती हैं।।21।।

क्रोध मान को द्वेष में, अरु माया लोभ को राग में।
चारित्र मोह की चार को, छह से दिखाया पाप में।।
शुभ होते हैं ना ये कभी, आगम वचन परमाण है।
कर्मग्रन्थ का है कथन, सिद्धान्त का व्याख्यान है।।22।।

पुण्य को भी पाप कह, आगम वचन झुठलाते हैं।
मिथ्यात्व संग कषाय में, उस पुण्य को दर्शाते हैं।।
पुण्य तो इनकी कमी से, योग शुभ से पावता।
मृदुता क्षमा ऋजुता के संग, सन्तोष से विकसावता।।23।।

तज क्रोध शान्ति धार के, साता का बन्ध करावता।
मद त्यागने से गोत्र को, वो उच्च का ही बाँधता।।
माया कपट को छोड़ के, शुभ नाम को विकसावता।
सन्तोष सुख की खान से, आयु सुखद निपजावता।।24।।

क्रोधादि चार कषाय में, होती कमी जब भाव से।
लेश्या विशुद्धि होती है, शुभता बढ़े परिणाम से।।
काय पुण्य विशिष्टता, उस जीव को वर्धित करे।
प्रत्येक बादर और त्रस, पञ्चेन्द्री मन हर्षित करे।।25।।

योग शुभ सब जीव के, निज भाव प्रकटित होते हैं।
परिवर्तना हो कषाय से, संक्लेश पाप को भरते हैं।।
पुण्य आतम के लिए, बाधक कभी बनता नहीं।
बाधाएँ सारी पाप हैं, जिनवर की वाणी है सही।।26।।

संक्लेश की धारा कभी, पूरी नहीं है मुहूर्त्त भी।
निजभाव योग की शुभ्रता, परिवर्तना करते सभी।।
पुण्य का अनुभाग तो, शुभ योग से ही बाँधता।
पापकारी योग से, अनुभाग उसका घातता।।27।।

गणना नहीं इस पुण्य की, सामान्य सा हो पाता है।
धर्म मुक्ति-मार्ग में, उपयोगी नहीं बन पाता है।।
पवित्र करता आत्म को, यह नाम गुण निष्पन्न है।
हेय तो है मलिनता, वह पाप से निष्पन्न है।।28।।

बादर बनें जब सूक्ष्म से, प्रत्येक साधारण से हो।
त्रसकाय थावर से बढ़े, पञ्चेन्द्रियाँ भी पूरी हों।।
सन्नी की सुपर्याय को पावे असन्नी पुण्य से।
धर्म संवर निर्जरा, अधिकारी हो सुपुण्य से।।29।।

शुभ योग की वो स्पर्शना जब छूटती है कषाय से।
पाप वर्धन होता है तब, राग-द्वेष-कषाय से।।
शुभ योग का क्या दोष है वह पाप वर्धाता नहीं।
शुभ योग तो मिथ्यात्व का कालुष्य भी लाता नहीं।।30।।

मुक्ति-पथ संवर सहित, तप से ही साधित होता है।
राग-द्वेष की गूढ़ घन, ग्रन्थि से बाधित होता है।।
भेदन नहीं हो ग्रन्थि का, तब कौन सहकारी बने।
शुभ योग आत्म-विचारणा, लब्धि सुखदकारी बने।।31।।

संग्रह परिग्रह भेद को, आगम विवेचित करता है।
कर्म वपु सामग्री से, त्रय भेद इनके करता है।।
पूर्व पुण्य-प्रभाव से, संग्रह समुचित होता है।
मम भाव संग्रह पर रखे, तो पाप पोषित होता है।।32।।

संग्रह को तज साधु बने, सामग्री यतना के लिए।
मूर्च्छा नहीं उपयोग रखे, जीवों के रक्षण के लिए।।
तीर्थेश भी पुण्यवानी से, राजा के घर ही जन्मते हैं।
नाम गोत्र की उच्चता, साता अनुपम वरते हैं।।33।।

नाम प्रभु का लेके जो, वाणी को उल्टी करते हैं।
पुण्य पाप में भेद ना, विपरीतता को वरते हैं।।
पाप का प्रतिपक्षी है, शुभ योग का परिणाम है।
कैवल्य प्रकटेगा तभी, जब अशुभ का नहीं नाम है।।34।।

गुणश्रेणियाँ ग्यारह कही, शुभ योग की अनिवार्यता।
अन्तिम अयोगी केवली, शुभ योग ही पहुँचावता।।
बढ़ती असंख्याता गुणी, क्षण-क्षण वहाँ पर निर्जरा।
शुद्धि अनन्ती वर्धती परिणाम आतम का बड़ा।।35।।

पार्श्व प्रभु तिथि जन्म की, उनका भी जीवन देखना।
रुल रहा था अनादि से, कलुषित कषाय की वेदना।।
शुभ योग समुचित सातिशय, नहीं पुण्य प्रकटित हो सका।
समकित का गुण कैसे लहे, दुष्पाप मन्द ना हो सका।।36।।

एक आतम भाव ही, बहुविध से देखा जाता है।
योग शुभ प्रकटाता है, लेश्या-विशुद्धि कराता है।।
परिणाम शुभ है देन तस, निर्मलता अध्यवसाय में।
उपयोग शुद्धि होती है अरु, मन्दता हो कषाय में।।37।।

आत्मा तो ज्ञेय है, बस ध्येय अरु श्रद्धेय है।
पुद्गल सही उपयोग से, उपयोग वरता श्रेय है।।
मरुभूति-भव सार्थक हुआ, इस तत्त्व की पहचान से।
संसार भी परिमित हुआ, उस भेद के विज्ञान से।।38।।

द्रव्य निजगुण परिणति, पर द्रव्य में सहकारी है।
बदले नहीं पर द्रव्य में पर परिणति उपकारी है।।
जीव-पुद्गल का मिलन, संसार नाम धराता है।
पुद्गल पराया दीखता है, सम्यक्त्व गुण प्रकटाता है।।39।।

पाप आस्रव बन्ध में, संयोग की है स्पष्टता।
रूपी अजीवी तत्त्व में, जड़ जीव द्रव्य की लिप्तता।।
पुण्य रूपी अजीव है, फिर भी वो इन से भिन्न है।
पाप आस्रव बन्ध को, कर देता ये तो छिन्न है।।40।।

काँटा जाति एक है, पर कार्य दिखती भिन्नता।
चुभ पीड़ा देता पाँव को, गति में करे अवरुद्धता।।
हाथ का काँटा निकाले, चुभ रहे उस काँटे को।
हेय पहला होता है और श्रेय दूसरे काँटे को।।41।।

पुण्य बढ़ता ही गया, मरुभूति पाई दिव्यता।
ग्रन्थि-भेदन जब हुआ, सुनिर्जरा उपलब्धता।।
शुद्धि हुई शुभ योग से, सम्यक्त्व गुण प्रकटित हुआ।
आत्मा परमात्मा, सद्ज्ञान ये विकसित हुआ।।42।।

श्रावक का व्रत भी ले लिया, आराधना शुभ भाव से।
सार्थक समय समुचित हुआ, श्रुतवाणी के स्वाध्याय से।।
पौषध सामायिक साधना, घर पर अधिक नहीं आवता।
भाई बड़ा कलुषित हृदय, मरुभूति-संगिनी चावता।।43।।

कमठ का परनारी संग, भाभी से मरु ने जब सुना।
धक्का लगा इतना अधिक, राजा शिकायत पथ चुना।।
परिणाम बिगड़े भाई पर, अवरोध आया ज्ञान में।
शुभ योग की विपरीतता, रौद्र-परिणति ध्यान में।।44।।

नर-जन्म पाया पुण्य से, संवर भी अनुपम मिल गया।
भाई के देश निकाले से, अन्तर्हृदय भी हिल गया।।
नरपति ने रोका था उसे, मरुभूति रुक पाया नहीं।
पत्थर के तीव्र प्रहार से परिणाम शुभ खोया वहीं।।45।।

काल की आदि नहीं, अस्तित्व माना अजीव में।
रहता नहीं जो सुख सदा, रमता रहा था अजीव में।।
मृत्यु का दुःख सबसे अधिक, आसक्ति वश ही पाता है।
निज भान को ठुकराता है, जड़ जकड़ से अकड़ाता है।।46।।

वपु लघु अरु योग इक, संज्ञा कषाय तो सारे थे।
लेश्या अशुभ थी निगोद में आस्रव उसी के सहारे थे।।
मिथ्यात्वी अज्ञानी रहा, संयोग दुःखकारी बड़ा।
सिद्धों के गुण सत्ता में थे, पर आवरण मोटा पड़ा।।47।।

इक द्रव्य दूजे द्रव्य को, इस भाँति भावित करता है।
चैतन्य गुण दिखता नहीं, पुद्गल ही लीला करता है।।
द्रव्य चतुः प्रारम्भ के, निष्क्रिय कहे भगवान ने।
सक्रियता दो द्रव्य में संसार दुःख निर्माण में।।48।।

अप्पा कत्ता विकत्ता से, प्रभु ने यही फरमाया है।
कर्त्ता भोक्ता जीव को, संसार में बतलाया है।।
सिद्ध व अरिहन्त पद, द्वय भेद केवलज्ञानी के।
लक्षण स्वरूप में भेद है, उपयोग प्रभु की वाणी में।।49।।

उपयोग लक्षण जीव का, सबमें सदा ही रहता है।
वर्ण गन्ध व रस फरस, पुद्गल के संग को कहता है।।
वपु सहित संसारी में, कर्मों की सत्ता होती है।
अरस अरूपी अफरस अगन्धता नहीं होती है।।50।।

गति सहायक द्रव्य को धर्मास्तिकाय पुकारते।
अस्तिकाय अधर्म की जड़ जीव को ठहरावते।।
अवगाहना आकाश का उपकार प्रभु बतलावते।
काल की सहकारिता वर्तन क्रिया दिखलावते।।51।।

इन द्रव्यों का विस्तार तो, सर्वज्ञ ही बस जानते।
नव तत्त्व व्याख्या अपूर्व तो, बस केवली समझावते।।
जो वीतरागी की बात को, जानकर नहीं मानते।
दो द्रव्य बीच में वज्र की दीवार भ्रम फैलावते।।52।।

सिद्ध की अवगाहना, इक हाथ अंगुल आठ से।
बत्तीस अंगुल तीन सौ, तैंतीस धनु परिमाण से।।
मध्य के बहु भेद हैं, सूत्रों में जिनको बताया है।
स्वभाव समता भाव में प्रभु केवली कहलाया है।।53।।

पुद्गल प्रभावित जीव की, अवगाहना लघु होती है।
अंगुल के छोटे भाग की, काया बहुत ही छोटी है।।
यदि द्रव्य दूजे द्रव्य में, कर सकता है कुछ भी नहीं।
षट्कायमय संसार तब, अस्तित्व रख सकता नहीं।।54।।

(क्रमशः)

10 मार्च 2021
जिनवाणी 23
ISSN 2249-2011

प्रवचन

खटपट को झटपट करें दूर

श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के सुशिष्य श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. द्वारा 16 अप्रैल, 2018 को फनवर्ड चौपासनी हाउसिंग बोर्ड, जोधपुर में फरमाये गये इस प्रवचन का आशुलेखन एवं सम्पादन श्री नौरतनमलजी मेहता ने किया है-
सम्पादक

धर्मानुरागी सज्जनों!

जीवन की सरपट दौड़ती गाड़ी में कभी-कभी खटपट हो जाती है। खटपट क्या? खटपट है-कषाय। खटपट कषाय का एक रूप है। क्रोध रूप कषाय का दावानल जब सुलगता है तो खटपट शुरू हो जाती है। कई हैं जो खटपट करना जानते हैं, खटपट में रहना भी जानते हैं। ऐसे लोग प्राय: कलहप्रिय होते हैं। आप उन्हें कषाय-प्रिय भी कह सकते हैं। आज के अधिकांश लोगों के जीवन पर नज़र डालें तो लगता है, जब-जब मनमुटाव होता है तब-तब भीतर के गुण नष्ट होते जाते हैं। खटपट व्यक्ति के हृदय को संकीर्ण करती है, प्रज्ञा को मन्द करती है और वाणी को तुच्छ बोलने को मजबूर बनाती है, साथ-ही-साथ खटपट स्वभाव को कर्कश भी करती है।

आज हम खटपट के कारणों को समझने का प्रयास करें। **पहला कारण है-हृदय संकीर्ण हुए बिना कोई खटपट कर ही नहीं सकता।** जिनका हृदय विशाल है तो क्षमा के भाव में दोनों हाथ जुड़ जाते हैं। और, जहाँ खटपट होती है वहाँ हाथ उठे बिना नहीं रहता। हृदय का संकीर्ण होना, ओछापन या छोटापन जहाँ होगा, वहाँ खटपट होगी ही। खटपट है तो उसके दुष्परिणाम भी देखने को मिलते हैं। जो अनन्त-अनन्त उपकारी हैं उनमें भी खटपट करने वाले को उपकार नहीं अपकार दिखते हैं। खटपट पहले भीतर में घटित होती है, व्यक्ति का हृदय संकीर्ण हो जाता है।

खटपट का पहला कारण है-हृदय की संकीर्णता तो **दूसरा कारण है-प्रज्ञा की मन्दता।** प्रज्ञा और बुद्धि में फ़र्क होता है। मतिज्ञान का प्रयोग बुद्धि के लिए किया जाता है जबकि प्रज्ञा को व्यक्ति तीसरी आँख मानता है। एक छोटा-सा प्रश्न है-आपकी आँखें कितनी?

सभा में से-दो।

ठीक है आप सभी इन दो आँखों को दो समझ रहे हैं जबकि सत्य यह नहीं है। ज्ञानी फरमाते हैं-व्यक्ति तीन तरह से देखता है-1. चक्षु दीप-आँख से देखता है। 2. चिन्तन दीप-चिन्तन के माध्यम से भी व्यक्ति आगे-पीछे, हित-अहित, लाभ-हानि को देखता है यह दूसरे प्रकार की आँखें हुई और तीसरे प्रकार की-3. चेतना दीप-आत्मा से भूत, वर्तमान, भविष्य सब कुछ एक साथ प्रत्यक्ष जानता है, देखता है। इस प्रकार आँख तीन तरह की होती है, इस शरीर में जो दो आँखें दृष्टिगोचर हो रही हैं ज्ञानियों की दृष्टि में वास्तविक एक ही इन्द्रिय के दो साधन हैं। दोनों आँखें देखने का काम करती हैं। मैं तीसरी आँख जो प्रज्ञा है, उसकी बात कर रहा हूँ। प्रज्ञा चक्षुदीप ही नहीं, चिन्तन दीप ही नहीं, चेतना दीप है। प्रज्ञा तीसरा नेत्र है, आप इसे चेतनादीप भी कह सकते हैं। चक्षुदीप से व्यक्ति देखता है तो चिन्तनदीप से व्यक्ति आगे-पीछे की सोच-विचार करता है। प्रज्ञा तीसरा नेत्र है। यह सबका जागृत नहीं होता। प्रज्ञा का प्रयोग ज्ञानियों, केवलज्ञानियों, तीर्थङ्कर भगवन्तों के लिए किया जाता है। जो सिद्ध बनने वाले हैं, उनके भीतर प्रज्ञा जागृत रहती है। चिन्तन के बिना जीव रह सकता है, पर चेतना के बिना जीव नहीं रह सकता।

प्रज्ञा में दो अक्षर हैं। एक अक्षर है-'प्र' और दूसरा 'ज्ञा।' 'प्र' यानी प्रत्यक्ष 'ज्ञा' यानी ज्ञान। प्रत्यक्ष ज्ञान प्रज्ञा है। ज्ञान दो तरह का है। एक प्रत्यक्ष ज्ञान है तो दूसरा है-परोक्ष ज्ञान। मति और श्रुत परोक्ष ज्ञान है तो अवधि, मन:पर्यव और केवलज्ञान प्रत्यक्ष होते हैं। एक ज्ञान इन्द्रिय और मन की सहायता से आता है तो एक ज्ञान सीधे आत्मा के उपयोग से आता है। खटपट करने से भीतर की प्रज्ञा मन्द होती है।

प्रज्ञा और बुद्धि दोनों अलग हैं। बुद्धि का मन्द हो जाना नुकसानदेह नहीं, परन्तु प्रज्ञा का मन्द हो जाना बहुत नुकसान पहुँचाता है। मन्द बुद्धि वाला लगातार प्रयास करता रहे तो वह धीरे-धीरे पण्डित बन सकता है।

हमारे एक तमिलभाषी सन्त थे। उनका नाम था-श्रीचन्दजी महाराज। उनकी बुद्धि इतनी मन्द थी कि नमस्कार मन्त्र सीखने में उन्हें नौ दिन लग गए। नवकार सीखने में भले ही नौ दिन लगे, परन्तु अभ्यास की निरन्तरता से उन्हें लगभग 300 भजन याद हो गए। मतलब, मन्द बुद्धि वाला चल सकता है, किन्तु मलिन बुद्धि वाला नहीं चल सकता। मेरा कथन इतना ही है कि खटपट से प्रज्ञा की मन्दता होती है।

खटपट का तीसरा कारण है-वाणी की तुच्छता। खटपट में वाणी की मधुरता नहीं रहती। आदमी गुस्से में किसे क्या कहना चाहिए, भान नहीं रख सकता। पिता-पुत्र हो या भाई-भाई या फिर गुरु-शिष्य ही क्यों न हों, खटपट में वाणी की मधुरता नहीं रह सकती।

खटपट का चौथा कारण है-स्वभाव की कर्कशता। खटपट करने वाले का स्वभाव कर्कश हुए बिना नहीं रहता। हम आज खटपट के कारणों पर विचार कर रहे हैं। आपस में किन्हीं के बीच कहा-सुनी होती है, उसे खटपट कहते हैं। आप थोड़ा गहराई से चिन्तन करें तो खटपट के अनेक कारण सामने आ जाएँगे, परन्तु प्रमुख कारणों में हैं-**जब हमारे जीवन में अनचाहा होता है, मनचाहा खो जाता है तो खटपट होती है।**

दूसरा- दृष्टि दोष देखती है, वाणी दोष कहती है तब खटपट होती है। दृष्टि भी दो तरह की है। एक है-दृष्टि-दोष तो दूसरी है दोष-दृष्टि। कभी किसी की आँखें खराब हो जाती है तो कभी उसे एक की जगह दो दिखते हैं। यह है-दृष्टिदोष। दूसरी खटपट की वजह से जिसे दुर्गुण ही दुर्गुण नज़र आते हैं तो वह है-दोषदृष्टि। व्यक्ति चाहे परिचित हो या अपरिचित दोषदृष्टि में दोष ही दोष दिखते हैं। हर व्यक्ति में कोइ न कोई गुण जरूर होता है तो दोष भी होते ही हैं। गुण-दोष सबमें होते हैं, पर जो केवल दोष ही दोष देखे, दोष ही दोष कहे तो वहाँ खटपट होती है।

गुरुदेव (आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा.) तो कहते हैं-निर्दोषो केवली हरि:। संसार के हर प्राणी में चाहे छोटा हो या बड़ा, दोष सबमें रहते हैं। इसलिए किसी के दोष देखने या कहने के बजाय गुण देखें-गुण कहें। आपको अपने परिवार में प्रेम और समन्वय स्थापित करना है तो दोष देखने की प्रवृत्ति छोड़नी होगी। आप चाहे घर में रहें या बाजार अथवा ऑफिस में दोष देखने की प्रवृत्ति होगी तो खटपट होगी ही। आप यदि दृष्टि और वाणी शुद्ध कर लें तो आपको वहाँ प्रेम का झरना बहता नज़र आएगा।

गुरुदेव का कथन कितना सत्य है-आपश्री का कथन है-''बाहर इज्जत जाने न पाए और भीतर में दोष रहने न पाए।'' इससे घर-परिवार में और संघ-समाज में प्रेम रहेगा। आप घर-परिवार की प्रतिष्ठा और पेठ जमाना चाहो तो वर्षों लगते हैं और उड़ाने में .....?

आप सब घर-परिवार में रहते हैं इसलिए आप सबका कर्त्तव्य है कि आप प्रेम से रहें। कदाचित्त **घर के किसी सदस्य में दोष भी हैं तो प्रेम से दोष दूर करें।** घर में रहते हैं तो पिता-पुत्र में, पति-पत्नी में, भाई-भाई में, तो सेठ-नौकर में और यहाँ तक कि कभी गुरु-शिष्य में खटपट हो सकती है। खटपट है तो उसे दूर करने की बात भी कहने की भावना है।

पहले, हम खटपट क्यों होती है, खटपट के

कारणों का चिन्तन कर रहे हैं। दो कारण आपके समक्ष रखे जा चुके हैं, पहला कारण-अनचाहा हो जाता है और मनचाहा खो जाता है तब खटपट होती है और दूसरा कारण-हमारी दृष्टि दोष देखती है और वाणी दोष कहती है तब खटपट होती है। **तीसरा कारण-दो व्यक्तियों के विचार नहीं मिलने से खटपट होती है।** गुरुदेव फरमाते हैं-मतभेद भले ही हो, पर मनभेद नहीं होना चाहिए। ये बातें केवल आपके लिए ही नहीं है, मैं अपने-आपको भी सुनाता हूँ। आगम वाणी का सार है-जीवन को अमृत की ओर बढ़ाएँ। 'भिन्नरुचिर्हि लोकः।' लोक में अलग-अलग रुचि होती है। किसी को क्या पसन्द तो किसी को क्या अभीष्ट है? घर में पाँच सदस्य हैं, पाँचों की एक-सी रुचि नहीं हो सकती। हाँ विचार रखने की सबको स्वतन्त्रता है, पर मेरे विचारों का ही पालन होना चाहिए, यह आग्रह ठीक नहीं है।

खटपट का चौथा कारण है-सहनशीलता और स्नेहशीलता की कमी से खटपट होती है। जहाँ प्रेम है, स्नेह-सौहार्द है वहाँ खटपट नहीं हो सकती। सहनशीलता जरूरी है। सहनशीलता का विकास सबसे बड़ा विकास है। आप किसी पेड़ को देखें। पेड़ है तो एकेन्द्रिय। एकेन्द्रिय होकर भी पेड़ का जीव अकाम निर्जरा करता है। वह सर्दी-गर्मी-बरसात सहता है तो कोई पत्थर मारे, उसे भी सहन करता है। पत्थर ही नहीं, कोई कुल्हाड़ी-हथोड़े से प्रहार करे तो भी पेड़ सहन करता है। पेड़ सहता है इसीलिए तो एकेन्द्रिय से बेइन्द्रिय-तेइन्द्रिय तक ही नहीं, पञ्चेन्द्रिय जीव तक विकास करता है।

आज जब भी सहनशील बने रहने की बात कही जाती है तो लोग पुनः कहने में संकोच तक नहीं करते। वे कहते हैं-कब तक सहन करें? हम सुनते ही सुनते जाएँगे तो यह कहना कभी बन्द नहीं करेंगे। हम भी मानते हैं सहनशीलता रखनी चाहिए, पर इनकी तो आदत है जब तक वापस नहीं सुनाएँगे, ये चुप होने वाले नहीं है।

कभी कोई भाई पूछता भी है कि सहने की सीमा कहाँ तक हो? ज्ञानीजन कहते हैं-भाई! सहन करो, सहनशीलता जरूरी है। गुरुदेव फरमाते हैं-जब तक सिद्ध स्वरूप न पा लो तब तक सहन करना है।

आपको हिन्दी की वर्णमाला का ज्ञान है। सब अक्षर एक-एक हैं, लेकिन 'स' तीन बार आता है। स, श और ष। लिखने की आकृति भले ही अलग-अलग है, उच्चारण प्रायः एक-सा प्रतीत होता है। स से सहनशील बनो। जो सहनशील है, खटपट से वह दूर है। एक बोले और सामने वाला मौन हो जाय तो खटपट होगी क्या?

आप शान्ति और सुकून का वातावरण चाहते हैं तो खटपट से दूर रहें। आपको जहाँ समस्या बता रहा हूँ वहीं समाधान क्या है, इसे भी कहने की भावना है।

खटपट से दूर रहने के **तीन समाधान हैं।** आप समाधानों का जीवन में प्रयोग करके देख लेना। जो आनन्द प्रभु महावीर ने, गणधर गौतम स्वामी ने प्राप्त किया और पूज्य गुरुदेव प्राप्त कर रहे हैं उसका **पहला कारण है-समझदारी।** यदि समझदारी है तो अशान्त वातावरण भी शान्त बन सकता है।

एक है जो अशान्त वातावरण में जैसे आग में घी डालते हैं वैसे ही बराबरी करेगा तो खटपट बढ़ेगी। समझदार खटपट बढ़ाता नहीं, खटपट मिटाता है। तो पहला सूत्र है-समझदारी और **दूसरा है-ज़िम्मेदारी।** आप ज़िम्मेदारी को ज़वाबदारी भी कह सकते हैं। जहाँ ज़िम्मेदारी होगी, वहाँ खटपट नहीं होगी। परिवार के संरक्षण की जिसकी ज़िम्मेदारी है वह बात-बात में तिल का ताड़ नहीं करता। तो समझदारी और ज़िम्मेदारी के बाद **तीसरा उपाय है-मौन।** जहाँ भी खटपट है वहाँ मौन धारण कर लो तो खटपट मिटते देर नहीं लगती।

मौन से ऊर्जा का सञ्चार होता है। आप देख रहे हैं गुरुदेव (आचार्यश्री हीराचन्द्रजी म.सा.) 80 वर्ष की अवस्था में कैसे एकान्तर-तप करते हुए भी चेहरे पर समाधि के भाव हैं।

खटपट और समाधि में वही अन्तर है जो पानी

और बर्फ में अन्तर होता है। आप पानी और बर्फ के अन्तर को जानते हैं। पानी हिलता है, उछलता है, गिरता है। पानी में खटपट है, चञ्चलता है जबकि बर्फ न हिलता है, न उछलता है। खटपट अर्थात् पानी। खटपट का भाव आते ही मन-वचन-काया के योगों में चञ्चलता आ जाती है। चञ्चलता समाधि को बढ़ने नहीं देती। आप खटपट नहीं करें और खटपट है तो उसे मिटाने का प्रयास करें। खटपट के कारणों का तथा समस्या के समाधान को सुनकर ही न रहें आप अपने जीवन-व्यवहार में उपायों को अपनाकर खटपट को तिलाञ्जलि दें, इसी मंगल-मनीषा के साथ.....।

❖

छोड़ने जैसा स्वभाव

आचार्य श्री विजयरत्नसेनसूरिजी

ईर्ष्यालु स्वभाव-ईर्ष्या एक ऐसी आग है जो आदमी को भीतर से ही जलाती है। ईर्ष्यालु व्यक्ति दूसरे के उत्कर्ष, दूसरों की प्रगति, दूसरों के विकास को देख मन ही मन जलता रहता है। ईर्ष्यालु स्वभाव अच्छा नहीं है। ईर्ष्यालु, व्यक्ति हमेशा दु:खी होता है। ईर्ष्या रूपी पाप के कारण आत्मा 'स्त्रीवेद का बन्ध करती है' जिस पाप के उदय से जीवात्मा को स्त्री जन्म प्राप्त होता है। पीठ और महापीठ मुनि ईर्ष्या के पाप के कारण ही ब्राह्मी और सुन्दरी के रूप में पैदा हुए थे। आत्म-विकास के मार्ग में आगे बढ़ने के लिए ईर्ष्या के पाप से सदैव बचना चाहिए।

निंदक स्वभाव-जिसके पास गुणदृष्टि नहीं है, ऐसे व्यक्ति को सर्वत्र दोष ही दिखाई देते हैं। वह जहाँ भी जाएगा, उसे दोष ही दिखाई देगा। ऐसा व्यक्ति निंदा किए बिना नहीं रहेगा।

उसे सागर में गम्भीरता नहीं दिखेगी वह तो कहेगा 'यह समुद्र कितना खारा है।' कमल को देखकर कहेगा-'अहो! यहाँ तो आसपास कितना कीचड़ है।' सूर्य को देखेगा तो बोलेगा-'अहो! यह तो आग के गोले की तरह बरसता है।' चन्द्र को देखकर कहेगा-'अहो! इसमें तो कलंक है।' निंदक के पास हमेशा दोषदृष्टि होती है। उसे कहीं गुण दिखते ही नहीं है।

उग्र स्वभाव-कई व्यक्तियों का स्वभाव उग्र होता है। छोटी-छोटी बात में बड़ा झगड़ा खड़ा कर देते हैं। उग्र स्वभाव आग के समान होता है। जिस प्रकार आग सबको जलाकर खाककर देती है, उसी प्रकार क्रोध की आग अपने सभी सद्गुणों को नष्ट कर देती है। संयम साधना के फल को जलाने का काम क्रोध की आग ही करती है।

चिन्ताग्रस्त स्वभाव-चिन्ता और चिन्तन में बहुत बड़ा अन्तर है। यद्यपि दोनों कार्य मन से ही होते हैं। प्रकाश से अन्धकार में ले जाने का कार्य चिन्ता करती है जबकि अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने का कार्य चिन्तन करता है। चिन्तातुर व्यक्ति छोटी-सी मुसीबत में भी कल्पनाओं का जाला बुनकर अपनी वर्तमान शान्ति को नष्ट कर देता है। भविष्य की चिन्ता व्यक्ति के वर्तमान के आनन्द को भस्मीभूत कर देती है।

निर्दयी स्वभाव-कई व्यक्तियों के स्वभाव में दया नाम की कोई चीज ही नहीं होती है। कइयों का स्वभाव खूब निर्दयी होता है। सामने वाले के दु:ख को देखकर जिसका हृदय द्रवित नहीं होता है, सच मायने में वह इन्सान कहलाने के लिए लायक ही नहीं होता है। निर्दयी व्यक्ति का हृदय संवेदन शून्य ही होता है। हजारों-लाखों लोगों की करुण मौत के समाचार सुनकर भी उसके रोम में भी दया का अंकुर फूटता नहीं है।

मायावी स्वभाव-अपने निजी स्वार्थ के लिए किसी को सीसे में उतारना, अच्छा स्वभाव नहीं है। वास्तव में जो दूसरों को ठगता है, वह स्वयं ठगा जाता है। दूसरों को धोखा देने वाला, अपनी ही आँख में धूल डाल रहा होता है। किसी को भी ठगना अच्छा स्वभाव नहीं है।

-पुस्तक 'प्रेरक-प्रवचन' से

10 मार्च 2021
जिनवाणी 27
ISSN 2249-2011

प्रवचन

उपयोग की साधना : मोक्षमार्ग की आराधना

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के सुशिष्य श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. द्वारा 20 मई, 2019 को जोधपुर के सुराणा कटला स्थानक, महामन्दिर में फरमाये प्रवचन में ज्ञान और दर्शन गुण से आवरण हटाने की प्रेरणा की गई है। प्रवचन का आलेखन एवं सम्पादन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। **-सम्पादक**

धर्म जिज्ञासु बन्धुओं!

भगवान महावीर ने जीव का लक्षण उपयोग बतलाया है। उत्तराध्ययन सूत्र के अट्ठाईसवें अध्ययन में कहा है-

मोक्ख-मग्ग-गइं तच्चं, सुणेह जिण-भासियं।
चउकारणसंजुत्तं, नाण-दंसण-लक्खणं।।

-उत्तराध्ययनसूत्र, 28/1

जीव का लक्षण उपयोग है। उपयोग दो तरह का होता है। एक-साकार उपयोग और दूसरा निराकार उपयोग। जीव उपयोग-शून्य नहीं होता। जीव अनादिकाल से उपयोगमय है। हमारी यह आत्मा ज्ञानमय है तो दर्शनमय भी है।

इन गुणों के आवरक कर्म हैं-ज्ञानावरणीय एवं दर्शनावरणीय। गुण बाहर से नहीं आते। ये आत्मा के निज गुण हैं। आत्मा में ज्ञान-गुण है वैसे ही दर्शन-गुण भी है। इन गुणों पर आवरण जो आया हुआ है, उसे हटाना है।

घर में कोई वस्तु चादर से ढकी हुई पड़ी है तो उस वस्तु को प्राप्त करने के लिए क्या करना पड़ता है? सीधा-सा जवाब है चादर हटानी होगी। चादर हटते ही वह वस्तु जो चादर से ढकी हुई थी, मिल जायेगी। बस, ज्ञान-दर्शन गुण-प्राप्ति के लिए हमें वही पुरुषार्थ करना है। जैसे घर की वस्तु पर ढकी चादर खुद को हटानी होती है वैसे ही ज्ञान और दर्शन पर जो आवरण आ गया है, उसे भी खुद को हटाना पड़ेगा।

ज्ञान, दर्शन पर आया आवरण कैसे हटेगा? सबसे पहले उपयोगमय सत्ता पर विश्वास जागृत होगा तो आवरण हटाने की दिशा में गति बनेगी। सबसे पहले ''मेरा स्वभाव ज्ञानमय है, दर्शनमय है, इसका विश्वास बनने पर हर क्षण जागृति पूर्वक रहना होगा।'' योग तीन हैं-मन, वचन और काया के योग। इन तीन योगों से प्रवृत्ति होती है वैसे ही आत्मा की प्रवृत्ति को उपयोग कहते हैं। योग अपना कार्य नहीं छोड़ेंगे। तेरहवें गुणस्थान तक योग की प्रवृत्ति चलेगी। योग की तरह उपयोग भी निरन्तर चल रहा है। जब योग और उपयोग दोनों चल रहे हैं तो गलती कहाँ हो रही है? देखिए, जीव के जो उपयोग में आता है, जीव उससे जुड़ जाता है। योगों की प्रवृत्ति को अपनी प्रवृत्ति मान लेता है। काययोग, वचनयोग और मनोयोग की प्रवृत्ति को जीव अपनी मान लेता है।

एक गुरु है, एक शिष्य। शिष्य जानता है-आत्मा ज्ञानमय है। ज्ञान गुण उसका स्वभाव है। ज्ञान न दिया जा सकता है, न लिया जा सकता है। ज्ञान तो भीतर में विद्यमान है। बस, गुरु तो रास्ता दिखाता है-ज्ञान गुण कैसे विकसित हो? जीव अगर जानने और देखने का काम करे, जुड़ने का काम नहीं करे तो ज्ञान गुण विकसित होता जाएगा। जुड़ना ज्ञान का ज्ञेय के साथ होता है। ज्ञान का ज्ञेय में एकाकार हो जाना पहली गलती है। जुड़ने से जीव राग-द्वेष करता है। ज्ञेय को ज्ञायक से भिन्न मानें तो ज्ञान-गुण बढ़ता जाता है। यही ज्ञान-मार्ग है।

इसका यह मतलब नहीं कि ज्ञान सीखना ही नहीं।

जो ज्ञान सीख रहे हैं क्या वह नहीं सीखना? ऐसा नहीं है। ज्ञान तो सीखना है। ज्ञान सीखने में समय लगाना और श्रम करना भी जरूरी है। पर, सर्वज्ञों का कथन है-हर मनुष्य में ज्ञान, दर्शन, सुख और शक्ति रही हुई है।

किसी घर में खज़ाना गड़ा है। गड़ा खज़ाना बताने वाला गुरु की तरह होता है। ठीक इसी तरह हर जीव में ज्ञान, दर्शन गुण हैं। गुरु तो खज़ाना बताते हैं कि तेरे भीतर अनन्त चतुष्टय का खजाना है। तू खोज कर। तुझे खज़ाना प्राप्त होगा। बस खोजने में विश्वास चाहिए, शक्ति चाहिए। इस शक्ति के प्राप्त होने पर हर व्यक्ति को लगेगा-मैं सिद्ध स्वरूपी हूँ। **सिद्धां जैसो जीव है, जीव सोही सिद्ध होई।** जब यह भावना आ जाएगी तो वह आगे बढ़ता जाएगा। साधना में दीनता-हीनता की जरूरत नहीं, हाँ लघुता एवं विनय तो चाहिए। ज्ञान-दर्शन हर जीव का स्वभाव है। साधना जीव कर सकता है। क्यों? तो व्यवहार दृष्टि से हमारी आत्मा सिद्धों जैसी है। आत्मा में अनन्त ज्ञान गुण है। साधना से यह गुण विकसित होता जाता है। उत्तराध्ययनसूत्र का अट्ठाईसवाँ अध्ययन कहता है-

मोक्ख-मग्ग-गइं तच्चं.....।

-उत्तराध्ययनसूत्र, 28/1

मोक्षमार्ग गति अध्ययन कहता है ज्ञान और दर्शन निज गुण हैं। जैसे मिट्टी कारण है तो घड़ा कार्य। कारण क्या? जिसके द्वारा कार्य निष्पादित होता है। चार कारण हैं-ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप। इनमें जितना-जितना जीव पुरुषार्थ करेगा, उतना ज्ञान-दर्शन गुण का विकास होता जाएगा।

ज्ञान और दर्शन आत्मा के मौलिक गुण हैं। ज्ञान, दर्शन पर जो आवरण आया हुआ है, उसे हटाने की जरूरत है। जैसे मिट्टी में घड़ा बनने की ताकत है, पर जब तक कुम्भकार के पास नहीं जाएगी तो मिट्टी घड़ा नहीं बन सकती। ज्ञान, दर्शन के गुण भीतर में विद्यमान हैं, उन्हें प्रकट करने के लिए गुरु की, सत्संग की एवं स्वाध्याय की आवश्यकता होती है।

मोक्षमार्ग सरल है तो कठिन भी। सरल किनके लिए है? जीव जुड़े नहीं, राग-द्वेष की प्रवृत्ति नहीं होगी तो निर्मलता आती जाएगी। ज्ञान, दर्शन गुण की प्राप्ति से वीतरागता की ओर गति होती जाएगी। क्यों तो वह सिर्फ जानता है, देखता है, लेकिन जुड़ता नहीं। जुड़ता नहीं तो उसका मतिज्ञान-श्रुतज्ञान बढ़ता जाएगा। आत्मा के उपयोग में रहते-रहते जीव का ज्ञान-गुण बढ़ता रहता है।

मैं और मेरेपन से राग-द्वेष होता है। इससे मलिनता आती है। मैं और मेरेपन से बचकर चलने वाला जीव राग-द्वेष से बचा रहता है और उसकी निर्मलता बढ़ती जाती है। पानी स्वच्छ है। उसमें यदि रंग डाल दें, मिट्टी-कचरा डाल दें तो पानी गन्दा होगा ही। ऐसे ही राग का रंग द्वेष का कचरा आत्मा को मलिन करता ही है। जब तक राग-द्वेष नहीं छूटेगा ज्ञान-गुण विकसित नहीं होगा।

देखिए, ये राग और द्वेष दोनों में से द्वेष तो दिखता है, लेकिन राग नहीं दिखता। है मुख्यतः राग। दो तरह की मिठाई है। एक आपको पसन्द है, एक नापसन्द। पसन्द की मिठाई पर राग है। मिठाई खाने में पाप नहीं लगता, रागपूर्वक खाने से पाप लगता है। राग-भाव से कर्म बँधता है। तो छोड़ना क्या? वस्तु या राग-द्वेष?

कर्म-बन्धन का कारण वस्तु का उपयोग नहीं, कारण है तो राग-द्वेष। यह जिनशासन है। भगवान वस्तु के स्थान पर वस्तु से राग-द्वेष छोड़ने की बात कहते हैं। वस्तु कर्म-बन्ध का कारण नहीं, वस्तु छूटे या नहीं, पर राग-द्वेष छूटने पर वस्तु के उपयोग से कर्मबन्ध नहीं होता।

जिनशासन गहरा है। जिनशासन सरल भी है तो कठिन भी। राग-द्वेष में राग स्वाभाविक रूप से अच्छा लगता है। साधक को राग-द्वेष नहीं, इनसे अलग रहना अच्छा लगता है। जिसमें राग-द्वेष अच्छे नहीं लगते

उसी का नाम वैराग्य है। जहाँ भी न अच्छे का भाव है, न बुरे का, तो कहना होगा वह वैराग्य-भाव ही है।

मोक्ष के चार कारण हैं। हमें मोक्ष-मार्ग के कारणों को अपनाना पड़ेगा। ज्ञान, दर्शन गुण का सजगता पूर्वक अभ्यास करने से व्यक्ति का प्रवृत्ति से जुड़ाव नहीं होगा। जुड़ना अच्छे से भी होता है तो बुरे से भी। अभी गर्मी है। गर्मी में हर एक को गर्मी लगती ही है। गर्मी ठीक नहीं, इससे बचने के लिए उपाय करना राग-द्वेष से जुड़ना नहीं तो क्या है?

राग और द्वेष से नहीं जुड़ना साधना है। इसलिए इनकी परिणति नहीं करें। आप इतना तो विचार करें कि मैं कहीं जुड़ तो नहीं रहा?

मोक्षमार्ग है ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप। इस मार्ग पर चलकर अनन्त जीव मोक्ष गए हैं, जायेंगे। यह मार्ग बाहर नहीं, भीतर में है। भीतर के मार्ग पर चलते हुए आप साधना कर सकेंगे और साधना करते-करते निश्चित रूप से फल मिलेगा ही।

धर्म का फल तत्काल मिलता है। धर्म करने के साथ शान्ति मिलती है, प्रसन्नता बढ़ती है, आनन्द आता है। राग-द्वेष से जुड़ेंगे नहीं तो शान्ति आनन्द बढ़ेगा। आप जानने-देखने का काम तो करें, परन्तु जुड़ें नहीं। आप अभी धर्मसभा में बैठे हैं तो घर छोड़कर आए या नहीं? आप भले ही अभी यहाँ बैठे हैं और यहाँ बैठे-बैठे भी घर याद आ रहा है तो.....?

आप घर छोड़ना नहीं चाहते। मान लो किसी को शादी-विवाह के निमित्त से चेन्नई जाना है तो घर छोड़ना खराब लग सकता है, सफ़र मुश्किल लग सकता है। आप जानते हैं घर में आनन्द में रहेंगे, यात्रा में कष्ट-परेशानियाँ आ सकती हैं। आत्मा का घर में रहने का मतलब है-स्वभाव में रहना। स्वभाव सुखदायी है, उस स्वभाव रूप घर को नहीं छोड़ना है। आप मोह, राग-द्वेष नहीं करें तो फिर कहना होगा-जागृत आत्मा, कर्मों का खात्मा।

जुड़ना गलती है, भूल है। जुड़ाव न हो, इतनी-सी सावधानी रखनी है तो फिर सावधानी के साथ निश्चित रूप से आप स्वभाव में स्थिर हो सकेंगे। ज्ञानी गुरु भगवन्त का पदार्पण हो गया है, आप तत्त्व की बातें उनसे सुनें, समझें और आचरित करें, इसी मंगल मनीषा के साथ.....

(युगमनीषी, अध्यात्म योगी, इतिहास मार्तण्ड, आचार्य भगवन्त पूज्य श्री 1008 श्री हस्तीमल जी म.सा. के दीक्षा शताब्दी वर्ष के सम्पूर्ति कार्यक्रम में दिग्विजय नगर, जोधपुर में प्रस्तुत गीतिका)

गुरु हस्ती की साधना का....

श्री धर्मचन्द जैन

(तर्ज :: जन्म-जन्म का दास हूँ.....)

गुरु हस्ती की साधना का तेज निराला, हाँ तेज निराला।
लघुवय साधक, श्रेष्ठ आराधक, भव जल किया किनारा।।
गुरु हस्ती की साधना का.....

जन्म लिया पीपाड़ में, माँ सज्ञ दीक्षा धारी,
अध्ययन कीना सूत्र तत्त्व अरु, भाषा ज्ञान सुधारी,
गुरु चरणों में रहे समर्पित, जीवन किया सुधारा.....
पन्द्रह की जब उमर हुई तो, आचारज लिख दीना,
बीस वर्ष की उमर में ही, तीजा पद धर लीना,
शास्त्रार्थ में बने अग्रणी, संयम तेज निखारा.....

सामायिक-स्वाध्याय को, जन-जन में विकसाया,
समता धारो, ज्ञान बढ़ाओ, भक्तों को समझाया,
घर-घर होवे प्रार्थना ये, वाणी में उच्चारा.....

जिनशासन की दीप्ति में, इकसठ वर्ष गुजारे,
अध्यात्म योगी, युगमनीषी, मौलिक इतिहास सँवारे,
जीवन अपना अन्तिम जाना, तेरह दिन संथारा.....

गुरु हस्ती के उपदेश को, जन-जन में फैलायें,
जीवन में धारण करके, शासन ज्योत जलायें,
दीक्षा शताब्दी सम्पूर्ति पर, हो उद्घोष हमारा.....

-रजिस्ट्रार, अ.भा.श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

10 मार्च 2021
जिनवाणी 30
ISSN 2249-2011

83वाँ जन्म-दिवस

अनन्त उपकारी अप्रमत्त साधक गुरु हीरा

श्री जवाहरलाल कर्णावट

सुखद यात्रा का शुभारम्भ

सृजनहार कुम्भकार का निष्काम समर्पण अनाकार मिट्टी को मंगलकलश बना देता है। शिल्पी के शिल्प कौशल का निरपेक्ष समर्पण अनघड़ पत्थर को जगवन्द्य प्रभु की प्रभुता प्रदान करता है। कलाकार की सधी हुई उंगलियों का सहकार-परिहार रूप समर्पण खुरदरी दीवार को मुँह बोलते मनोहारी चित्रों से सुसज्जित कला मन्दिर बना देता है। सद्गुरु के निर्मापक हाथों का प्रीतिदान निष्कांक्ष आस्थाशील शिष्य को गुरु गरिमा से मण्डित मेरु गिरि बना देता है। सच में ही श्रद्धेय के प्रति सर्वात्मना अटूट समर्पण व्यक्तित्व को शिखर गरिमा मण्डित करता है। इसका साक्षात् प्रमाण है आचार्य गुरु भगवन्त श्री हीराचन्द्रजी म.सा.।

राजस्थान के छोटे से कस्बे पीपाड़शहर में जन्मे माता मोहिनी पिता मोतीलालजी गाँधी के लाडले ने आराध्य गुरु हस्ती की चरण-सन्निधि पाकर, उनके हृदय में बसकर उनकी पोशाल के मेधावी छात्र बनकर, दीक्षित होकर समर्पण सेतु से छोटे-बड़े नालों और सरिताओं को ही नहीं महासागर को पार करके रत्न धर्मसंघ के अष्टम पट्टधर आचार्य बनने तक की लम्बी यात्रा तय की है।

आत्मसाधकों के लिए महान् आलम्बन बनकर, आप तीर्थंकरों के प्रतिनिधि स्वरूप सर्वोच्च शिखर आचार्य पद को सुशोभित कर रहे हैं।

अनन्त उपकार

हम परम सौभाग्यशाली हैं कि हमें यह आर्यक्षेत्र, भरतक्षेत्र, जिनशासन और जैन कुल मिला एवं यह रत्नसंघ मिला, जिसकी विरासत में एक से एक महान् उच्चकोटि के आचार्य भगवन्त मिले। रत्नसंघ को गगनचुम्बी ऊँचाइयाँ प्रदान कराने वाले आराध्य गुरु हस्ती मिले। जिनके अनन्त उपकारों के हम ऋणी हैं जिन्होंने चतुर्विध संघ को, रत्नसंघ को एक अनुपम तोहफ़ा दिया, उपहार दिया, एक डॉयमण्ड दिया, हीरा दिया-गुरु हीरा के रूप में। जो सचमुच में आपके द्वारा गढ़ा हुआ, तरासा हुआ, सँवारा हुआ, सजाया हुआ, बनाया हुआ हीरा है। जो आज जिनशासन, रत्नधर्मसंघ और आपके दिव्य-भव्य पाट को देदीप्यमान कर रहा है।

आज हर भक्त गुरु हीरा का दर्शन-वन्दन कर, उनके दिव्य आभामण्डल को देखकर, उनकी शीतल छत्र-छाया में अपने आपको गौरवान्वित महसूस कर रहा है। हर भक्त के अन्तर्हृदय से यही बोल मुखरित हो रहे हैं-

- धरती अम्बर सागर नदियाँ सबने यही गुञ्जाया है।
  आसमाँ से एक फरिश्ता गुरु हीरा के रूप में इस धरती पर आया है।।
- गीता के कण-कण में श्याम बसे हुये हैं, रामायण के कण-कण में राम बसे हुये हैं। किसी के दिल में कौन बसे हैं यह तो वही जाने, मगर हर भक्त के हृदय में गुरु हीरा बसे हुये हैं।।
- जो जल से भरा है उसे सागर कहते हैं,
  जो रत्नों से भरा है उसे रत्नाकर कहते हैं।
  जो मिटा दे तम को उसे दिवाकर कहते हैं,
  लेकिन जिनका सम्पूर्ण जीवन आगम के मधुरस से लबालब भरा है, उन्हें हम सब गुरु हीरा कहते हैं।।

ज्ञान, दर्शन, चारित्र के अप्रमत्त साधक रत्न

गुरु हीरा की संयमी जीवन-यात्रा तलहटी से शिखर तक की यात्रा है। आपका जीवन दिव्य-भव्य-साधना पथ की मनीषा का साक्षात् अवतरण है। गुरु हीरा एक हैं, किन्तु उनेक रूप अनेक हैं-योगी, मनीषी, सरल, सहज, विनम्र, प्रकाण्ड-विद्वान् हैं, वे शास्त्रों के ज्ञाता ही नहीं, संयम के शिखर पुरुष हैं।

आपका जीवन एक खुली किताब के समान है जिसका एक-एक अक्षर जीवन को जगाने वाला है, जागृत करने वाला है, प्रतिबोध देने वाला है, चेतन करने वाला है।

आप जैनागम के मर्मज्ञ और विशेषज्ञ एवं जनमानस के अज्ञान-अन्धकार को दूर करने वाले प्रकाशपुञ्ज हैं। आपका सम्पूर्ण जीवन विशिष्ट गुणों से, विशेषताओं से भरा पड़ा है। रत्न धर्मसंघ के बहुमुखी विकास में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान है। आप ओजस्वी एवं प्रखर व्याख्याता, ज्ञान-क्रिया के बेजोड़ संगम, कथनी-करनी में एकरूपता, सिद्धान्तप्रियता, स्पष्टवादिता, समन्वयवादिता, व्यसनमुक्ति और शीलव्रत आराधक, बारहव्रतों के प्रबल प्रेरक, सामूहिक रात्रि-भोजन त्याग के प्रणेता, संयम के सजग प्रहरी, सामाजिक क्रान्ति के सूत्रधार, नवयुवकों में अध्यात्म, धर्म, नवचेतना के प्रेरक, आगम वारिधि, प्रज्ञा के धनी, आत्म-अन्वेषण के महान् तीर्थयात्री, रत्नवंशीय भास्कर, निर्मोही, सौम्य हँसमुख, प्रशान्तमूर्ति, आठ सम्पदा युक्त 36 गुणों के धारी हैं।

आप हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, गुजराती, राजस्थानी आदि भाषाओं के गहन ज्ञाता हैं। आपके पास साहित्यविधा है।

आपका संयमी साधनामय जीवन एक ऐसा उपवन है जिसका प्रत्येक पुष्प अपनी मनोहारिणी छटा के साथ सुगन्धित सौरभ दे रहा है।

- आपका जीवन है अध्यात्म की एक सुन्दर पाठशाला,
  जिसमें सिखाई जाती है मुक्ति की वर्णमाला।
  भव्यजनों को मिलता है ज्ञान का उजाला,
  हर आने वाला बन जाता है स्वयं का रखवाला।।
- आपकी सम्पूर्ण साधना आगम के धरातल पर चलती है।
- यूरोप के चाणक्य बिस्मार्क ने महापुरुषों में तीन प्रमुख गुण बताये हैं-1. चिन्तन में उदारता 2. व्यवहार में मानवीयता 3. सफलता में विनम्रता। आचार्य भगवन्त गुरु हीरा में ये तीनों गुण साक्षात् नज़र आ रहे हैं।

इतिहास में तीन प्रकार के आचार्य

1. **गणाचार्य**-संघ का कुशल नेतृत्व करते हैं, संघ की गौरव-गरिमा बढ़ाते हैं।
2. **वाचनाचार्य**-स्वयं विद्वान होते हैं, शिष्यों को भी विद्वान् बनाते हैं। शिक्षा-दीक्षा में अभिवृद्धि होती है।
3. **युगप्रधानाचार्य**-सभी संघों में पूजनीय, वन्दनीय होते हैं। उनकी विद्वत्ता से सभी प्रभावित होते हैं।

आचार्य भगवन्त गुरु हीरा गणाचार्य, वाचनाचार्य, युगप्रधानाचार्य ये तीनों हैं। स्थानकवासी परम्परा में आप ज्येष्ठ, श्रेष्ठ आचार्य भगवन्त हैं।

आचार्य भगवन्त की प्रभुता

उपाध्याय भगवन्त श्री मानचन्द्र जी म.सा. जन्म और दीक्षा में आपसे बड़े रहे, मगर पद में आप बड़े हैं। फिर भी उपाध्याय श्री को वन्दन करते हुये कहते थे कि आपके श्री चरणों की अनन्तकृपा से संयम में सहयोग मिल रहा है। रुग्ण सन्तों के प्रति आपकी महनीय सेवा भावना रहती है। ऐसा कोई प्रवचन नहीं है जिसमें आप अपने आराध्य गुरु हस्ती का नाम नहीं लेते।

महान् उपदेशक

आराध्य गुरु हस्ती की तरह आप भी कम बोलते हैं। हर पल, हर क्षण अपनी साधना में रहते हैं, माला फेरते हैं, हाथ में शास्त्र नज़र आता है, आप मौन साधक हैं, प्रतिदिन 2 से 4 बजे तक आपकी मौन साधना रहती है। अखण्ड मौन भी रखते हैं। आप थोड़ा बोलते हैं, मगर गागर में सागर भर देते हैं। छोटी-छोटी बातों में जीवन का सार, यथार्थ एवं गूढ़ रहस्य बता देते हैं। आपका एक-एक उपदेश हृदय को छूने वाला है। अति संक्षिप्त में लिख रहा हूँ, कुछ खास बातें ही-

- आपकी पावन प्रेरणा एवं उपदेश से महाराष्ट्र के वाकड़ीगाँव का 25 सालों का परस्पर मतभेद दूर हो गया, वहाँ खुशहाली छा गई।
- बीकानेर में आपका पावन प्रवास था जय बोलने में कुछ मतभेद देखा, तुरन्त आपने कहा-मेरी

छोड़कर बाकी सभी की जय बोलो। वहाँ श्रावक-श्राविकाओं ने क्षमायाचना की।

- आचार्य भगवन्त की पीड़ा बोलती है-कहते हैं कि मीटर कितना कपड़ा मापता है, फिर भी वह नंगा रहता है, चम्मच कितने व्यञ्जनों में रहता है स्वयं भूखा रहता है। श्रावक-श्राविकाओं को प्रतिबोध देते हुए कहते-आप कोरे मत रहो अध्यात्म धर्म से जुड़े रहो। आचार्य भगवन्त कहते हैं-दिन में ऐसा कोई काम मत करो कि रात को चैन की नींद नहीं आवे और रात को ऐसा कोई काम मत करो कि दिन में मुँह छिपाना पड़े।
- आचार्य भगवन्त का नाद है-सुखी जीवन जीना है तो न किसी से अपेक्षा और न किसी की उपेक्षा। दीपावली के पावन प्रसङ्ग पर आचार्य भगवन्त दर्शन-प्रदर्शन का सुन्दर विवेचन करते हैं।

साधना से स्वत: चमत्कार

महापुरुष कोई चमत्कार नहीं दिखाते, मगर उनकी साधना में इतनी शक्ति होती है कि स्वत: चमत्कार हो जाता है। आचार्य भगवन्त गुरु हीरा में भी साधना की अद्भुत शक्ति है जो स्वत: चमत्कार कर देती है-

1. 2004 में बेंगलोर चातुर्मास में अजीतराजजी मरलेचा की पुत्रवधू को बाहर की हवा लग गई। अनेक डॉक्टरों को दिखाया, कोई सुधार नहीं, गुरु हीरा के पास लाये 7 दिन मांगलिक श्रवण से पूर्ण स्वस्थ हो गई।
2. बालोतरा के मीठालाल जी मधुर की धर्मपत्नी कमलाजी को फिट आते थे। जयपुर लेकर आये मांगलिक श्रवण से पूर्ण स्वस्थ हो गई।

कुड़ी ऊर्वरा धरा है, महासतीजी अञ्जनाजी हमारे गाँव की है। आज आप बाफना कुल की, गाँव की, जिनशासन की, रत्नवंश की, गुरु हस्ती-हीरा की बगियाँ को सुशोभित कर रही हैं। कुड़ी की दो घटनाएँ साक्षात् आँखों से देखी-

1. एक आदमी की कमर में पीड़ा थी। बैठ गया तो उठ नहीं सकता, खड़ा हुआ तो बैठने में तकलीफ़। आचार्य भगवन्त से गुरु आम्नाय भी ली, रोज़ाना मांगलिक सुनता, अभी पूर्ण स्वस्थ है।
2. एक बहन गुमसुम रहती थी, आचार्य भगवन्त के पास लाते, रोजाना मांगलिक श्रवण करती। आज पूर्ण स्वस्थ है।

अन्तरंग संगोष्ठी

आचार्य भगवन्त अपने शिष्य-शिष्याओं (साधु-साध्वी) की कक्षा भी लेते हैं, क्या-क्या सीख रहे हैं, कितनी गाथाएँ पूर्ण की हैं, कोई प्रमाद-आलस्य में समय व्यर्थ न करे। संगोष्ठी करते हैं, ऐसी संगोष्ठी में सभी महासतियाँजी के बीच एक महासतीजी ने आचार्य भगवन्त से पूछा-भन्ते! मिथ्यात्व क्या है? आचार्य भगवन्त ने कितना सुन्दर उत्तर दिया-जहाँ मेरे उपदेश एवं प्रेरणा से मेरे जीवन का मेल खाता है वहाँ मिथ्यात्व नहीं है और जहाँ मेरे उपदेश प्रेरणा से मेरे जीवन का मेल नहीं खाता वहाँ मिथ्यात्व है। आचार्य भगवन्त की कथनी-करनी में एकरूपता है।

अन्त में

कैसे करूँ गुणगान आपका शब्दों की बारात नहीं है। सागर को गागर में भरना मेरे बस की बात नहीं है। आपके 83वें जन्मदिवस पर हे हृदयेश्वर, अरिहन्त की आभा, आराध्य गुरु हस्ती के दुलारे, माता मोहिनी पिता मोतीजी के लाडले, जन-जन के अनन्त आस्था के केन्द्र आचार्य गुरु भगवन्त हीरा आप दीर्घायु, शतायु हों, सदा स्वस्थ रहें, आपका वरदहस्त हम पर सदा बना रहे, आपकी दृष्टि अनवरत हमें मिलती रहे। जिनशासन के फलक पर आपकी यशकीर्ति सदा बढ़ती रहे। रत्न धर्मसंघ की गरिमा आन-बान-शान आपके नेतृत्व में बढ़ती रहे।

40, Mookathal Street, Puraswalkam, Prestige Place, B Block, 2nd Floor, Chennai-600007 (Tamilnadu)

10 मार्च 2021
जिनवाणी 33
ISSN 2249-2011

शोधालेख

श्रावकों का श्रेष्ठ वचन-व्यवहार

श्री त्रिलोकचन्द जैन

मन, वचन और काया ये तीन अमूल्य साधन, जो कि अवनति-उन्नति के मूल कारण हैं, ये सभी संसारी जीवों में पुण्यवानी के अनुसार पाये जाते हैं। वचन रूपी साधन इन साधनों का मध्यवर्ती मेरुदण्ड है। इस साधन की शक्ति से हम सब भली-भाँति परिचित हैं।

शब्द के भेद और उनका कारण

वचन में शब्दों का प्रयोग होता है। शब्द भी दो प्रकार से उत्पन्न होते हैं-(1) प्रयत्न जन्य और (2) स्वत:।

(1) प्रयत्नजन्य-जिस शब्द के होने में किसी प्रयत्न की अपेक्षा रहती है, वे शब्द प्रयत्नजन्य होते हैं। ये भाषा और अभाषा रूप में दो प्रकार के होते हैं।

(क) भाषा-वचन वर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण कर वचन योग से निस्सरण करना भाषा है। यह अभिप्राय की अपेक्षा से सत्य, असत्य, मिश्र और व्यवहार रूप में होती है।

(ख) अभाषा-जिसमें शब्द तो होता है, आवाज तो होती है, परन्तु वह भाषा का रूप नहीं ले पाती है। जैसे-ताली बजाना, चुटकी बजाना, घड़ी की टिक-टिक आदि।

(2) स्वत:-स्वाभाविक रूप से होने वाले शब्द स्वत: होते हैं। जैसे-बादलों की गड़गड़ाहट, बिजली की कड़कड़ाहट आदि।

प्रयत्नजन्य शब्द में भी भाषा की ही विवक्षा है। यहाँ पर आगम आदर्श में श्रावकों की भाषा की समीक्षा करना अभिप्रेत है। 'श्रावक' शब्द ही हमें बताता है कि वह श्रद्धावान, विवेकवान और क्रियावान होता है। अत: उसके शब्द भी विवेकजन्य ही होने चाहिए। उसके शब्द निश्चय में प्रभु की साक्षी से सत्यता लिए होते हैं तो व्यवहार में लोकप्रिय बनाने वाले होते हैं।

आगमों में निषिद्ध वचन-व्यवहार

आगमों में अनेक स्थलों पर वचन व्यवहार में निषिद्ध वचनों को बताया गया है।

(1) बृहत्कल्पसूत्र के छठे उद्देशक में 6 प्रकार के वचन निषेध रूप में बताये हैं-(1) असत्य वचन (2) रोष पूर्ण वचन (3) दूसरों का तिरस्कार करने वाले वचन (4) मोह उत्पन्न करने वाले वचन (5) कठोर वचन (6) कलह उपजाने वाले वचन।

(2) प्रश्नव्याकरणसूत्र में भी निम्नलिखित वचनों का निषेध किया गया है-(1) हिंसा या पाप युक्त वचन (2) स्त्री आदि की विकथा (3) सार रहित वचन (4) कलहकारी वचन (5) न्याय रहित वचन (6) आपवादिक और विवाद युक्त वचन (7) दूसरों के हृदय में क्लेश उत्पन्न करने वाले वचन (8) लज्जा रहित वचन (9) लोक निन्दित वचन (10) विकृत दृष्टि से देखा हुआ वचन (11) भली-भाँति नहीं सुना वचन (12) अपने गुणगान वाले वचन (13) दूसरों के निंदाकारक वचन।

(3) उत्तराध्ययनसूत्र के 24वें अध्ययन में 8 प्रकार के वचन निषिद्ध कहे हैं-(1) क्रोध युक्त वचन (2) मान युक्त वचन (3) माया युक्त वचन (4) लोभ युक्त वचन (5) हास्य युक्त वचन (6) भय युक्त वचन (7) विकथाएँ (8) मौखर्य (चपल) वचन।

(4) उत्तराध्ययन के ग्यारहवें अध्ययन में अविनीत द्वारा बोली जाने वाली भाषा भी निषिद्ध बताई है-(1) निरर्थक वचन (2) अपने मित्र की रहस्यमय बात प्रकट करने वाले वचन (3) असम्बद्ध (असभ्य) वचन।

(5) दशवैकालिकसूत्र के 7वें अध्ययन में भाषा के चार प्रकार-सत्य, असत्य, मिश्र और व्यवहार में से

असत्य एवं मिश्र भाषा को श्रावक के बोलने अयोग्य बताता है।

चउण्हं खलु भासाणं, परिसंखाय पण्णवं।
दुण्हं तु विणयं सिक्खे, दो न भासिज्ज सव्वसो।।

साधक पुरुष के लिए भाषा का विवेक रखना बहुत आवश्यक है। असत्य और मिश्रवचन उसके लिये सदा वर्जनीय कहे गये हैं।

(6) प्रज्ञापनासूत्र के 11वें पद में श्रावकों के नहीं बोलने योग्य असत्य और मिश्र भाषा के भेदों का विस्तार से वर्णन है।

मौन की महत्ता

आगमों और ग्रन्थों में अनेक स्थलों पर नहीं बोलने योग्य वचन का निर्देश किया गया है तो किन्हीं स्थलों पर बोलने योग्य वचनों को भी बताया है। उपासकदशाङ्ग में वर्णित श्रावक अपनी उत्कृष्ट उपासना के कारण एकभवतारी बने तो फिर उनका वचन-व्यवहार उत्कृष्टता को लिए हुए ही होना चाहिये। लेकिन विशेषता यह है कि दसों ही श्रावक साढ़े पाँच वर्ष तक मौन रहे। इससे परिलक्षित होता है कि मौन साधना सर्वश्रेष्ठ साधना है। अंग्रेजी की कहावत भी है-

Speach is Gold but Silence is Golden.

बोलना सोना है, पर मौन रहना तो बहुमूल्य सोना है।

अवाच्य वचन नहीं बोलने से गुप्ति का तथा शास्त्र विहित वचन बोलने से श्रावक समिति का आराधन करता है।

निर्युक्तिकार ने विवेकपूर्ण बोलने को भी मौन की संज्ञा दी है।

वयण-विभत्ती-कुसलो वओगयं बहुविहं वियाणंतो।
दिवसंपि भासमाणो तहावि वयगुत्तयं पत्तो।

अर्थात् वचन के वाच्य-अवाच्य आदि विविध प्रकारों को जानने वाला वचन-विभाग में कुशल मुनि यदि दिन भर भी बोले तो उसे भी वचन गुप्ति को प्राप्त हुआ समझना चाहिये।

श्रावक के वचन-व्यवहार की समीक्षा

आगमों और ग्रन्थों में बताये गये वचन व्यवहार के आधार पर पूर्वाचार्यों ने श्रावक के वचन व्यवहार को आठ बोलों में संक्षिप्त किया है। उन आठ भेदों का आधार लेकर श्रावकों के वचन व्यवहार की समीक्षा करने का प्रयास करते हैं।

(1) श्रावकजी थोड़ा बोलें-वाणी के माध्यम से ही हृदयगत विचार बाहर आते हैं। वचन को अन्तर हृदय के भाव व्यक्त करने का साधन माना जाता है। पर कहाँ, कितना, कब और कैसा बोलना चाहिए? इन प्रश्नों को सही समाधान से बोलना व्यक्तित्व का मापक है। ज्यादा बोलने वाले गड़रिये की कहानी तो सुनी ही होगी, जो मात्र मनोरञ्जन के लिए शेर आने का शोर बार-बार करता है। लेकिन जब हकीकत में शेर आता है और शेर आने का संकेत स्वर वह करता है तो कोई भी बचाने नहीं आता है। क्योंकि उस पर कोई विश्वास नहीं करता। यही ज्यादा बोलने तथा व्यर्थ बोलने का परिणाम रहा कि गड़रिया हकीकत में शेर के आने पर काल का ग्रास बन गया। श्रावक अधिक नहीं बोलता है, क्योंकि अधिक बोलने से असत्य बोलने की सम्भावना होती है और असत्य भाषा श्रावक के लिए त्याज्य है।

उत्तराध्ययनसूत्र के प्रथम अध्ययन की 10वीं गाथा में भी कहा गया है-**बहुयं मा य आलवे।** अर्थात् बहुत अधिक नहीं बोलना चाहिए।

श्रावक थोड़ा बोलने वाले होते हैं। वे वाचाल और बकवादी नहीं होते। वे निरर्थक, अनर्थक और नकारात्मक वचनों का उपयोग ही नहीं करते। आनन्द श्रावक, भगवान के श्रीमुख से सुनकर कितने सीमित शब्दों में प्रभु को अपनी भावना व्यक्त कर देते हैं- "भगवन्! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूँ, विश्वास करता हूँ, वह मुझे अच्छा लगता है। भगवन्! यह ऐसा ही है जैसा आपने कहा। निर्ग्रन्थ प्रवचन सत्य है, तथ्य है, यथार्थ है, मुझे अभीप्सित है, तथा अभिप्रेत है। मैं मुण्डित एवं प्रव्रजित होने में समर्थ नहीं हूँ। अतः

देवानुप्रिय ! मैं आपके पास पाँच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत स्वरूप द्वादशविध गृहस्थ धर्म को अङ्गीकार करना चाहता हूँ।'' ज्येष्ठ पुत्र को सारे कुटुम्ब का भार सम्भलाते समय मात्र दो पंक्तियों में सारा मोह ममत्व का त्याग कर साधना में रमण कर पुत्र को कहा-''आज से तुम कोई भी मुझको विविध कार्यों के सम्बन्ध में मत पूछना और न ही परामर्श करना तथा मेरे लिए अशन-पानादि तैयार मत करना और न मेरे पास लाना।'' ये कम शब्दों में सारा सार व्यक्त करने वाले श्रावक थे।

कामदेव श्रावक को भयंकर पिशाच, हाथी और सर्प का उपसर्ग आया, परन्तु धैर्यपूर्वक स्थिरता की साधना कर मौन पूर्वक सब सहन कर गये।

चूलनीपिता, सुरादेव, चुल्लशतक आदि ने अपने तीनों पुत्रों की हत्या को प्रत्यक्ष देखते हुए भी कर्मों की लीला समझ कर धैर्य रखकर किञ्चित् भी वचनों से प्रतिकार नहीं किया। क्योंकि वे कम बोलने वाले ही थे। धैर्यशील श्रावकों में ही यह गुण पाया जाता है।

श्रावकजी थोड़ा बोले, ये वचन व्यवहार हमें निम्न शिक्षाएँ प्रदान करता है-(1) जो नपा तुला बोलता है, उसे दुनिया याद रखती है। (2) एक बार बोलने से पहले दो बार सोचना चाहिए। (3) बहुत बोलने वाले व्यक्ति का लोग विश्वास नहीं करते। (4) सीमित शब्दों का प्रयोग व्यक्तित्व को विशेष बनाता है। (5) साधनाशील साधक का कम बोलना उसे अभीष्ट लक्ष्य प्राप्त करवा देता है। (6) असत्य पाप के सेवन से बचा जा सकता है।

(2) श्रावकजी आवश्यकता होने पर बोलें- अति आवश्यक सम्यक् वचन की प्रवृत्ति भाषा समिति कहलाती है। मौन रहना श्रेष्ठ है, परन्तु आवश्यकता होने पर सम्यक् वचन वागरण भी श्रेष्ठ वचन-प्रवृत्ति है। अशुभ वचनों को त्याज्य मानकर उनका निग्रह करना, वचन पर नियन्त्रण रखना वचन गुप्ति है। इस प्रकार श्रावक भाषा समिति और वचन गुप्ति द्वारा आवश्यकतानुसार ही बोलता है। उत्तराध्ययनसूत्र के 29वें अध्ययन के 54वें सूत्र में वचनगुप्ति द्वारा लक्ष्य प्राप्ति को बताया है-

वयगुत्तयाए णं निव्वियारत्तं जणयइ।

अर्थात् वचन गुप्ति से निर्विकार या निर्विचार स्थिति प्राप्त होती है। निर्विचार या निर्विकार होने के लक्ष्य से ही श्रावक अशुभ वचनों का निग्रह कर आवश्यकता होने पर भी सम्यक् वचनों का ही प्रयोग करते हैं। आनन्द आदि दसों ही श्रावकों ने साधना करते हुए साढ़े पाँच वर्ष तक एकान्त में रहकर किसी को सलाह देना, वचन व्यवहार रखना आदि को छोड़कर प्राय: मौन रखकर एक आदर्श उपस्थित किया।

कामदेव तथा कुण्डकौलिक श्रावकों के समक्ष भगवान महावीर ने जब सभी साधु-साध्वियों से कामदेव की समता और कुण्डकौलिक के शास्त्र ज्ञान की प्रशंसा की तब भी केवल भगवान के शब्दों की सत्यता को दर्शाते हुए मात्र इतना ही बोले-''हाँ, भगवन्! आपने जो फरमाया है, वह ठीक है।'' भगवान के द्वारा स्वयं का उत्कृष्ट वृत्तान्त सुनने के बाद भी अति आवश्यक होने वाले शब्दों का ही प्रयोग किया।

महाशतक श्रावक के प्रसङ्ग में माँस तथा मदिरा में आसक्त और कामवासना से उन्मत्त होकर रेवती पौधषशाला में महाशतक के पास पहुँची। उसके बाल बिखरे हुए थे और साड़ी नीचे गिर रही थी। वहाँ पहुँचकर वह हाव-भाव तथा शृङ्गारिक चेष्टाएँ करती हुई महाशतक से बोली-''हे देवानुप्रिय ! तुम मेरे साथ मन-माने भोगों का आनन्द ले रहे थे। उन्हें छोड़कर यहाँ चले आए और स्वर्ग तथा मोक्ष की कामना से धर्म और पुण्य का सञ्चय करने लगे। किन्तु स्वर्ग और मोक्ष में इससे बढ़कर क्या मिलेगा ?'' महाशतक गाथापति ने रेवती की कुचेष्टाओं और बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया और मौन रहकर धर्मध्यान-धर्मानुष्ठान में लगा रहा। तब गाथापत्नी रेवती ने महाशतक श्रावक को दूसरी तथा तीसरी बार भी वही बात कही, किन्तु महाशतक पहले की भाँति ध्यान में स्थिर रहा। रेवती गाथापत्नी तिरस्कृत होकर जहाँ से आई थी उधर ही वापस चली गई। यह प्रसङ्ग दर्शाता है कि महाशतक जी

शान्त रहे, उन्होंने एक शब्द भी रेवती को नहीं कहा। वे जानते थे कि इस मदहोश अवस्था में इसको कुछ भी कहना आवश्यक नहीं है।

इस वचन-व्यवहार से भी शिक्षाएँ प्राप्त होती हैं- (1) आवश्यकता से अधिक बोलने से विवाद की सम्भावना रहती है। (2) जो भी बोला जाता है वह फसल बोना है, अत: चुने हुए शब्दों का ही प्रयोग हो। (3) समय देखकर बोलने वाला समयज्ञ बन जाता है। (4) कलह का मूल अनावश्यक वचन प्रयोग है।

(3) श्रावकजी इष्ट, मिष्ट तथा पथ्य वचन बोलें-इष्ट = जो सभी को प्रिय हो, मिष्ट = मधुर और पथ्य = हितकारी। श्रावक प्रिय, मधुर और हितकारी वचनों का प्रयोग करने वाला होता है। जो बात तथ्यकारी, पथ्यकारी, प्रियकारी होती है उसे सत्य भाषा के नाम से अभिहित किया है। चाणक्य नीति में कहा है-

सत्यपूतां वदेद् वाणीम्।

सत्य (इष्ट, मिष्ट और पथ्य) से पवित्र जो वचन है, उसे ही प्रयोग में लाना चाहिए। प्रिय, मधुर और पथ्य वचनों का प्रयोग सामने वाले व्यक्ति की नज़रों में आपका स्थान उच्च कर देता है। आपके व्यक्तित्व की पहचान भी विशेष बनती है। छोटे-छोटे दोहों के माध्यम से मधुर भाषा की महत्ता बतलायी गयी है-

कागा किसका धन हरे, कोयल किसको देत।
मीठे वचन सुनाय के, जग अपना कर लेत।।
मधुर वचन है औषधि, कटु वचन है तीर।
देखन में छोटे लगे, घाव करे गम्भीर।।
ऐसी वाणी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय।।

झगड़ा दो व्यक्तियों अथवा पक्षों के बीच होता है तो दोनों उलझ जाते हैं। उनको श्रावक समझा बुझाकर शान्त करने वाले थे। अपराधी को आत्मीयतापूर्वक अपराध के दोष बताते थे, ताकि वह भविष्य में अपराध नहीं करे।

सभी आनन्दादि श्रावकों ने अपनी पत्नियों को भगवान के सभी जीवों के लिए हितकारी, प्रियकारी, मधुर वचनों से अवगत कराया और आत्मकल्याण में बढ़ने की ओर प्रेरित किया।

महाशतकजी श्रावक के इस वचन व्यवहार को सुरक्षित नहीं रख सके तो उन्हें तत्काल प्रायश्चित्त ग्रहण कर शुद्धि करनी पड़ी, अन्यथा विराधक होने की सम्भावना बनी रहती।

इष्ट, मिष्ट और पथ्य वचन बोलने से भी अनेक शिक्षाएँ प्राप्त होती हैं-(1) मधुर वचन, व्यक्ति को संसार में लोकप्रिय बनाते हैं। (2) किसी का अहित करने वाले वचन अशुभ कर्मों का बँध करते हैं। (3) जिसके कहने से पछताना पड़े, वह बात मत कहो। (4) सुखद, मधुर वचन व्यक्त करने वालों के पास दु:ख, दारिद्र्य कभी नहीं आता। (5) मधुर वचन औरों के दिलों में प्यार और जिज्ञासा का झरना बहाता है।

(4) श्रावकजी अवसरानुकूल चतुराई पूर्वक बोलें-जिह्वा जन्म से मिलती है, परन्तु व्यक्ति उसके सदुपयोग की कला जीवन के अन्त समय तक भी सीख जाए यह जरूरी नहीं है। कोई व्यक्ति ''अरिहन्त नाम सत्य है'' जैसे वाक्य का उपयोग अगर अवसर के अनुरूप न करके भोग एवं हर्ष के समय करे तो उचित नहीं होता है। अवसर के अनुकूल चतुराई पूर्वक बोलने से यश में वृद्धि होती है वैसे भी श्रावक को द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव के अनुसार सारा व्यवहार करना चाहिए। अवसर के अनुकूल चतुराई पूर्वक नहीं बोलने से कलह-क्लेश की सम्भावना बढ़ जाती है।

रहिमन जिह्वा बावरी, कह गई सरग पाताल।
आपहु कह भीतर गई, जूती खाय कपाल।।

सद्दालपुत्र कुम्भकार श्रावक के चतुराईपूर्वक मंखलिपुत्र गोशालक को कहे शब्द-सिद्धान्त का रक्षण भी कर गये और व्यवहार में हीलना भी नहीं हुई। सद्दालपुत्र पुत्र ने गोशालक को कहा-''हे देवानुप्रिय चूँकि तुमने मेरे धर्माचार्य श्रमण भगवान महावीर का सत्य, तथ्य तथा सद्भूत गुणकीर्तन किया है, इसलिए मैं

तुम्हें प्रातिहारिक पीठ, फलग, शय्या और संस्तारक के लिए उपनिमन्त्रित करता हूँ, यद्यपि मैं इसमें धर्म और तप नहीं मानता।'' जिनशासन कितना महान् है। अनुकम्पावश भी दान, प्रातिहारिक वस्तुओं को देने का विधान यहाँ से ध्वनित हो रहा है। यद्यपि इसमें धर्म और तप नहीं, तथापि पुण्य तो होता ही है। सत्कार-सम्मान नहीं देते हुए भी उपनिमन्त्रित किया। श्रावक के विवेक सहित व्यवहार की सुन्दर झाँकी इससे मिलती है। अवसर के अनुकूल चतुराई पूर्वक बोलने का उत्कृष्ट उदाहरण सद्दालपुत्र श्रावक ने हमारे समक्ष रखा।

शिक्षाएँ-(1) शब्द यदि सही समय पर, सही बात के लिए, सही तरीके से प्रस्तुत हो तो सफलता लगभग तय है। (2) बिना अवसर तथा बिना सोचे बोले गये स्वर्ण तुल्य शब्द भी कंकरवत् होते हैं। (3) सम्यक् निरूपण करने में भी चतुराई पूर्वक वागरण आवश्यक होता है। (4) अवसरज्ञ बनने से मन की प्रसन्नता वृद्धिगत होती है। (5) चतुराई का उपयोग शासन एवं धर्म की रक्षा में होना श्रेयस्कर है।

(5) श्रावकजी अहंकार रहित वचन बोलें- विनय धर्म का मूल है। विनयपूर्वक बोले गये वचन सभी के स्वयं में सहजता से प्रवेश कराने वाले होते हैं। अहंकार युक्त भाषा सत्य भाषा होते हुए भी कर्मबन्ध कारक है। सत्य, सरलता (विनयता) से प्रतिष्ठित होता है न कि अभिमान से। ठाणांगसूत्र के चौथे ठाणे में सत्य भाषा का आधार बताया है-''**चउव्विहे सच्चे पण्णत्ते तंजहा-काउज्जुयया, भासुज्जुयया, भावुज्जुयया अविसंवायणा जोगे।**''

जीवन में सत्य चार प्रकार से प्रतिष्ठित होता है- काया की सरलता से, भाषा की सरलता से, भावों की सरलता से और अविसम्वादिता (परस्पर विरुद्ध वचन या विसंगति नहीं होने) से।

भाषा के उपयोग में सरलता, विनय और विवेकशीलता अनिवार्य हैं। अहंकार सुज्ञ-विज्ञों की भाषा में खरास उत्पन्न करता है। अभिमानी के हृदय में ज्ञान का निवास नहीं होता, अपितु जानकारी ही रहती है और वह उससे अपने आपको सन्तुष्ट करता रहता है।

अभिमानी के हृदय में, ज्ञान न करता धाम।
फटी जेब में क्या कभी, रह सकते हैं दाम।।

आनन्दादि श्रावकों के वचनों में सरलता एवं विनय का रस सम्मिलित रहता है। आनन्द का पडिपुच्छणिज्जे गुण भी यही दर्शाता है। एक बार पूछा और काम पार नहीं पड़ा तो अनेक विषय ऐसे होते हैं जिनमें बार-बार भी पूछना पड़ता है। आनन्द गाथापति को बार-बार भी पूछा जाता था, तब भी वे नाराज नहीं होते थे, अगले व्यक्ति को अल्पबुद्धि या नादान नहीं समझते थे। धैर्य और शान्ति से रास्ता बताते, उस पर चलाते और बार-बार पूछने पर भी सही सलाह देते थे।

जब गौतम स्वामी आनन्द श्रावक की पौषधशाला में आते हैं तो आनन्द द्वारा किया गया निवेदन-''हे भगवन्! मैं उग्रतपस्या के कारण अतीव कृश हो गया हूँ, किं बहुना, सारा शरीर उभरी हुई नाड़ियों से व्याप्त हो गया है। अत: देवानुप्रिय के समीप आने तथा तीन बार मस्तक झुकाकर चरणों में वन्दना करने में असमर्थ हूँ। भगवन्! आप ही स्वेच्छापूर्वक बिना किसी दबाव के मेरे पास पधारिए, जिससे देवानुप्रिय के चरणों में तीन बार मस्तक झुकाकर वन्दना कर सकूँ।''

विनय का उदाहरण कि ग्यारहवीं श्रमणभूत प्रतिमा में आराधक भी सन्तों की वन्दना करने हेतु असमर्थ होते हुए भी उत्साह से तत्पर हैं। अहंकार रहित वचनों से आप्लावित भाषा व्यवहार आनन्द श्रावक का था। अहंकार रहित भाषा प्रयोग से शिक्षाएँ प्राप्त होती हैं- 1) उच्च शब्द भी अहंकारपूर्वक होने पर निष्प्रभावी रहते हैं। 2) अहंकार के कारण जीव का स्वाभाविक विनय गुण आच्छादित हो जाता है। 3) विनयशील सभी को प्रिय लगता है और प्रशंसा पात्र होता है। 4) अहंकार विनाश का हेतु है। 5) विनय पूर्वक सत्य प्रकट करने में किसी भी पूज्य पुरुष की आशातना नहीं होती है।

(6) श्रावकजी मर्मभेदी तथा आघातकारक

वचन न बोलें–मर्मभेदी वाक्य बोलना भी असत्य की कोटि में ही आता है। किसी की गुप्त बात का उद्घाटन करना, किसी के कलेजे में तीर भौंकना ये सब कटुवचन होने से असत्य की गणना में ही आते हैं। मर्म–वचन मन में कसक पैदा करते हैं और उन वचनों से संसार में कितना भयंकर अनर्थ हो जाता है। कोई फाँसी खाकर मर जाता है, कोई ज़हर खाकर मरता है तो कोई जलाशयों या नदी में डुबकी लगाकर मर जाता है। ये मर्मभेदी शब्द शूल की तरह चुभते हैं और मानव मस्तिष्क में प्रतिशोध की ज्वाला भभका देते हैं।

मर्मभेदी शब्दों का प्रयोग प्रतिष्ठा को धूमिल कर देता है तथा विश्वास को समाप्त कर देता है। भगवतीसूत्र शतक 5 उद्देशक 6 में इस प्रकार मर्मभेदी या झूठा आरोप लगाने से बँधने वाले कर्म को निकाचित कर्म कहा है। इस अलीक वचन रूप पाप का भोग जैसा बाँधा है वैसा ही भोगना पड़ता है। जो सामने वाले के लिए कष्टप्रद हैं ऐसे वचन श्रावक के बोलने योग्य नहीं हैं। उपासकदशाङ्ग में आनन्द श्रावक को लक्ष्य करके श्रावक के गुणों को बताया गया है।

जो अत्यन्त गम्भीर प्रकृति का हो, बात अपने तक रखने वाला हो, बाहर किसी को भी नहीं कहने वाला हो, बात प्रकट हो जाय तो अनेक अनर्थ हो जाए– ऐसे गोपनीय विषयों में आनन्द से पूछा जाता था। जैसे कुएँ में पत्थर डाला गया तो वह कभी भी अपने आप कुएँ से बाहर नहीं आयेगा उसी प्रकार गुप्त रहस्यों को पचाने वाले आनन्दादि श्रावक थे।

श्रावक महाशतक द्वारा अपनी पत्नी पर रोषवश कहे मर्मकारी शब्द भी श्रावकोचित वचन व्यवहार के अनुरूप नहीं हैं। महाशतक जी रेवती द्वारा किये जा रहे दु:शील व्यवहार से क्षुभित होकर वे कहते हैं–''तू सात दिन के अन्दर अलसक रोग से पीड़ित होकर कष्ट भोगती हुई मर जाएगी और लोलुपाच्युत नरक में उत्पन्न होगी।'' श्रावकपने में संथारा युक्त महाशतक जी द्वारा कहे ये शब्द योग्य नहीं थे। इसीलिए भगवान द्वारा उन शब्दों के लिए प्रायश्चित्त–आलोचना हेतु कहा गया।

जिनशासन में कष्ट प्रदान करने वाले अनिष्ट, अप्रिय, क्रोधयुक्त वचनों का प्रयोग कर्मबन्ध कारक माना गया है। इस कारण मर्मकारी, आघातकारक शब्दों का प्रयोग कदापि उचित नहीं है। इस बोल से प्राप्त शिक्षाएँ हैं–(1) दूसरों को दु:ख हो ऐसे शब्द साधना से च्युत करा सकते हैं। (2) मर्मकारी वचनों का प्रयोग जीव हत्या कराने वाला भी हो सकता है। (3) अनेक रहस्यों को जानकर भी जिसको प्रकट करने से हानि हो ऐसे व्यक्ति को गम्भीर बने रहना चाहिए। (4) दूसरे व्रत मृषावाद विरमण व्रत की सम्यक् आराधना ऐसे वचनों के प्रयोग को त्यागने से ही होती है। (5) सुलझे वचनों का प्रयोग करने वालों का ही सुलझा व्यक्तित्व होता है।

(7) श्रावकजी सूत्र–सिद्धान्तानुसार न्याय युक्त वचन बोलें–वस्तु के वास्तविक स्वरूप को प्रकट करने का माध्यम भाषा है। साधक को जब भी बोलना हो निरवद्यभाषा का ही प्रयोग करे, क्योंकि निरवद्यभाषा ही आगम में प्रयोक्तव्य बताई है। भूल–भटककर भी सावद्यभाषा नहीं बोलना चाहिए। दशवैकालिकसूत्र के सातवें अध्ययन की बारहवीं गाथा बताती है कि जो भाषा पर–पीड़ाकारी है, कठोर है, सावद्य है और क्लेशवर्धक है ऐसी भाषा सत्य होने पर भी व्रतधारी श्रावक कभी नहीं बोले।

तहेव काणं काणेत्ति, पंडगं पंडगेत्ति वा।
वाहियं वावि रोगित्ति, तेणं चोरत्ति नो वए।

जैसे काणे को काणा कहना, नपुंसक को हीजड़ा कहना, रोगी को रोगी कहना एवं चोर को चोर कहना शास्त्र निषिद्ध है, क्योंकि ये भाषाएँ सत्य होने पर भी दु:ख उत्पन्न करने वाली हैं, अतः ऐसी वाणी नहीं बोलनी चाहिए। शास्त्रकारों ने समझाया है कि जिस भाषा को बोलने से जीवन में पाप का आगमन होता है, ऐसी भाषा नहीं बोलनी चाहिए।

उपासकदशाङ्गसूत्र के सभी श्रावक सूत्र–सिद्धान्त के ज्ञाता एवं विशारद थे। उनके वचन शास्त्र–सिद्धान्त

के अनुरूप होते थे। आनन्द श्रावक के अध्याय में श्रावक का गुण निच्छएसु इसका प्रदर्शन करता है। वे फैसले देने में बड़े ही न्यायनिपुण एवं विचक्षण थे। उनका न्याय लोहे की लकीर हुआ करता था। उस पर कोई संशय उठाने की गुञ्जाइश ही नहीं बचती थी। क्योंकि वे तटस्थ दृष्टि वाले एवं पक्षपात से परे थे। विवादग्रस्त विषयों में दोनों पक्षकारों को सत्य तथ्य से अवगत करा कर अपनी भूलें बताकर वे समीचीन न्याय करते थे।

कुण्डकौलिक शास्त्रविहित समाधान के पक्षधर थे। कुण्डकौलिक के शास्त्र आधारित हेतु एवं दृष्टान्तपूर्वक देव को दिये उत्तर ने देव को निरुत्तर कर दिया। कुण्डकौलिक ने नियतिवाद की मान्यता का खण्डन कर जिन सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया। कुण्डकौलिक ने नियतिवाद प्ररूपक देव से कहा–''हे देव ! यदि मंखलिपुत्र गोशालक की धर्मप्रज्ञप्ति समीचीन है, क्योंकि उसमें उत्थान नहीं है, यावत् सब पदार्थ नियत हैं तो हे देव ! तुम्हें यह दिव्य-अलौकिक देव ऋद्धि, अलौकिक कान्ति, अलौकिक अनुभाव कहाँ से मिला ? कैसे प्राप्त हुआ ? और कैसे समन्वागत हुआ ?

देव ने उत्तर दिया, हे देवानुप्रिय ! ''मुझे यह अलौकिक देव ऋद्धि बिना उत्थान, पुरुषाकार-पराक्रम के मिली है।''

''हे देव ! यदि तुम्हें इस प्रकार की अलौकिक देव ऋद्धि उत्थान यावत् पुरुषाकार/पुरस्कार-पराक्रम के बिना ही मिली है, तो जिन जीवों के उत्थान यावत् पराक्रम नहीं है तो वे देव क्यों न बने ? हे देव ! यदि तूने यह ऋद्धि उत्थान यावत् पराक्रम से प्राप्त की है, तो तुम्हारा यह कथन मिथ्या है कि मंखलिपुत्र गोशालक की धर्मप्रज्ञप्ति समीचीन है। कुण्डकौलिक के इस प्रकार कहने पर देव के मन में शङ्का उत्पन्न हो गई यावत् वह हतप्रभ हो गया और कुण्डकौलिक श्रमणोपासक को कुछ भी उत्तर न दे सका।

इस प्रकार शास्त्र विहित न्याययुक्त वचन का प्रयोग श्रावकों का वचन व्यवहार का अभिन्न अङ्ग रहता है। इस वचन व्यवहार की शिक्षाएँ हैं-(1) प्रत्यक्ष, हेतु एवं दृष्टान्तपूर्वक शास्त्र सिद्धान्त को सिद्ध करने से जिनशासन की प्रभावना होती है। (2) विवाद शास्त्र से विपरीत, अल्प बोलने से उत्पन्न होता है। (3) पुरुषाकार पराक्रम के माध्यम से कार्य की निष्पन्ति होती है। (4) शास्त्र वचनों का प्रयोग करना भगवान की वाणी का आराधन करना है। (5) शास्त्रीय समाधान ही श्रेष्ठ समाधान देता होता है।

(8) श्रावकजी सब जीवों के लिए हितकारी एवं प्रियवचन बोलें–राजप्रश्नीयसूत्र में बताया है कि सूर्याभ देव ने इतनी ऋद्धि जो भी प्राप्त की है वह पूर्व भव श्रावकपने में सभी जीवों के हिताकांक्षी तथा सुखाकांक्षी होने के कारण प्राप्त की है। जो भाषा प्रियता से रहित हो, कोमलता रहित हो और अहितकारी हो, ऐसी भाषा नहीं बोलना चाहिए। संस्कृत के विद्वानों ने कहा है–

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
प्रियं तु नानृतं ब्रूयात्, एष धर्मः सनातनः।

सत्य और प्रिय बोलना चाहिए, अप्रिय सत्य नहीं बोलना चाहिये। प्रिय झूठ भी नहीं बोलना चाहिये, यही धर्म ध्रुव एवं शाश्वत है।

श्रावकों के वचन सभी जीवों के लिए हितकारक होते हैं, क्योंकि अहितकारी-सावद्यभाषा श्रावकों के लिए अकल्पनीय भाषा है। अहितकारी सावद्यभाषा आठ प्रकार की कही है-1. कठोर, 2. कर्कश, 3. छेदक, 4. भेदक, 5. निश्चयकारी, 6. सावद्य, 7. क्लेशोत्पादक और मिश्र। यह सर्वथा प्रकार से त्याज्य भाषा है। दोहे में भी कहा है–

कुदरत को नापसन्द है, सख़्ती ज़बान में।
इसलिए दी ही नहीं, हड्डी ज़बान में।

दशवैकालिकसूत्र के 7वें अध्ययन की 11वीं गाथा कहती है–

तहेव फरुसा भासा, गुरुभूओवघाइणी।
सच्चा वि सा न वत्तव्वा, जओ पावस्स आगमो।।

अर्थात् पूर्वोक्त सदोष भाषा की तरह जो कठोर भाषा बहुत से जीवों का उपमर्दन करने वाली हो, वैसी भाषा सत्य होकर भी बोलने योग्य नहीं होती, क्योंकि उससे पापकर्म का बन्ध होता है। कठोर भाषा से परस्पर का प्रेम भङ्ग हो जाता है।

शिक्षाएँ–(1) हितकारी वचन बोलने से कर्मों की निर्जरा होती है। (2) जो सभी को प्रिय हो, वे शब्द बोलने वाला व्यक्ति दिल में स्थान बनाता है। (3) हितकारी और प्रियकारी वचन बोलने वाले का वचन-व्यवहार शुद्ध होता है। (4) वचन के दोषों का त्याग करके वचन प्रयोग करने से ही अमूल्य साधन वचन के मिलने की सार्थकता है। (5) हितकारक वचन प्रसिद्धि कराने वाले होते हैं।

उपसंहार

श्रावक आचार-विचार की उच्चता का परिचायक शब्द है। श्रावक के जीवन में दुराव और छिपाव नहीं होता है, उसका मन्तव्य होता है-जो बात कहो साफ-सुथरी हो, भली हो, कड़वी न हो, खट्टी न हो, मिश्री की डली हो। श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. के शब्दों में-

मधुर व्यवहार हो अपना, मधुरता हो वचन में।
टूटे ना दिल किसी का, बसे वो प्रेम मन में।।
क्षमा का पाठ पढ़ा है, अभी सहना है बाकी।
गुरु ने राह दिखाई, अभी चलना है बाकी।।टेर।।

श्रेष्ठ श्रावकों का वचन व्यवहार भाषा के सभी दोषों से परे और गुणों से युक्त होता है। सभी श्रावक 'अप्पणा सच्चमेसेज्जा' अर्थात् सत्य की खोज करने वाले होते हैं।

श्रावक थोड़ा बोलने वाले होते हैं, लेकिन लक्ष्य तो वचन योग की प्रवृत्ति का निरोध करना होता है। श्रावक आवश्यकता होने पर बोलने वाले होते हैं, पर लक्ष्य तो बोलने की आवश्यकता को ही समाप्त करना होता है। इष्ट, मिष्ट, पथ्य वचन बोलने वाले होते हैं, पर लक्ष्य तो ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, साध्य केवलज्ञान को पाना होता है। श्रावक चतुराईपूर्वक बोलने वाले होते हैं, पर लक्ष्य तो मोक्षमहल पर चढ़ना होता है। श्रावक अहंकार रहित बोलने वाले होते हैं, पर लक्ष्य तो विनम्रता की अगाधता से सिद्धि पद पाना होता है। श्रावक मर्मकारी वचनों का प्रयोग नहीं करने वाले होते हैं, पर लक्ष्य तो धर्म प्रेक्षी बन निष्कर्म बनना होता है। श्रावक सूत्र-सिद्धान्तानुसार बोलने वाले होते हैं, पर लक्ष्य तो राग-द्वेष की गाँठ का अन्त कर सिद्ध बनना होता है। श्रावक हितकारी, प्रियकारी बोलने वाले होते हैं, पर लक्ष्य तो उत्तमकारी, मंगलकारी पद को प्राप्त करना होता है।

वस्तुतः श्रावक को 'जयं भासे' का सिद्धान्त अपनाकर अपना जीवन आत्मकल्याणार्थ समर्पित करना चाहिए और यही मनोरथ अन्तर्हृदय से भाना चाहिए कि-''वह दिन धन्य होगा जब मैं वचन वर्गणा के पुद्गलों से अनाश्रित रह, वचन योग का अन्त करके अभाषक बनूँगा।''

उक्त लेख में शास्त्र विपरीत लिखने में आया हो तो मिच्छा मि दुक्कडं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. उपासकदशाङ्गसूत्र-आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा., प्रकाशक-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर।
2. प्रज्ञापनासूत्र-युवाचार्य श्री मधुकरमुनिजी म.सा., प्रकाशक-श्री आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर।
3. प्रश्नव्याकरणसूत्र-आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा., प्रकाशक-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर।
4. स्थानाङ्गसूत्र-युवाचार्य श्री मधुकरमुनिजी म.सा., प्रकाशक-श्री आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर।
5. उत्तराध्ययनसूत्र-आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा., प्रकाशक-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर।
6. बृहत्कल्पसूत्र-आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा., प्रकाशक-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर।
7. दशवैकालिकसूत्र-आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा., प्रकाशक-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर।
8. जैनदर्शन और अनेकान्त-आचार्य श्री महाप्रज्ञजी म.सा., प्रकाशक-आदर्श साहित्य संघ प्रकाशन, नई दिल्ली।

-शोध छात्र, 37/67, रजतपथ, मानसरोवर, जयपुर-302020 (राज.) 9694430826

10 मार्च 2021
जिनवाणी 41
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

व्यावहारिक जीवन के नीति वाक्य (3)

श्री पी. शिखरमल सुराणा

9. कोई इतना अमीर नहीं होता कि वह अपना बीता हुआ वक्त खरीद सके, और कोई इतना गरीब भी नहीं होता कि स्वयं अपने आने वाले समय को न बदल सके। जो घटनाएँ घटित हो चुकी हैं, वे चाहे शुभ रही हों या अशुभ, अच्छी या बुरी,लाख प्रयास करके भी उनको बदला नहीं जा सकता। कोई कितना भी पराक्रमी, बलवान, बाहुबली या धनवान क्यों न हो, गुजरे वक़्त को कोई भी वापस नहीं ला सकता, और न ही उस समय घटित हुई घटनाओं में कोई बदलाव ही ला सकता है। किन्तु जो अभी घटित नहीं हुआ, जो अभी लिखा या कहा ही नहीं गया, उस पर तो अभी हमारा नियन्त्रण है। भविष्य को तो अभी सम्भाला एवं संवारा ही जा सकता है। कोई कितना भी निर्बल, निर्धन और असहाय क्यों न हो, उससे स्वयं उसका भविष्य लिखने एवं सवांरने का अधिकार तो कोई भी नहीं ले सकता। अब यह स्वयं उस पर ही निर्भर करता है कि वह अपने लिए किस तरह का तथा कैसा भविष्य लिखना चाहता है।

10. साधारणतः मनुष्य का स्वभाव यही है कि वह जिस स्थिति में है, बस उसी में बने रहना चाहता है, उसमें परिवर्तन नहीं चाहता। उसको उस स्थायित्व में ही सुख एवं सुविधा का अनुभव होता है। किन्तु सत्य यह है कि यदि प्रगति की राह पर आगे बढ़ना है, यदि जीवन में नए लक्ष्यों को हासिल करना है तो वर्तमान स्थिति में सम्यक् परिवर्तन आवश्यक है। स्थायित्व का मोह छोड़ना ही होगा। यदि नदी पार करनी है, एवं समुद्र की गहराई को नापना है, तो किनारों का मोह त्यागना ही होगा। एक स्थिति में रह कर सिर्फ कूपमंडूक (कुंए के मेंढ़क) ही बने रह सकते हैं। परिवर्तन को स्वीकार कीजिये और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ते रहिए।

11. जिस समय जिस काम के लिए प्रतिज्ञा करो ठीक उसी समय पर उसे पूरा करना ही चाहिए, नहीं तो लोगों का आप पर से विश्वास उठ जाएगा। आपकी विश्वसनीयता आपकी एक ऐसी पूँजी है, जिससे आपको सम्मान मिलता है। अपनी विश्वसनीयता बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि हम कोई भी प्रतिज्ञा अथवा संकल्प लेने के बाद उसे पूरी प्रतिबद्धता के साथ निभायें। यह समाज हमको धिक्कारने, प्रताड़ित करने और दोषी साबित करने के लिए हमारी सिर्फ एक गलती तथा लापरवाही की प्रतीक्षा करता है। हम अपना भरसक प्रयास करें कि किसी को भी यह अवसर ही न मिले। इसके लिए आवश्यक है कि हम अपनी की गई प्रतिज्ञाओं, वादों एवं संकल्पों को पूरी ईमानदारी एवं शिद्दत से दी गई समयावधि में निभायें।

12. हमें जो कुछ भी आकर्षक और सुन्दर दिखता है, वह सदैव सत्य एवं श्रेष्ठ भी हो यह आवश्यक नहीं है। हर चमकती हुई धातु...सोना अथवा चाँदी ही हो, यह आवश्यक नहीं है। किन्तु जो कुछ भी सत्य एवं श्रेष्ठ है, सरल है, वह सदैव ही दुर्लभ, मूल्यवान्, आकर्षक एवं विशिष्ट ही होगा यह सर्वमान्य सत्य है। अतः जीवन में हमेशा उन लोगों के प्रति ही आकर्षित हों, तथा उन लोगों को ही पसन्द करें, जिनकी सोच और मन सरल, सत्य, पारदर्शी एवं श्रेष्ठ है तथा जिन लोगों के चेहरे से अधिक उनके विचार, चरित्र और संस्कार आकर्षक एवं सुन्दर हैं। अन्तर्मन की सुन्दरता से बढ़ कर कुछ भी सुन्दर एवं आकर्षक नहीं हो सकता।

10 मार्च 2021
जिनवाणी 42
ISSN 2249-2011

चिन्तन

बारह भावना की उपयोगिता

श्री लड्डूलाल जैन (देवली वाले)

भावना एवं अनुप्रेक्षा–पर्यायवाची शब्द हैं। किसी वस्तु या विषय का बार-बार चिन्तन करना अनुप्रेक्षा कहलाता है। द्वादश अनुप्रेक्षाओं को बारह भावना भी कहते हैं। ये बारह भावनाएँ संसार, देह और भोगों से वैराग्य उपजाने वाली हैं तथा तत्त्व और धर्म-ध्यान की कारण हैं।

संसार से वैराग्य अथवा उदासीनता के बिना धर्म-ध्यान और तत्त्वाभ्यास में लगना सम्भव नहीं है।

मुनि सकलव्रती बड़भागी, भव भोगनतै वैरागी।
वैराग्य उपावन माई, चिन्ते अनुप्रेक्षा भाई।।
इन चिन्तत सम सुख जागे, जिमि ज्वलन पवन के लागै।
जब ही जिय आतम जाने, तब ही जिय शिव सुख ठाने।।

–छह ढाला (पाँचवीं ढाल)

भावार्थ–जिस प्रकार कोई माता पुत्र को जन्म देती है, उसी प्रकार से बारह भावनाएँ वैराग्य उत्पन्न करती हैं इसलिए मुनिराज इन बारह भावनाओं का निरन्तर चिन्तन करते हैं।

जिस प्रकार वायु लगने से अग्नि एकदम भभक उठती है, उसी प्रकार इन बारह भावनाओं का चिन्तन करने से समता रूपी सुख शान्ति प्रकट हो जाती है।

जब यह जीव अपनी आत्मा को जानता है, पहचानता है, और उसी में रम जाता है, तब ही अतीन्द्रिय आनन्द की परिपूर्ण दशा मुक्ति को प्राप्त करता है।

इन बारह भावनाओं का निरन्तर अभ्यास करने से, पुरुषों के हृदय में कषाय रूप अग्नि बुझ जाती है तथा पर द्रव्यों के प्रति राग-भाव गल जाता है और अज्ञान रूपी अन्धकार का विलय होकर दीपक का प्रकाश होता है।

बारह भावनाएँ जीवन में एक बार पढ़ लेने की वस्तु नहीं है, अपितु प्रतिदिन पढ़ने, विचारने, चिन्तन करने, मनन करने की अलौकिक सामग्री है। आध्यात्मिक धार्मिकजनों का यह सर्वाधिक लोकप्रिय मानसिक भोजन है। भूतकाल में जितने भी श्रेष्ठ पुरुष सिद्ध हुए हैं और भविष्य में भी जो भव्य जीव सिद्ध होंगे, यह सब इन बारह भावनाओं का ही माहात्म्य है।

बारह भावनाओं के क्रमानुसार नाम इस प्रकार है-1. अनित्य-भावना, 2. अशरण-भावना, 3. संसार-भावना, 4. एकत्व-भावना, 5. अन्यत्व-भावना, 6. अशुचि-भावना, 7. आस्रव-भावना, 8. संवर-भावना, 9. निर्जरा-भावना, 10. लोक-भावना, 11. बोधिदुर्लभ-भावना और 12. धर्म-भावना।

उपर्युक्त भावनाओं में आरम्भ की छह भावनाएँ वैराग्योत्पादक और अन्त की छह भावनाएँ तत्त्व परक हैं, प्रत्येक के क्रम में भी एक सहज विकास दृष्टिगोचर होता है। विषय-कषाय की पूर्ति के लक्ष्य से किया गया चिन्तन अनुप्रेक्षा नहीं, चिन्ता है, जो चिता से भी अधिक दाहक होती है। पण्डित टोडरमलजी का निम्नाङ्कित कथन द्रष्टव्य है–

"अपना और शरीरादिक का जहाँ जैसा स्वभाव है, वैसा पहचानकर, भ्रम को मिटाकर, भला जानकर राग नहीं करना और बुरा जानकर द्वेष नहीं करना। ऐसी सच्ची उदासीनता के अर्थ, यथार्थ अनित्यत्व आदि का चिन्तन करना ही सच्ची अनुप्रेक्षा (भावना) है।"

सभी साधर्मीजन बारह भावनाओं का सच्चा स्वरूप समझकर अपना आत्महित करें ऐसा निवेदन है।

-139, महावीर नगर, इन्दौर (म.प्र.)

10 मार्च 2021
जिनवाणी 43
ISSN 2249-2011

English-section

Jain History, Philosophy, Beliefs and Practice

Dr. H. Kushal Chand

(Continue)

Economic Context of the Sixth Century BCE

The new cities gave up moats and ramparts, and the urban economy began to grow for three reasons. First, the use of iron brought remarkable changes as it was used for making weapons for the warriors, enabling them to consolidate their position and to expand their Kingdoms towards eastern Uttar Pradesh and Bihar. This also led to the growth of an agriculture economy, as iron tools enabled societies to clear forest, leaving way for arable lands. Second, the agriculture-oriented economy increased the significance of cattle wealth, as cattle played an important role in agricultural operations, such as improving the quantum of agriculture produce. Hence the common people and the newly emerging religious movements both opposed Vedic practice of animal sacrifice. Third, the growth of commerce and trade, both inland as well as foreign, enhanced the importance of the Vaishyas in society, as they made fortunes by trading in articles such as silk, muslin, cutlery, armor, brocades, embroidery, rugs, perfumes, medicines, ivory and jewelry. The Vaishyas wanted to improve their social status, because they were ranked in the third position in the *Varṇa*-centered society. Thus, both the Kshatriyas and Vaishyas had an economic and political interest in opposing the killing of animals. This caused conflict between the Brahmanas caste and the Kshatriyas. Slowly and steadily, the Kshatriyas and Vaishyas contested the Brahmanas claim to supremacy. Not only did the two revolting section resent Brahmanical dominance, but through the *Śramaṇa* movements they also sought a way out of disabilities imposed on them in the *Varṇa* system.[16]

Political Context of the Sixth Century BCE

During the later Vedic Period, the small tribal societies expanded into large kingdoms, and the 16 great cities undermined the small kin-based communities. These cities were known as "the large territorial units" (Mahajanapadas). The rise of the Mahajanapadas was related to the urban centres of the four powerful kingdoms of Avanti, Vatsa, Kosala and Magadha.

The kingdom of Magadha emerged as the strongest kingdom because of its strategic location: the capital was surrounded by hills, rivers and fertile land for agriculture that was rich in minerals, such as iron and copper, for making better weapons and instruments. Bimbisara, the first ruler to reign over the kingdom during the sixth century BCE, started the trend of marital alliance to expand his kingdom and to end hostilities between kingdoms. The kingdom of Kosala, with its capital at Savatthi, was ruled by King Prasenjit gave land to the Brahmins, and contributed groves and built monasteries for the Jainist monks during this period. The kingdom of vatsas and vamsas, with its capital at Kosambi on the Jamuna, was located at the southern part of Allahabad. Kosambi became a center of Buddhist activity during the later vedic period. Finally, the kingdom of Avanti with its capital, Ujjayini, was reigned over by king Pajjota. The struggle between Kosala and Magadha was the turning point in politics at the time of Mahavira and then Buddha.[17]

Mahavira the Tīrthaṅkara

As aforementioned, the Jain philosophy has remained unchanged over the last 2,600 years which goes to state that Jainism does not have an origin per se. It is imperative, however, to mention here that the very first Tīrthaṅkara Lord Rishabh dev was instrumental in initiating the Karm Yug and thereby propagated knowledge of *Asi* (use of weaponry), *Ṃasi* (the art of language writing, kṛṣi (Agriculture), *Vidyā* (Dance, music and art), *Śilpa* (construction) and *Vanijya* (Commerce).The latest change in Jainism was instigated by the 24th Tīrthaṅkara Mahavira, who proposed to add a vow to the four vows that were put forth by the Tīrthaṅkara before Vardhamāna. Accordingly, the four vows as put forth by the 23rd Tīrthaṅkara, Pārśvanātha is known as the *Chaturyama dharma.* This four-fold religion consists of abstaining from violence, theft, untruth and acquisitiveness.[18] The five fold religion consist of *Ahiṃsā, Satya, Asteya, Brahmacarya* and *Aparigraha* except for those items requisite for a mendicant life.[18a] The Buddhist literature in this regard goes to shed much light on how old Jainism is, that Mahavira is not the founder of Jainism and also that during Mahavira*'s* time there were many followers of Pārśvanātha.

Much evidence at the time of establishment of Buddhism points to the fact that Mahavira was a reformer of Jainism. It is stated in reliable records that his parents were followers of the *Chaturyama dharma* from the Pārśvanātha. It is also evidenced that when Mahavira became a monk, he returned to the home of his birth to worship in the *Chaītya* called *Duipalasa.* The *Chaītya* was said to be that of the Jains. Furthermore, once Mahavira renounced the pleasures of the world lived in the company of saintly people, most possibly the Jains.

Further to this, a mention of the *Chaturyama Dharma* in contradiction with the five rules as set forth by the Mahavira in the *SāmannaphalaSutta* of the *DighaNikāya.* Mahavira then added another vow of chastity due to many cases of abuse that have crept into the religion. It cannot be that the Buddhists make mention of the *Chaturyama Dharma* as a reference to the *Nirgranthas* unless they have heard it passed on by the followers of the *Pārśva.* This forms evidence that followers of the 23rd Tīrthaṅkara existed in Mahavira*'s* time.

It can be stated here that the*Nirgranthas* thus played a vital role when Buddhism came to the fore. This can be evidenced in the pitakas, mentioned the Jainas to be the opponents of Buddha and his disciples. Likewise, Mankkhali Gosala who is a contemporary of the Buddha attempted then to divide the whole of humanity into six distinctive groups. The third division was that of the *Nirgranthas* which goes to suggest that Gosala regarded the *Nirgranthas* as an important part of humanity which he would not have done so if they had been a newly formed religion. In the same context, the *Majjhima Nikāya* makes mention of a quarrel between the Buddha and Sakdal who is a son of a *Nirgrantha*. While Sakdal himself is not a *Nirgrantha*, this evidence to state that Jainism was hardly a religion that emerged during the time of the Buddha, but rather one that existed for a long time before.

Similarly, a meeting between Gautama Indrabhuti (a disciple of Mahavira) and Kesi Kumara (a disciple of *Pārśva*) was mentioned in the *UttaradhyayanaSūtra* 23, as having taken place at Sravasti which led to the merging of the ideologies of the old Jain church with the new one. This again goes to evidence the fact that Jainism is, in fact, an old religion.[19]

As per the Jains in this regard, there seems to be a hesitation to writing anything in their texts after Mahavira which just seems to stop there. This is especially evident in the texts of the Digambaras that do not exist beyond Mahavira. The Śvetāmbaras, on the other hand, do continue to write text after Mahavira, but that too comes to an end after a few centuries. The history thus presented is representative of the people of Jainism rather than the religion itself.

Mahavira lived for 72 years of which he spent thirty years teaching. However, the details of his life as a teacher are not readily found in the existing Jaina texts. After the era of Mahavira, it was seen that Jainism was not given much importance for a few centuries. The history itself reveals only one prominent ruler that supported Jainism. This ruler was Chandragupta Maurya. Later in his tradition Ashoka ruled the great Indain sub-continent. Some evidence, however, points to Ashoka himself having supported the Jains with court-appointed persons who were to look after their welfare; although he was not a patron of the same. Other evidence depicts that the Oriyan King and Queen Kharavela (of the 1st Century BCE) were patrons of Jainism. This evidence, however,do not exist in the literature of Jainism and where Ashoka is barely mentioned.[20]

About the occupation of the Jains, evidence points to them being engaged in commerce and trade from Christian era (early centuries). This is even more evident with the sculptures that were gifted to the temples of Mathura (Kankalitila). In the view of this, the split of Jainism into two sects have been subject to many speculations the most accepted among them being that the drift was due to geographical reasons. This is evident with the contribution to art and sculpture as seen in both south India as well as several places in the north. Within this purview, the Śvetāmbaras constitute to those that emerge from Gujarat and its neighbouring places around the time of 5th Century AD. It is hence assumed that Jainism extended to South India around the 4th century AD. For south India, south-west Karnataka was and is viewed as the epicentre with its further extension to other parts of the south as well as the Tulu speaking areas. With such a spread, Jains were quite a force to reckon with during those centuries. It is during this time that much patronage, as well as important posts, was given to the Jains both in the South as well as the North. In courts of Karnataka, many learned Jains formed an integral part where books on philosophy, science, mathematics and even medicine were written by them. They even played a vital role in the contribution of the architectural heritage especially in the areas of Karnataka and Tamil Nadu. The Śvetāmbaras in the north contributed much to the literature just the same, and it was even recorded that in the 12th century a Jain, Hemachandra was made the confidant of the court of the then ruler of Gujarat. Their tradition of learning continued through the centuries wherein the 16th century, Abdul Fazl (of Akbar's court) accounted for a Jain (Hira Vijaya Suri) to be amongst the most learned people of the Mughal empire where Akbar even invited the Jains to court.[21]

On account of this, the Jains also kept up with the architectural contributions which can be evidenced in the magnificent temples of Khajuraho, Abu, Girnar, Deogarh and Shatrunjaya to name some. With this, it can be stated that the contribution of the Jain to the cultural heritage of India has been quite expansive. As mentioned above there has been no recorded major change in the philosophy of the Jains over the years although there has been one elaboration to the *syādvāda* which is the

logical system of the Jaina philosophy. Initially, the explanation regarding *syādvāda* being brief in the canonical literature and later on more logicians developed *syādvāda* into a functional system. The point of notice here, however, lies in the fact that no Jaina has since attempted a revision or tried to upgrade the same.[22]

Concerning the controversies surrounding Jainism, there have been none as great as those in Hinduism regarding the interpretation of the *Vedanta-sūtras,* however, the ones that do exist pertain to the division or the sects of Jainism; the Śvetāmbaras and the Digambaras. When analysis of what causes such a division and the reason for the emergence of sub-sects within this division, it reveals that the division lays in trivialities such as the rituals practised by the Jains or in their recount of the history of these two sects. The main contributory reason for the emergence of sub-sects was the rising growth of the wealth of Jain temples and monasteries that led to the power of the individuals handling the same. New groups were hence formed in protest against such autonomy. One such was the *Terāpanthī of* the Digambaras that arose in the 17th century in Agra. Similarly, such unrest also occurred within the Śvetāmbaras where a group of people stated that the worship of images does not have mention in the canonical literature. These disturbances, while did not affect the core of Jainism have made the Jains pay more attention on Jainism and contribute to keeping the religion alive.[23]

After the history of the people of Jainism, it is imperative to explore the history of the pillars of Jainism as well. While the Jains themselves contend in the fact that, like the universe, Jainism has no beginning and no end and believe that the ascetics and saints existed from time immemorial, Mahavira the 24th Tīrthaṅkara is the one that is discussed ardently. This is for all the practical purposes as he is the last Tīrthaṅkara is a known historical figure. The 23rd Tīrthaṅkara was Pārśvanātha who lived about two and a half centuries before the Mahavira. In light of this, it has been deemed quite difficult to prove the history of the Mahavira solely based on the Jaina texts as they were written a long period after the era of Vardhamāna. Here again the difference between the sects arise where the Digambaras believe that no texts exist pertaining to the history of the Mahavira while the Śvetāmbaras are of the view that oral repetitions from his era were transcribed to form the written text as they exist today in the 5th century AD. Thus, as per such texts, the Śvetāmbaras believe that Mahavira was born in the town of Vaishali (now 25km from Patna) on *Shukla taryodasi*, *chaitra* in 599 BC. The texts also say that he was prince of the Jnatra clan belonging to the class of Kshatriyas in the system of *Varṇa*. It is said that he died in 527BC in Pavapuri near Rajagriha. It has been noted that the ruling monarchs of the time belonged to the dynasty of Magadh and were King Shrenika and Kunika his son.[24]

Other aspects of the history of Mahavira can be taken from the ancient Pali texts of Buddhism which is said to have been written shortly after the death of the Buddha. A frequent mention has been given to a *'Nātaputta',* one who is free from bonds (sect of *Niganṭha)*. As for the rulers during the time of Buddha were Bimbisara and Ajatashatru. It has thus been asserted that *Nātaputta* is in fact Mahavira, the *Jñātraputra* of the Jains. In comparison of the Jaina and Buddhist texts, the place where Mahavira died was the same (Pava and Pavapuri) as well as the mention of Shrenika and Kunika in the Jain literature are in fact Bimbisara and Ajatashatru as mentioned in the Buddhist texts (as well as the Hindu texts). In the Jain texts, the mention of

Shrenika has been in the full form of Shrenika Bimbisara, while in the Buddhist texts Ajatashatrus son was named Udayabhadda. In the Jain text his name has been recorded as Udaiyin. This has drawn the conclusion that Kunika is none other than Ajatashatru. However, the term Jain as in follower of Jainism has not been mentioned in these Buddhist texts. The contemplative reasoning for the same is that both Mahavira and Buddha were called *'Jina'* by their respective followers which made *'Jain'* applicable to both the Buddhists and the Jains.[25]

As for the mention of the *'nirgranthas'*, the Buddhists refer to them as being ascetics with extreme and rigorous practices which is what forms the factor of distinction between the Jains and the Buddhists. It has therefore been a fair conclusion that the *'nirgranthas'* as mentioned in the Buddhist texts do refer to the Jain ascetics as they were known much later on. The similarity though in the texts arises wherein Jain literature such as *ĀcārāṅgaSūtra* and the *KalpaSūtra* describe the Jain ascetics as *'nirgranthas'*. While the history of Mahavira is not imperative to the history of Jainism as a whole as Mahavira is not the founder of Jainism as Buddha is to Buddhism, He is still regarded as the last great saint with which the history (whatever little) stops. This is due to the reform of the four great vows as set by the 23rd Tīrthaṅkara to five great vows modified by the Vardhamāna. Later history of Jainism is marred by discord which is also suggestive that such division did exist at the time of Mahavira itself (between the group of *Pārśva* and Mahavira).[26]

In view of this, an ascetic named Keshi, a follower of the system set forth by *Pārśvantha* had once embarked on a discussion with Gautama who was a disciple of Mahavira. The turn of the discussion was such that Keshi accepted the premise of the 'five vows' as opposed to four. In this way a unity on the viewpoints between the followers of the 23rd Tīrthaṅkara and the 24th Tīrthaṅkara occurred. The Śvetāmbaras bear the opinion that other divisions also existed during the era of Mahavira. The first amongst them was the one created by Mahavira's own son-in-law, Jamali who created the same fourteen years after enlightenment. The various divisions hence have come to be known as the *'Nihnavas'*. The most important one of them all was the eighth *'Ninahva'* which broke the community into two (as mentioned earlier); the Śvetāmbaras and the Digambaras. At this point it is an interesting observation that both the sects held largely different views of the history of Mahavira where the Śvetāmbaras believed that he was married and had a daughter Anojja and a granddaughter Yashovati while the Digambaras do not believe he married at all.[27]

Śvetāmbaras

White-clad forms the meaning for Śvetāmbaras. This sect of people wear a white robe and also state (conversely to the Digambaras) that woman can attain *mokṣa*, and they also believe that the 19th Tīrthaṅkara (*Mallināth*) was a female. The Śvetāmbaras also believe that Vardhamāna was a prince and was married to Princess Yasoda. This sect seems to be more open and willing towards women and all other people making it the more preferred. This sect too like the Digambaras is divided into three subsects: *Mūrtipūjaka* who venerate images of Tīrthaṅkaras, and the *Sthānakavāsī* and *Terāpanthī* who do not worship images but venerate Tīrthaṅkaras through mental worship.

Digambaras

Digambara when split forms *dig* meaning sky and *ambara* meaning clothes which form

the collective to mean sky-clad. It is a name that derives itself from male mendicants who practice alms-taking, detachment while renouncing all possessions inclusive of clothes thereby practicing total nudity. A difference in the practices between the Śvetāmbaras*vetāmbaras* and the Digambaras arise that relates to the clothing. While the monks of the Digambara sect are naked the monks and nuns of the Śvetāmbaras*vetāmbaras* sect uses white robes. The Digambaras believe that wearing a robe means that one is related to the body and that if one feels shame then he lacks maturity that is required to be spiritual. The Digambara sect has further been divided into four major sub-sects; *Bisapanthis* who accept the order of *Bhaṭṭārakas* ('venerable one or learned one'. Traditionally Digambara monks do not wear clothing, but *Bhaṭṭārakas* wear orange robes for administrative duty and have interactions with the Jaina laity). *Terāpanthī* do not follow the order of the *Bhaṭṭārakas,* the *TaranSvamiPanth* of central India and the *Kanji SvamiPanth.* The last two sects are believed to be formed in the 20th century. Further beliefs of the Digambara are that ladies lack the body and the mind to attain *'mokṣa'* and hence for her to attain the same she must be reborn as a man. With respect to their views on food, Digambaras believe that once one becomes an omniscient one does not require food.[28]

Jain Scripture and Literature

The ancient scripture of Jain inculcates its followers to delve deeper into the religious community with holistic thoughts. On a general context, scripture summons the sacred connectivity of the soul with eternal life with *mokṣa*, deliver holistic truth, nurture unworldly wisdom, provide communal individuality and guide the followers to holy practices. Jain scripture, on the contrary, bestows the values of idealising individual values with philosophical enlightenment and shaping moral values of individuals.

The sacred scripture of the Jains was known as *Āgamas* or canon. The *āgamas* or cannon are a collection of texts compiled by the chief disciples of Tīrthaṅkara which is further divided into *Aṅgas* and *Angabāhya*. The literal meaning of *Aṅgas* is 'limb', and *Aṅgabahya* is 'outside the limb'. *Aṅgas* form the body of the scripture and contain 12 texts of spiritual knowledge. The existence of the 11 *Aṅgas* is believed by Śvetāmbaras and, the *Purva* texts in the 12th*Aṅga* which is believed to be lost. However, another sect of the religion, the Digambaras do not believe in the existence of any of these texts. Dasgupta[29] claims that the first teachings of Tīrthaṅkara were collected into 14 *pūrvas* and the knowledge of *Purvas* was spread for 1000 years within the liberation of Lord Mahavira and the entire 12th*Aṅga* with *Purva* texts disappeared. Although Śvetāmbaras and Digambaras had conflicting ideas on the existence of these texts, the names and the gist of these *pūrvas* were preserved in their literature.

The texts written outside the *Aṅgas* were called *Aṅgabāhyas* and were written by the Digambara sect as a subsidiary attachment to *āgama.*[30] The existence of the Śvetāmbara canon is not accepted till date by the Digambaras as the Śvetāmbara canon was recited and codified in the absence of the Digambara leaders. They believe in the non-existence of *Purva* and *Aṅgabahya* texts. According to Pániker[31] the sagacious leaders of the Digambara sect had composed post-canonical works which are categorised into *Anuyog as* which mean 'Expositions'. Digambaras follow two main texts- *Ṣaṭkhaṅḍ–āgama* and *Kāsāya-pahuḍa* as the premise for their religious customs which were written by the great scholars (*Ācārya*)during 100-800 A.D.

In 1974, a common text called '*SāmanSuttam*' was devised by scholars, which

was accepted by all the sects of the Jain community. It holds a brief compendium of Jain principles and philosophy. Four major parts or philosophies with forty-four sections comprise the "*SāmanSuttam*"; 1) the source of illumination, 2) the path of emancipation, 3) faith in principles and 4) the doctrine of the seven predictions.[32]

Though there are conflicting ideologies on practising the religion, Śvetāmbara and Digambara both believe in the theory of *karma* and the realisation of the soul as the ultimate aim. The ultimate goal of the scriptures of both sects is to enlighten Jain followers, the purpose of life and the values to be followed based on the holy preachings of Lord Mahavira.

REFERENCES

16. Tripathi, History of ancient India, op.city., 107
17. Tripathi, History of ancient India, op.city., 89--96
18. Paul Marett, "Jainism Explained," Jain World (Jain Samaj Europe, 2016) p. 15
18a. Dr. Padmanabh S Jaini, Jainism and Ecology, Motilal Banarasidas Publishers, Delhi, 2006, p.142
19. Kailasha Chndra Jain, "Antiquity of Jainism", Fas. Harvar, 2016. p 27
20. Roy, Ashim kumar. A History of the Jains. New Delhi : Rise Press, 1984. p 55
21. Ibid.
22. Ibid.
23. Ibid.
24. Ibid.
25. Ibid.
26. Ibid.
27. Ibid.
28. Kristi L. Wiley, historical Dictionary of Jainism (Maryland : Scarecrow Press, 2004). p 72
29. Surendranath Dasgupta, A History of Indian Philosophy, Volume I (New Delhi : Motilal Banarsidass Publication, 1997). p 57
30. Wiley, Historical Dictionary of Jainism.op.coit.,
31. Agustín Pániker, Jainism : History, Society, Philosophy, and Practice (New Delhi : Motilal Banarsidass Publishers, 2010)
32. Sri Jinendra Varni et al., Saman Suttam (New Delhi : Sarva Seva Sangh Prakashan, 1993).

-29/3, Ranganthan Avenue Kilpauk, Chennai-600010 (Tamilnadu)

श्री जैनधर्म का क्या कहना

(तर्ज :- दुनिया में देव अनेकों हैं.....)

श्रद्धेय श्री अभयमुनिजी म.सा.

दुनिया में धर्म अनेकों हैं,
श्री जैनधर्म का क्या कहना
इसकी सूक्ष्मता का क्या कहना,
इसकी व्यापकता का क्या कहना
दुनिया में धर्म.....
व्यक्ति पूजा का महत्त्व नहीं,
गुणपूजा का है सत्य सही
न आदि कोई बता सकता,
इस अनादि धर्म का क्या कहना
दुनिया में धर्म.....
सम्पूर्ण सत्य का सागर है, शाश्वत सुख का गागर है
जो अनेकान्त आधारित है,
सर्वज्ञ धर्म का क्या कहना
दुनिया में धर्म.....
अहिंसा संयम तप है यहाँ,
समताधारी है सन्त यहाँ
जो वर्धमान पर श्रद्धा रखते,
ऐसे आप्त धर्म का क्या कहना
दुनिया में धर्म.....
महावीर के सिद्धान्तों को जहाँ,
पूरा विश्व श्रद्धा से जान रहा
जो जिनवचनों में जीता है,
उनके जीवन का क्या कहना
दुनिया में धर्म.....

-श्री नवरतनजी गिड़िया जोधपुर द्वारा प्रवचन से संकलित

10 मार्च 2021
जिनवाणी 50
ISSN 2249-2011

तत्त्व-चर्चा

क्या किसी जीव को बचाने का भाव हिंसा है?

डॉ. धर्मचन्द जैन

जिज्ञासा– क्या किसी जीव को बचाने का भाव भी हिंसा है? क्या किसी जीव को बचाने में राग-भाव होना आवश्यक है?

समाधान– 'तीर्थङ्कर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ' पुस्तक में पृष्ठ 191 पर विश्रुत विद्वान् डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के अनुसार-''जैनदर्शन का कहना है कि मारने का भाव तो हिंसा है ही, बचाने का भाव भी निश्चय से हिंसा ही है, क्योंकि वह भी राग-भाव ही है। राग-भाव चाहे वह किसी भी प्रकार का क्यों न हो, हिंसा ही है।''

यहाँ पर चिन्तनीय है कि 'कार्तिकेयानुप्रेक्षा' में जीवों की रक्षा करने को स्पष्ट रूप से धर्म कहा गया है- **'जीवाणं रक्खणं धम्मो।'** कुन्दकुन्दाचार्य ने भी बोधपाहुड में **'धम्मो दयाविसुद्धो'** का कथन करके धर्म को दया से विशुद्ध बताया है। अर्थात् धर्म में दया का स्थान है। अभयदान दानों में श्रेष्ठ कहा गया है। साधु-साध्वी छह काया के जीवों को अभयदान देते समय क्या जीवों की रक्षा नहीं करते? क्या उनको बचाने में पाप समझते हैं? वस्तुतः जीव को बचाने का भाव तो राग भाव में कमी आने का सूचक है। परिवारजनों की रक्षा में राग-भाव हो सकता है अथवा जिससे किसी प्रकार की स्वार्थ-पूर्ति होती हो, वह प्रवृत्ति राग-भाव की द्योतक हो सकती है, किन्तु निःस्वार्थ भाव से चलती हुई चींटी को पिच्छी, रजोहरण आदि से बचाने में कौनसा राग-भाव है? वहाँ करुणा-भाव एवं अनुकम्पा भाव हो सकता है, राग-भाव नहीं और अनुकम्पा को सम्यग्दर्शन का लक्षण माना गया है। 'तत्त्वार्थभाष्य' में स्पष्ट उल्लेख है कि अनुकम्पा सम्यक्त्व का लक्षण है। षट्खण्डागम की धवला टीका में करुणा को जीव का स्वभाव प्रतिपादित किया गया है-**करुणाए जीव सहावो।** जो विश्लेषण डॉ. भारिल्ल कर रहे हैं, वैसा विश्लेषण किसी भी आगम और उनकी टीकाओं में अथवा मान्य ग्रन्थों में कहीं भी नहीं हुआ है। निश्चयनय की आड़ में डॉ. भारिल्ल ने मानव की संवेदनशीलता पर प्रहार किया है। यदि बचाने में राग-भाव एवं हिंसा का दोष माना जाए तो इससे बढ़कर निष्करुणता, निर्दयता और क्रूरता क्या होगी? धर्म के नाम पर जनसाधारण में दूसरे जीवों के प्रति आत्मीयता का भाव भी टिक नहीं सकेगा। निश्चयनय का आश्रय क्रूरता को प्रोत्साहन देना कदापि नहीं हो सकता है। निश्चयनय व्यक्ति को उच्च आध्यात्मिक लक्ष्य का बोध कराने के लिए प्रयुक्त हुआ है, किन्तु क्रूरता और कठोरता को प्रोत्साहित करने के लिए नहीं। आगमों में तो डूबती हुई साध्वी को एक साधु भी निर्मल भावों से बचाने वाला स्वीकार किया गया है। राग-भाव का आश्रय लेकर प्राणिमात्र को बचाने को हिंसा या पाप कहना न मानवीय दृष्टि से उचित है, न जीवन-मूल्य की दृष्टि से, न नैतिक दृष्टि से उचित है, न सामाजिक दृष्टि से और न ही धार्मिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से उचित है।

बचाने की क्रिया बचाये जाने वाले प्राणी के लिए तो जीवनदायिनी होती ही है, किन्तु उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है बचाने वाले का भाव। सामान्यतः निःस्वार्थ भाव से दूसरे जीव को यतना पूर्वक तभी बचाया जा सकता है जब करुणा, मैत्री और अनुकम्पा का भाव हो। करुणा, मैत्री और अनुकम्पा आत्मा के राग-भाव को घटाने वाले हैं, बढ़ाने वाले नहीं। राग का घटना कभी-भी त्याज्य नहीं हो सकता। यह तो राग से विराग की ओर ले जाने का ही एक मार्ग है। राग-भाव के घटने को यदि हेय कहा जाएगा तो वीतरागता भी हेय की श्रेणी में आ जाएगी, क्योंकि उसमें राग पूरा ही घट जाता है।

प्रश्नव्याकरणसूत्र में कहा गया है– **'सव्वजगजीव रक्खणदयट्ठयाए भगवया पावयणं सुकहियं'** अर्थात् संसार के समस्त जीवों की रक्षा और उन पर दया के भाव से भगवान के द्वारा प्रवचन फरमाया गया है। जगत् के जीवों के रक्षण और दया भाव से उनके उद्धार के लिए वीतराग भगवान के द्वारा प्रवचन देना रागभाव का द्योतक नहीं हो सकता। जो सबका कल्याण चाहता है, जिसे दूसरों से सुख पाने की वाञ्छा नहीं है, उसे भला क्या रागभाव होगा? आगम में रागभाव, अज्ञान, हिंसा आदि को त्याज्य बताया गया है, मैत्री, करुणा, दया, अहिंसा आदि के भावों को नहीं। परिवारजनों की सेवा-शुश्रूषा में रागभाव हो सकता है, किन्तु उसे भी संसारी जन बिना आसक्ति के कर्त्तव्यभाव से कर सकते हैं। सम्यग्दृष्टि जीव के लिए कहा गया है–

सम्यग्दृष्टि जीवड़ा करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अन्तरघट न्यारो रहे ज्यों धाय खिलावे बाल।।

भीतर में सम्यग्दर्शन की आवश्यकता है, फिर राग को जीतने का कार्य सम्भव है। दूसरी बात यह है कि संसारी जीव अहिंसा के पालन का प्रारम्भ दूसरे प्राणियों को अपने कारण हिंसा न हो–'न स्वयं हिंसा करे, न करावे और न ही करने का अनुमोदन करे' के भाव से ही कर सकते हैं। पाँच महाव्रतधारी साधु-मुनिराज भी यही प्रतिज्ञा करते हैं। यदि इस प्रतिज्ञा से जीवों का बचाव होता है, उनकी रक्षा होती है तो क्या उसे हिंसा कहा जाएगा? यह तो फिर अहिंसा को ही हिंसा कहना हो जाएगा। राग का रूपान्तरण मैत्री, अनुकम्पा आदि में किए जाने पर कुछ भला हो सकता है, किन्तु किसी जीव को बचाने का भाव भी यदि हिंसा है, तो फिर धर्म के पथ पर कोई कैसे आगे बढ़ सकेगा? इसलिए डॉ. भारिल्ल का कथन आम साधकों के लिए भ्रामक एवं विमूढ़ बनाने वाला है तथा पुनर्विचारणीय है।

यदि विकल्प का उठना मात्र त्याज्य है तो विकल्पात्मक तो ज्ञान भी होता है, क्या उसे भी हेय या त्याज्य कहा जाएगा? जैनदर्शन में दर्शन निर्विकल्पक होता है और ज्ञान तो सविकल्पक ही कहा गया है।

जिज्ञासा– जीव अपने आयुष्य कर्म के पूर्ण होने से मरता है तथा आयुष्य पूर्ण नहीं होने तक जीता है। अत: न कोई किसी को मार सकता है न ही किसी को बचा सकता है। क्या यह सही है?

समाधान– यह जिज्ञासा सभी आमजनों की हो सकती है। डॉ. भारिल्ल ने भी 'तीर्थङ्कर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ पुस्तक' में पृष्ठ 186-188 पर इसके समर्थन में चर्चा की है। किन्तु आगमों और कर्मसिद्धान्त का अध्ययन करने पर विदित होता है कि आयुष्य दो प्रकार का होता है-अपवर्त्य और अनपवर्त्य। अपवर्त्य आयुष्य के अनुसार आयुष्य कर्म में अपवर्तन सम्भव है। कुछ ही जीव ऐसे हैं जो अपना आयुष्य पूरा भोगते हैं। उनमें प्रमुख हैं-चरमशरीरी पुरुष, उत्तमशलाका पुरुष, असंख्यात वर्ष आयुष्य वाले तिर्यञ्च एवं मनुष्य तथा औपपातिक जन्म वाले देव तथा नारक। (द्रष्टव्य तत्त्वार्थसूत्र 2.52) इनके अतिरिक्त अन्य प्राणियों के जीवनकाल में अपवर्तन अर्थात् स्थिति में कमी रूप परिवर्तन होना सम्भव है।

स्थानाङ्गसूत्र में इस दृष्टि से आयु की समाप्ति के 7 कारण प्रतिपादित हैं–

अज्झवसाण निमित्ते, आहारे वेयणा पराघाते।
फासे आणापाणू, सत्तविधं भिज्जए आउं।।

–स्थानाङ्गसूत्र, स्थान 7

सात कारणों से आयु का भेद होता है-(1) राग-द्वेष, भय आदि अध्यवसायों की तीव्रता से, (2) शस्त्रघात, विष, भूकम्प आदि के निमित्त से, (3) आहार की न्यूनाधिकता से, (4) ज्वर, आतंक आदि के तीव्र वेदन से, (5) पर के आघात से, (6) सर्प आदि के स्पर्श से, (7) श्वासोच्छ्वास के निरोध से। स्थानाङ्गसूत्र का यह सन्दर्भ स्पष्ट करता है कि उपर्युक्त निमित्तों से अथवा ऐसे ही निमित्तों से आयुष्य पहले भी टूट सकता है या समाप्त हो सकता है। आयुष्य कर्म की स्थिति के

(शेषांश पृष्ठ 67 पर)

।। श्री महावीराय नमः ।।

पूज्य कुशलगणी की जय

।। जय गुरू हस्ती ।।

श्री कुशलरत्न गजेन्द्रगणिभ्यो नमः

परम्श्रद्धेय जैनाचार्य श्री 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. के सुशिष्य

आचार्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की जय

श्री श्वे. स्था. जैन चतुर्विध संघ के हितार्थ प्रमुख मुनियों द्वारा स्वीकृत

पाक्षिक पत्र विक्रम सम्वत् 2078

वीर सम्वत् 2547-48 (निर्णय सागर पंचाग से सम्पादित) सन् 2021-2022

क्र. सं.	मास-पक्ष	तिथिवार	पक्खी दिनांक	घड़ी पल	क्षय तिथि	वृद्धि तिथि	रोहिणी नक्षत्र	पुष्य नक्षत्र
1	चैत्र सुदि	14 सोम	26.04.2021	16-30	-	-	4 शुक्र	9 बुध
2	वैशाख वदि	30 मंगल	11.05.2021	46-20	1 मंगल	-	-	-
3	वैशाख सुदि	14 मंगल	25.05.2021	36-55	12 रवि	3 शनि	2 गुरु	6 मंगल
4	ज्येष्ठ वदि	14 बुध	09.06.2021	20-23	4 शनि	11 रवि	30 गुरु	-
5	ज्येष्ठ सुदि	15 गुरु	24.06.2021	45-45	14 बुध	-	-	4 सोम
6	आषाढ़ वदि	प्र.30 शुक्र	09.07.2021	60-00	-	30 शनि	13 बुध	-
7	आषाढ़ सुदि	14 शुक्र	23.07.2021	11-43	7 शुक्र	-	-	1 रवि
8	श्रावण वदि	14 शनि	07.08.2021	32-33	1 शनि	8 रवि	10 मंगल	30 रवि
9	श्रावण सुदि	15 रवि	22.08.2021	28-05	9 सोम	-	-	-
10	भाद्रपद वदि	14 सोम	06.09.2021	03-05	30 सोम	11 शुक्र	9 मंगल	12 शनि
11	भाद्रपद सुदि	15 सोम	20.09.2021	57-18	13 शनि	-	-	-
12	आश्विन वदि	14 मंगल	05.10.2021	31-13	-	2 गुरु	6 सोम	10 शुक्र

विशेष विवरण

- आयंबिल ओली प्रारम्भ चैत्र सुदि 7 सोमवार 19.04.2021।
- भगवान महावीर जन्म कल्याणक चैत्र सुदि 13 रविवार 25.04.2021।
- आयंबिल ओली पूर्ण चैत्र सुदि 15 मंगलवार 27.04.2021।
- अक्षय तृतीया (वर्षीतप पारणा) वैशाख सुदि प्र. 3 शुक्रवार 14.05.2021।
- आचार्य भगवंत पूज्य गुरूदेव 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. की 30वीं पुण्य तिथि वैशाख सुदि 8 गुरुवार 20.05.2021।
- भगवान महावीर केवल कल्याणक वैशाख सुदि 10 शनिवार 22.05.2021।
- संघ स्थापना दिवस वैशाख सुदि 11 रविवार 23.05.2021।
- आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 31वाँ आचार्य पद दिवस, ज्येष्ठ वदि 5 रविवार 30.05.2021।
- परम्परा के मूल पुरुष श्री कुशल चन्द्र जी म.सा. की 238वीं पुण्य तिथि, ज्येष्ठ वदि 6 सोमवार 31.05.2021।
- आद्रा नक्षत्र प्रारम्भ ज्येष्ठ सुदि 11 सोमवार 21.06.2021, इसके पश्चात् गाज बीज होने पर सूत्र की असज्झाय नहीं रहेगी।
- क्रियोद्धारक पूज्य आचार्य श्री रतनचन्द जी म. सा. की 176वीं पुण्य तिथि, ज्येष्ठ सुदि 14 बुधवार 23.06.2021।
- 225वाँ क्रियोद्धारक दिवस आषाढ़ वदि 2 शनिवार 26.06.2021।
- चातुर्मास प्रारम्भ (चातुर्मासी पक्खी) आषाढ़ सुदि 14 शुक्रवार 23.07.2021।
- पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. की 95वीं पुण्यतिथि श्रावण वदि 30 रविवार 08.08.2021।
- पर्युषण महापर्व प्रारम्भ भाद्रपद वदि 12 शनिवार 04.09.2021।
- संवत्सरी महापर्व भाद्रपद सुदि 5 शनिवार 11.09.2021।

13	आश्विन सुदि	15 बुध	20.10.2021	34-18	4 शनि	–	–	–
14	कार्तिक वदि	30 गुरु	04.11.2021	49-38	14 बुध	5 मंगल	4 रवि	8 शुक्र
15	कार्तिक सुदि	14 गुरु	18.11.2021	12-23	7 बुध	12 मंगल	–	–
16	मार्गशीर्ष वदि	14 शुक्र	03.12.2021	24-13	–	–	1 शनि	6 गुरु
17	मार्गशीर्ष सुदि	प्र.15 शनि	18.12.2021	60-00	2 रवि	15 रवि	प्र.15 शनि	–
18	पौष वदि	30 रवि	02.01.2022	41-23	13 शुक्र	–	–	3 बुध
19	पौष सुदि	15 सोम	17.01.2022	54-25	–	–	12 शुक्र	–
20	माघ वदि	14 सोम	31.01.2022	17-08	8 मंगल	2 गुरु	–	1 मंगल
21	माघ सुदि	14 मंगल	15.02.2022	36-00	2 बुध	8 बुध	9 गुरु	14 मंगल
22	फाल्गुन वदि	30 बुध	02.03.2022	39-58	12 रवि	–	–	–
23	फाल्गुन सुदि	14 गुरु	17.03.2022	16-40	–	9 शनि	8 गुरु	11 सोम
24	चैत्र वदि	14 गुरु	31.03.2022	14-30	4 सोम	–	–	–

- आर्यबिल ओली प्रारम्भ आसोज सुदि 7 मंगलवार 12.10.2021।
- पूज्य आचार्य श्री भूधरजी म.सा. की पुण्य तिथि आसोज सुदि 10 शुक्रवार 15.10.2021।
- आर्यबिल ओली पूर्ण आसोज सुदि 15 बुधवार 20.10.2021।
- स्वाति नक्षत्र प्रारम्भ कार्तिक वदि 3 शनिवार 23.10.2021, इसके पश्चात् गाज बीज होने पर सूत्र की असज्झाय रहेगी।
- भगवान महावीर निर्वाण कल्याणक कार्तिक वदि 30 गुरुवार 04.11.2021।
- वीर संवत् 2548 प्रारम्भ एवं गौतम प्रतिपदा कार्तिक सुदि 1 शुक्रवार 05.11.2021।
- ज्ञान पंचमी कार्तिक सुदि 5 मंगलवार 09.11.2021।
- आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 59वाँ दीक्षा दिवस कार्तिक सुदि 6 बुधवार 10.11.2021।
- चातुर्मासिक पक्खी (चातुर्मास पूर्ण) कार्तिक सुदि 14 गुरुवार 18.11.2021।
- वीर लोकाशाह जयंती कार्तिक सुदि 15 शुक्रवार 19.11.2021।
- आचार्य पूज्य 1008 श्री विनयचन्दजी म.सा. की 106वीं पुण्यतिथि, मार्गशीर्ष वदि 12 बुधवार 01.12.2021।
- मौन एकादशी मार्गशीर्ष सुदि 11 मंगलवार 14.12.2021।
- भगवान पार्श्वनाथ जन्म कल्याणक पौष वदि 10 बुधवार 29.12.2021।
- फाल्गुनी चातुर्मासी पर्व (चातुर्मासी पक्खी) फाल्गुन सुदि 14 गुरुवार 17.03.2022।
- भगवान आदिनाथ जन्म कल्याणक एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 84वां जन्मदिवस चैत्र वदि 8 शुक्रवार 25.03.2022।

गुरू हस्ती के दो फरमान–सामायिक स्वाध्याय महान्

गुरु हीरा का यह सन्देश–व्यसन मुक्त हो सारा देश

प्रिय महानुभावों! शुद्ध चित्त से दोनों समय प्रतिक्रमण करने से निर्जरा होती है। उत्कृष्ट रसायन आने से तीर्थंकर गौत्र की उपार्जना होती है। अतः दोनों समय प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिये। यदि प्रमाद वश न हो सके तो पक्खी का तो अवश्य करना चाहिये। पांचवें आवश्यक के काउसग्ग में देवसी को 4, पक्खी को 8, चौमासी को 12, और सम्वत्सरी को 20 लोगस्स का चिन्तन करना अजमेर सम्मेलन का नियम है। सामायिक स्वाध्याय का घर-घर प्रचार करें। ब्रह्मचर्य का पालन करें व व्यसनों का त्याग करें।

स्व. श्री सम्पतचन्द जी सिंघवी एवं स्व. श्री रिखबचन्द जी सिंघवी की स्मृति में सप्रेम भेंट

भेंटकर्ता (प्राप्ति स्थान) : श्री चंचलचन्द सिंघवी 507 ए 5-बी रोड, सरदारपुरा, जोधपुर-342003 फोन : 0291-2431924, मो. 9460767029

10 मार्च 2021
जिनवाणी 54
ISSN 2249-2011

वैज्ञानिक आलेख

जैन जीवनशैली का वैज्ञानिक अन्वेषण

श्री नमन डागा

2017 का नोबल प्राइज Physiology & medicine में मिला था 'Circadian Rhythm' से जुड़ी हुई खोज पर-

'Circadian Rhythm' क्या है?

'Circadian Rhythm' यह बताता है कि हमारी एक Body Clock है। यह Clock न केवल मानव में, बल्कि हर प्राणी में पाई जाती है।

यह Clock दो प्रकार की होती हैं-

1. Master Clock : यह शरीर की मुख्य Clock होती है जो Brain के Hypothalamus region में पाई जाती है जिसका नाम है Supra chiasmatic nucleus (SCN)

2. Peripheral Clock : यह हमारा शरीर 70 Trillion cells का समूह है। विज्ञान कहता है कि प्रत्येक Cell की अपनी एक Body Clock होती है, जिसका नाम Peripheral Clock है।

हमारे शरीर में जो भी Physical, Mental & Behaviousal charges हो रहे हैं उनका कारण 'Circadian Rhythm' (Body Clock) है। C.R. के ही कारण शरीर की विभिन्न गतिविधियाँ निर्धारित होती हैं। जैसे कि Alertness, Physical activity, Immune function Digestion, Hormone Levels, Sleep-wake cycle, Body temperature, Metobolism.

हमारे बड़े कहते हैं कि 'हर काम सही समय पर करना चाहिए। मतलब हर काम को करने का एक सही/उचित समय होता है।' आज का विज्ञान भी 'Circadian Rhythm' के माध्यम से इस बात की पुष्टि करता है कि Body Clock के आधार पर ही शरीर की विभिन्न गतिविधियों को करना चाहिए, जिससे हमारा जीवन सुचारु रूप से चले।

हमारी जो यह Body Clock है वह प्रकृति के साथ जुड़ी हुई है यह Body Clock भी लगभग 24 घण्टों की होती है और प्रतिदिन Reset होती है।

Ciradian Rythm के Function करने का मुख्य आधार प्रकाश है। मतलब यह Body Clock naturally सूर्योदय और सूर्यास्त से जुड़ी हुई है।

इसी कारण से जब भी मनुष्य कोई दूसरे टाइम जोन में जाता है, तो उसे 'Jet lag' होता है, क्योंकि उसकी Internal body clock out of sync हो जाती है और उसे नए टाइम सर्कल में पुनःव्यवस्थित होने के लिए कम से कम 5-7 दिन लगते हैं।

उसी तरह जो इन्सान रात्रि के समय में काम करते हैं, उनमें अक्सर शारीरिक और मानसिक रोग अधिकतर होने की सम्भावना होती है।

आज का विज्ञान यह बताता है कि अगर हमको Peak Performance प्राप्त करनी है तो हमें प्रकृति से तालमेल मिलाकर CR के अनुसार ही शरीर की विभिन्न गतिविधियाँ करनी चाहिए।

जैन जीवनशैली

वैज्ञानिकों ने तो 2017 में सी.आर. की खोज की और यह बताया कि हर काम का एक सही समय होता है, पर हमारे 'महावैज्ञानिक भगवान महावीर' ने तो 2,600 वर्ष पूर्व ही इस रहस्य को अपने केवलज्ञान में जान लिया और उसी के आधार पर जैन जीवनशैली का निर्माण किया।

उत्तराध्ययनसूत्र के 26वें अध्ययन 'सामाचारी' में साधुवर्ग को वस्त्रादि प्रतिलेखन, स्वाध्याय, ध्यान, शयन, भिक्षाचरी आदि क्रियाओं के लिए दिवस और रात्रि में समय का उचित विभाग करना आवश्यक बताया है।

सूत्रकृताङ्ग (2/1/15) में भगवान ने फरमाया **'अन्नं अन्नकाले, पाणं पाणकाले, लेणं लेणकाले सयणं सयणकाले'** अर्थात् अशन, पान, लयन, शयन आदि अपने-अपने 'विहित काल' में करना चाहिए।

आचाराङ्गसूत्र के प्रथम श्रुतस्कन्ध अध्ययन 8 उद्देशक 3 में 'कालण्णू' शब्द के माध्यम से भगवान ने बताया है कि साधु को 'कालज्ञ' होना अनिवार्य है। दशवैकालिकसूत्र (5/2/4) में 'काले कालं समायरे' में समय पर समस्त चर्या करने का विधान है।

निष्कर्ष यह है कि साधुवर्ग को काल का निरीक्षण करना अनिवार्य है।

उत्तराध्ययनसूत्र (29/15) में भगवान से पूछा गया कि काल-प्रतिलेखन से जीव क्या पाता है?

भगवान ने उत्तर दिया-काल के प्रतिलेखन से ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय होता है।

यहाँ काल के प्रतिलेखन का आशय यह है कि स्वाध्याय, ध्यान, शयन, जागरण, प्रतिलेखन, प्रतिक्रमण, भिक्षाचर्या आदि धर्मक्रियाओं के लिए शास्त्रोक्त काल का निरीक्षण करना या ध्यान रखना अनिवार्य है।

काल-प्रतिलेखन से ज्ञानवारणीय कर्म का क्षय होता है, क्योंकि समय विभाग के अनुसार चलने में उपयोग रखना होता है और आत्मा प्रमादरहित होती है, उसी के फलस्वरूप ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय हो जाता है।

भगवान ने उत्तराध्ययनसूत्र के 26वें अध्ययन सामाचारी में साधु की दिनचर्या को काल के अनुरूप करने को कहा है। 11वीं गाथा में 'भिक्खू कुज्जा वियक्खणो' के माध्यम से यह सूचित किया है कि बुद्धिमान साधु अपनी बुद्धि से दिन और रात के चार-चार भागों की कल्पना करें। इन भागों को प्रहर कहा जाता है। इस तरह एक दिन-रात में 8 प्रहर होते हैं। प्रत्येक प्रहर में जिस-जिस उत्तरगुण का अनुष्ठान बताया है, उन सभी का आचरण करें।

भगवान ने प्रत्येक प्रहर में क्या कार्य करने को बोला है और उस प्रहर में वैज्ञानिकों ने Circadian Rhythm से क्या प्रक्रिया बताई है वह कुछ इस प्रकार है-

TimeScience (C.R.)	Jainism (Samachari)	
6.30-9.30 AM	Sharpest blood pressure rise	स्वाध्याय
9.30-12.30 PM	Alertness	ध्यान
12.30-3.30 PM	Fastest co-ordination time	भिक्षाचरी
3.30-6.30 PM	Fastest reaction time	स्वाध्याय
6.30-9.30 PM	Highest blood pressure	स्वाध्याय
9.30-12.30 AM	Melatonin secretion starb	ध्यान
12.30-3.30 AM	Deep sleep	निद्रा (शयन)
3.30-6.30 AM	Body temprature begins rise	स्वाध्याय

भगवान ने साधु की यह समाचारी 8 प्रहर के माध्यम से बताई है वह कितनी Scientific & logical है उसे हम सी.आर. के वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझ सकते हैं जो अन्ततः सिद्ध कर देगा कि हमारे भगवान एक 'महावैज्ञानिक' हैं और उनके द्वारा बताई गई जैन जीवनशैली वैज्ञानिक है।

साधुवर्ग की दैवसिक चर्या प्रथम प्रहर

इस प्रहर में भगवान ने स्वाध्याय करने का कहा है। इस प्रहर में हमारे शरीर में 'Sharpest B.P. rise' होता है। स्वाध्याय करने में मानसिक व्यायाम होता है।

यह एक Scientific fact है कि 'Brain' 20 प्रतिशत ऑक्सीजन उपभोग करता है और जब हम अधिक 'Mental activity' के कार्य करते हैं जैसे कि स्वाध्याय, तब मस्तिष्क को लगभग 50 प्रतिशत तक ऑक्सीजन चाहिए होता है जो मस्तिष्क में रक्त के माध्यम से आता है।

स्वाभाविक तौर पर प्रथम प्रहर में रक्तदाब तेजी से बढ़ता है इसका मतलब रक्त सुलभता से

शरीर के हर अङ्ग में और वैसे ही मस्तिष्क में पहुँच जाता है और इसी वजह से इस प्रहर में स्वाध्याय करना अतिलाभकारी सिद्ध होता है।

दूसरा प्रहर

इस प्रहर में ध्यान करने को कहा गया है। सी.आर. में देख सकते हैं कि इस प्रहर में एकाग्रता (High alertness) होती है। यह सब जानते हैं कि ध्यान में एकाग्रता का होना अनिवार्य है।

विज्ञान यह कहता है कि हमारी एकाग्रता तब होती है जब सूर्य आकाश में अपने उच्चतम बिन्दु पर होता है जो लगभग 12 बजे या 2 पोरसी के समय होता है। इसलिए अधिकतर साधक दूसरे प्रहर में ध्यान करते हैं और हमें भी यह संस्कार दिये जाते हैं कि 12 बजे कम से कम 4 लोगस्स का ध्यान करना चाहिए।

तीसरा प्रहर

इस प्रहर में साधुजी को गोचरी लेने जाने और निर्दोष भिक्षा को ग्रहण करने का विधान है।

सी.आर. के हिसाब से इस प्रहर में हमारे शरीर का 'Fastest Cordination Time' होता है।

इसलिए तीसरे प्रहर में पहले भिक्षाटन, फिर आहार इसके अतिरिक्त उपलक्षण से मलोत्सर्ग (शौच) आदि कार्य करने का बताया गया है।

चौथा प्रहर

चौथे प्रहर में स्वाध्याय का विधान है, किन्तु उपलक्षण से प्रमार्जन-प्रतिलेखन तथा ग्लानादि के लिए आहारादि लाना आदि चर्या का भी इसमें समावेश कर लेना चाहिए। सी.आर. के हिसाब से इस प्रहर में स्वाभाविक तौर से हमारा 'Fastest reaction time' होता है।

इससे यह भी सिद्ध हो जाता है कि तीसरे प्रहर में भिक्षा ग्रहण करना अत्यन्त लाभकारी है, क्योंकि चौथे प्रहर में 'Fastest reaction time' होने की वजह से भोजन को रस में परिणत करने का कार्य, पूरे शरीर में पहुँचाने का कार्य, उसे अच्छे से पचाने का कार्य बहुत ही सुलभता से होता है।

साथ ही यह 'Fastest reaction' सिर्फ पाचन में ही नहीं, बल्कि शरीर की प्रत्येक 'Cell' में होता है। इसलिए इस समय प्रतिलेखन एवं स्वाध्याय करना श्रेयस्कर है।

रात्रि के चार प्रहर

1. रात्रि के प्रथम प्रहर में स्वाध्याय करने का विधान है और स्वाभाविक तौर पर इस प्रहर में हमारा बी.पी. उच्च होता है। बी.पी. और स्वाध्याय का लिंक हमने दिन के प्रथम प्रहर में जैसा समझा है, वैसा यहाँ पर भी समझें।
2. रात्रि के दूसरे प्रहर में ध्यान करने का विधान है। व्यावहारिक जगत् में प्रचलित है कि इस प्रहर में निद्रा ले लेनी चाहिए और विज्ञान भी इसका समर्थन करते हुए कहता है कि हमें इस काल में सो जाना चाहिए। पर भगवान ने इस समय 'साधु' को ध्यान करने को बताया है। तब फिर इसे कैसे समझें?

इस प्रहर में स्वाभाविक तौर पर 'Melatonin' जिसको 'Sleep hormone' नाम से भी जाना जाता है वह मस्तिष्क में 'Pineal gland' के द्वारा Secrete होता है (निकलता है)।

'Melatonin' प्रकाश के अभाव में ही Secrete होता है। इसलिए उसका लाभ उठाने के लिए व्यावहारिक जगत् में यह कहा जाता है कि हमें इस प्रहर में सो जाना चाहिए।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण से साधु को अप्रमत्त रहने को कहा गया है और निद्रा एक प्रमाद स्थान है। आत्मलक्ष्यी और मोक्ष अभिलाषी साधु के लिए कम से कम समय प्रमाद में रहना श्रेयस्कर है। इसलिए भगवान ने अपने दिव्य ज्ञान में देखकर इस प्रहर में भी वैज्ञानिक तरह से ध्यान करने का विधान रखा, क्योंकि ध्यान एक तरह की सुप्त-जागृत

अवस्था है, इसलिए 'Melatonin' के उत्पादन और उपभोग में कोई अन्तर नहीं पड़ता। अपितु ध्यान की अवस्था में उसका 'Optimum utilization' होता है। इसलिए हर साधक के लिए श्रेयस्कर यही है कि वह ध्यान करे और अगर वह ध्यान करने मे असमर्थ है तो फिर उसके लिए सबसे अच्छा विकल्प निद्रा लेना ही है।

3. तीसरे प्रहर में विधिपूर्वक सागारी अनशनादि कृत्य करके शयन करना चाहिए।

स्वाभाविक तौर से इस प्रहर में लगभग रात्रि के 2 बजे हमारी 'Deepest sleep' होती है इसलिए इस प्रहर में निद्रा लेना अतिलाभकारी होता है।

4. चौथे प्रहर में निद्रा से मुक्त होकर स्वाध्याय करने का विधान है। इस प्रहर में शरीर का तापमान शुरुआत में निम्न होता है, फिर वह बढ़ने लगता है और शरीर को दिन की गतिविधियाँ करने के लिए तैयार करता है। इसलिए साधक आत्माओं के लिए इस प्रहर में स्वाध्याय आदि कार्य करना श्रेयस्कर है।

निष्कर्ष–उक्त कथन से यह सिद्ध होता है कि जब–जब भगवान की वाणी को विज्ञान की कसौटी पर कसा जाता है, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जब उसका सूक्ष्मता से अवलोकन किया जाता है, तब–तब जिनवाणी शत–प्रतिशत खरी सिद्ध होती है।

इससे यह नि:सन्देह सिद्ध हो जाता है कि भगवान की वाणी सम्पूर्ण रूप से 'Scientific, logical & practical' है। इस सब शोध का एकमात्र ध्येय है कि हमारी श्रद्धा विकसित और दृढ़ हो।

–बी 13, शिवालय मार्ग, सेठी कॉलोनी, आगरा रोड़, जयपुर–302004 (राज.)

जिनवाणी पर अभिमत

(1) जैन जीवनशैली विशेषाङ्क का प्रकाशन स्वागत योग्य है। यह विशेषाङ्क अपने आपमें जीवनचर्या को जैन जीवनशैली के अनुरूप जीने का सशक्त मार्ग प्रशस्त करता है। गुरु भगवन्तों के मुखारविन्द से प्रस्फुटित, आगम सम्मत जिनवाणी व्यक्ति, परिवार, समाज एवं विश्वव्यापी कुटुम्ब के वर्तमान युग में त्रस्त जीवन को सहज, सरल एवं स्वाभाविक जीवन जीने का मार्गदर्शन करती है। प्रस्तुत अङ्क का प्रकाशन विषय–वस्तु की श्रेष्ठता से लेकर सम्पादन के प्रत्येक चरण की श्रेष्ठता के उच्च शिखर पर देदीप्यमान है। वैसे प्रतिमाह 'जिनवाणी' अङ्क की प्राप्ति की आतुरता रहती है, किन्तु दिसम्बर मास में प्रकाशित इस अङ्क ने समस्त आतुरता को अपनी श्रेष्ठ पाठ्यसामग्री से सन्तुष्ट कर दिया है।

शब्दों में समेटना सहज नहीं, महिमा अपरम्पार है।
गुरु चरणों में प्रीत जगी, जिनवाणी ही सार है।।

–रामपाल गोयल, सेवानिवृत्त प्राचार्य, देई, जिला–बून्दी (राज.)

(2) जिनवाणी के 'जैन जीवनशैली' विशेषाङ्क में जैनत्व और जीवनशैली, जैन जीवनशैली में ध्यान, पश्चात्ताप से परिवर्तन ज्ञानी का जीवन, जीवन में संयम का महत्त्व, जैनधर्म में अहिंसा पर अधिक बल क्यों, गुरु का होना क्यों आवश्यक आदि लेख वाचनीय तथा स्तुत्य हैं। यह अङ्क प्रत्येक जैन के लिए संग्रहणीय ही नहीं, बल्कि मननीय और चिन्तनीय है। परिवार के सभी सदस्य बढ़कर आचरण करने की कोशिश करें।

आचार्य हस्ती, आचार्य हीरा, उपाध्याय मानचन्द्रजी हमारे लिये पूजनीय हैं। इनके प्रवचन से हम कृतकृत्य हुए।

–राजूलाल माणिकचन्दजी कोचर, सौभाग्य, सहयाद्रि हॉ. पीछे, वडाला रोड़, नाशिक (महा.)

10 मार्च 2021
जिनवाणी 58
ISSN 2249-2011

धर्म और विज्ञान

विज्ञान पर अहिंसा का अंकुश आवश्यक

डॉ. दिलीप धींग

जैन आगम ग्रन्थ विश्व-साहित्य की अनमोल निधि है। शताब्दियाँ बीत जाने पर भी आगम-साहित्य का महत्त्व न सिर्फ कायम है, अपितु वह निरन्तर बढ़ता जा रहा है। आगमों का महत्त्व कई कारणों से बढ़ रहा है, उनमें ये तीन कारण भी हैं-वैज्ञानिक अनुसन्धान, आगम अनुसन्धान और आगमों की निरन्तर बढ़ती प्रासङ्गिकता। अपने मौलिक दर्शन, व्यावहारिक सिद्धान्तों, स्व-पर हितकारी जीवनशैली और आडम्बर-मुक्त उपासना-पद्धतियों की वजह से जैनधर्म आज विश्व में एक सर्वाधिक वैज्ञानिक और करुणामय धर्म के रूप में प्रतिष्ठित है।

ज्यों-ज्यों विज्ञान और तकनीक का विकास होता गया, जैनदर्शन के सिद्धान्तों और आगम-साहित्य का महत्त्व बढ़ता गया। आगमों में लिखित कितने ही उपयोगी तथ्य, जिन्हें प्राय: नकार दिया जाता था, अब उन्हें बहुत सम्मान के साथ स्वीकार किया जा रहा है। ऐसे तथ्य दार्शनिक, तत्त्वज्ञान सम्बन्धी, जीवन, जगत और समाज से जुड़े हुए हैं। जो बातें विज्ञानियों और अनुसन्धानकर्त्ताओं द्वारा आज कही जा रही हैं, आगम-साहित्य में उनके स्पष्ट या गर्भित निर्देश मिलते हैं और जैन परम्परा में सदियों से उनका अनुपालन होता रहा है। वनस्पति में जीवत्व, शब्द का पुद्गलमय होना, काल और आकाश की अवधारणा जैसे जैनदर्शन के अनेक तथ्य वैज्ञानिक आधार से सिद्ध हुए हैं। द्रव्य, गुण और पर्याय; उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य; जीव और पुद्गल, सृष्टि की अवधारणा आदि अनेक विषयों और तत्त्वज्ञान का जैन ग्रन्थों में बेहद रोचक, तर्कसंगत और अद्भुत वर्णन मिलता है।

जिस प्रकार आज की विज्ञान की किताबों में संसार की नाना वस्तुओं के बारे में अवलोकन, खोज, अनुसन्धान, प्रयोग आदि के परिणाम और निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं, उसी प्रकार जैन आगम ग्रन्थों में जीव, जीवन, जगत् और जगत् की घटनाओं के सम्बन्ध में तथ्यों के क्रमबद्ध, तर्कसंगत और अकाट्य विवरण और विवेचन मिलते हैं। इस प्रकार की व्याख्याओं को वर्तमान में वैज्ञानिकशैली कहा जाता है। विज्ञान ने अपनी उपलब्धियों से मानव जाति को बहुत गहराई तक प्रभावित किया है। इसका विश्वव्यापी परिणाम यह हुआ कि धर्म, दर्शन और परम्परागत मान्यताओं की वैज्ञानिक दृष्टि से तुलना की जाने लगीं तथा उन्हें विज्ञान की कसौटी पर कसा जाने लगा।

यह सच है कि मानव जाति के ज्ञात इतिहास में वर्तमान की वैज्ञानिक और तकनीकी उन्नति आश्चर्यजनक है। वैज्ञानिक तकनीकी क्षेत्र में मानव ने अनेक ऐसी चामत्कारिक उपलब्धियाँ हासिल की हैं, जिनके बारे में कुछ दशकों या कुछ सदियों पूर्व किसी ने कल्पना भी न की होगी। यदि किसी ने कल्पना की भी होगी तो उसकी कल्पना को गप या मिथक कहकर अस्वीकार कर दिया होगा।

जैन आगम ग्रन्थों में कई प्रकार के आश्चर्यजनक तथ्य और निष्पत्तियाँ उपलब्ध हैं। काल प्रभाव से कई तथ्यों और निष्पत्तियों के सूत्र अनुपलब्ध हो गये या संकेत रूप में ही उपलब्ध रह पाये। सूत्र या प्रक्रिया के खो जाने या दुर्बोध हो जाने के कारण अनेक निष्पत्तियों को मौजूदा भाषा या अन्य माध्यमों से समझना या समझाना अत्यन्त कठिन हो गया। जिन तथ्यों को सही रूप में समझा या समझाया नहीं जा सका, उन तथ्यों को कुछ कथित विज्ञानवादियों ने झुठलाने या नकारने का प्रयास किया। वस्तुत: सच्ची विज्ञान दृष्टि रखने वाला किसी महत्त्वपूर्ण निष्पत्ति या तथ्य को नकारने की बजाय विशद विमर्श और अनुसन्धान को महत्त्व देता है। सच्चे

धार्मिक या आध्यात्मिक व्यक्ति को भी अनुप्रेक्षा और नव अनुसन्धान को महत्त्व देना चाहिये। सत्य की साधना में दुराग्रह अवरोध है। जैनदर्शन का अनेकान्त सिद्धान्त दुराग्रह का निवारण करता है तथा सत्य और शोध को क्रमबद्ध तरीके से आगे बढ़ाने का मार्ग सुझाता है।

विज्ञान के कार्य करने की भी अपनी क्रमबद्ध शैली है। विज्ञान के पास हर उपलब्धि का सूत्र और आधार है। जब किसी उपलब्धि या आविष्कार की पूरी प्रक्रिया अथवा सूत्र उपलब्ध होते हैं तो उस उपलब्धि को चमत्कार नहीं माना जाता है। विज्ञान जगत् में उन्हीं उपलब्धियों को मान्य किया जाता है, जिन्हें मौजूदा वैज्ञानिक प्रणालियों और मापदण्डों से सिद्ध किया जा सके। जो तथ्य वर्तमान वैज्ञानिक प्रणालियों के दायरे में प्रयोगसिद्ध नहीं हैं, उन्हें विज्ञान स्वीकार नहीं करता है, चाहे वे तथ्य परम्परागत ढंग से माने जाते हों अथवा जनजीवन में रचे-बसे हों।

अपनी कार्यशैली और प्रयोगधर्मिता के कारण विज्ञान ने अपनी एक साख बनाई। साथ ही वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण मानव को अनेक प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध हुईं। वैज्ञानिक उपलब्धियों से बिना किसी भेदभाव के सभी लाभान्वित होते हैं। विज्ञान का कार्यक्षेत्र धर्म, देश और परम्पराओं से परे होता है। विज्ञान और वैज्ञानिक शिक्षा के कारण कई प्रकार की परम्परागत मान्यताओं और रूढ़ियों को चुनौती मिली। कई मान्यताओं को वैज्ञानिक दृष्टि से पहले गलत कहा गया, बाद में वैज्ञानिक दृष्टि से ही वे मान्यताएँ विज्ञान-सम्मत हो गई तो उन्हें मान लिया गया। विज्ञान जगत् में स्वीकार्यता की यह परम्परा प्रेरणादायी है।

विज्ञान अपने समय में उपलब्ध सीमित उपकरणों और निर्धारित मापदण्डों के आधार पर सदैव असीमित और अज्ञात की खोज करता रहता है। यदि कोई नया तथ्य हाथ लगता है तो विज्ञान उसे स्वीकार करता है। आवश्यकता होने पर विज्ञान अपने निर्धारित मापदण्डों और उपकरणों में समय के साथ परिवर्तन भी करता है। जब डॉ. अल्बर्ट आइन्स्टीन ने सापेक्षता का सिद्धान्त दिया तो विज्ञान के अनेक रुके, अटके और उलझे हुए कार्य आगे बढ़ गये। विज्ञान के क्षेत्र में प्रगति के अनेक नये द्वार खुल गये। जैनदर्शन में अनेकान्तवाद भी सदियों से ऐसा मार्ग खोलता रहा है। जैन ग्रन्थों में अनेकान्त की विशद् आश्चर्यजनक चर्चाएँ और व्याख्याएँ जैनदार्शनिकों की व्यापक वैज्ञानिक दृष्टि की प्रमाण हैं।

अनेकान्त का एक तात्पर्य यह है कि ज्ञात और दृश्यमान जगत् अत्यन्त सीमित है। इसके विपरीत जो अज्ञात और अदृश्यमान है, दिखाई नहीं देता है; वह असीमित है, अनन्त है, अनन्तानन्त है। इस दृष्टि से यह सहज सिद्ध है कि सभी बातों को विज्ञान की कसौटी पर नहीं कसा जा सकता है। यूँ तो विज्ञान अनाग्रही है, लेकिन आग्रही भी है। जो तथ्य विज्ञान के धरातल पर सिद्ध नहीं होते हैं, उन्हें वह अस्वीकार देता है। दूसरी बात यह है कि विज्ञान जगत् में नैतिकता और अनैतिकता, हिंसा और अहिंसा, करुणा और क्रूरता जैसे संवेदनशील विषयों को प्राय: उपेक्षित कर दिया जाता है।

वर्तमान में जीवन और जगत् के सभी या अधिकांश तथ्यों को वैज्ञानिक दृष्टि से देखने और परखने की बात की जाती है। यह ठीक है कि हमें तथ्यों की वैज्ञानिक ढंग से समीक्षा और पड़ताल करनी चाहिये। इससे जीवन तर्कसङ्गत और विवेकसम्मत बन सकता है। हुआ यह कि जीवन में अनावश्यक तर्क तो बढ़ गये और आवश्यक विवेक घट गया। विज्ञान के प्रति गैरजरूरी आग्रह के कारण सम्भवत: ऐसा हुआ।

ज्ञान-विज्ञान की उपासना बहुत पवित्र कार्य है। लेकिन जो मौजूदा विज्ञान (मॉडर्न साइंस) है, वह तो असीम ज्ञान या अनन्त विज्ञान का एक हिस्सा मात्र है। उसके पार भी जीवन असीम-अनन्त है। जैनदर्शन ज्ञान-विज्ञान के साथ अनन्त जीवन की तलाश करता है और अनन्त जीवन में विश्वास करता है। अनेकान्तमय होने के कारण जैनधर्म पूर्ण रूप से वैज्ञानिक धर्म है। लेकिन जैनधर्म अपनी अनेकान्तमयी दृष्टि के साथ हिंसा-अहिंसा, संयम-असंयम आदि के सम्बन्ध में विवेक रखने पर भी बल देता है। यह तथ्य जैनधर्म को विशिष्ट और

विलक्षण बनाता है। वस्तुत: जैनदर्शन जीवन में अहिंसा, संयम और विवेक की प्रतिष्ठा करता है और विज्ञान को विवेक की आँख देता है। जैनदर्शन की यह विवेक-दृष्टि धर्म के नाम पर होने वाले पापों को रोकती है और यही विवेक-दृष्टि विज्ञान के नाम से चल रही मनमानियों और अमानवीय गतिविधियों पर भी अंकुश लगाती है।

विज्ञान ने एक तरफ विकास के अनेक सुविधाजनक प्रतिमान रचे तो दूसरी ओर अनियन्त्रित विज्ञान के कारण विनाश की कई लीलाएँ भी हो रही हैं। विज्ञान की विनाशक और प्रलयंकारी लीलाओं के कारण धरती और मानव जाति कई प्रकार के खतरे झेल रही है। ऐसी विकट स्थिति में विज्ञान पर अहिंसा का अंकुश बेहद जरूरी है। आज जब लगभग हर तथ्य को विज्ञान की कसौटी पर कसने का आग्रह किया जाता है तो आग्रह यह है कि विज्ञान और वैज्ञानिक प्रगति को भी अहिंसा की कसौटी पर कसा जाए।

कोई तथ्य या ज्ञान वैज्ञानिक दृष्टि से सत्य हो सकता है, लेकिन यदि वह मानवीय, नैतिक, सामाजिक और पर्यावरण की दृष्टि से स्वीकार्य नहीं है तो उसके प्रयोग और व्यवहार को धर्म, नीति, समाज या शासन के द्वारा अनुशासित या निषिद्ध किया जाता है। विज्ञान और विज्ञानियों को भी मानवीय और नैतिक मर्यादाओं पर विचार करना चाहिये। विज्ञान का उपयोग इस प्रकार नहीं होना चाहिये कि कोई सामाजिक क्षोभ या जैविक-अजैविक अराजकता फैल जाए।

इस सम्बन्ध में क्लोनिंग का उदाहरण लिया जा सकता है। आधुनिक जीव-विज्ञान में क्लोनिंग, स्टेम सेल जैसी ही एक तकनीक है। विज्ञान जगत् में इसे अलैंगिक प्रजनन भी कहते हैं। वैज्ञानिकों ने यह पता लगाया कि पशुओं की कुछ प्रजातियों में नर-मादा संयोग के बिना ही प्राणियों की प्रतिरूपकीय उत्पत्ति सम्भव है। इसी शोध के आधार पर एक भेड़ को पैदा किया गया था। जिसका नाम डॉली रखा गया। डॉली भेड़ छह वर्ष तक जीवित रही। वैज्ञानिकों ने गाय, भैंस, ऊँट, मछली, बन्दर, घोड़ा अनेक पञ्चेन्द्रिय प्राणियों पर क्लोनिंग तकनीक के प्रयोग किये। ऐसे प्रयोग प्राणी विज्ञान शाखा के चर्चित समाचार बने। लेकिन जब मानव प्रतिरूपण (ह्यूमन क्लोनिंग) की बात आई तो दुनियाभर के धार्मिक, सामाजिक और शासकीय संस्थानों ने इसका विरोध किया। स्वयं वैज्ञानिक समुदाय ने भी ऐसे प्रयोग पर सवाल खड़े किये। बड़ा सत्य यह है कि विज्ञान और वैज्ञानिकों के कार्यों का मूल उद्देश्य भी मानव और मानवता का व्यापक कल्याण ही है, होना चाहिये।

जैनदर्शन ने किसी भी विद्या, विधा, लब्धि, सिद्धि या ज्ञान-विज्ञान की शाखा में अहिंसा, विवेक और मानवता के कल्याण को सदैव वरीयता दी है। विज्ञान युग से पूर्व भी धर्म और तन्त्रवाद के नाम पर पशु-बलियाँ, यहाँ तक कि मानव-बलियाँ भी होती थीं। धर्म के नाम पर पशुओं की बलियाँ और कुर्बानियाँ तो आज के वैज्ञानिक युग में भी हो रही है! कभी कभी तो आज के इस वैज्ञानिक युग में भी मानव-बलि के समाचार सुनने-पढ़ने को मिल जाते हैं! स्पष्ट है कि 'धर्म' शब्द का प्रयोग होने मात्र से कोई भी प्रथा या परम्परा सही या पवित्र नहीं हो जाती है। सच्चा धर्म वह है, जो मनुष्य को अहिंसा और विवेक का चक्षु प्रदान करे।

जैनधर्म ने अपने आरम्भिक प्रागैतिहासिक काल से ही मनुष्य को अहिंसा और विवेक की सम्यग्दृष्टि प्रदान की। इस दृष्टि के पीछे जैनधर्म की सुदृढ़ दार्शनिक और तात्त्विक पृष्ठभूमि है। जैनधर्म एक आत्मवादी धर्म है। जीव, अजीव, जीवन और जगत् के बारे में जैनदर्शन में नितान्त मौलिक तरीके से विचार और विवेचन किया गया है। जैनदर्शन में जीव पर कई दृष्टियों से व्यापक चिन्तन किया गया है। जीव पर विचार किया गया तो जीव को जानने के लिए अजीव पर एवं जीव और अजीव के सम्बन्धों पर भी व्यापक दृष्टि से विचार किया गया।

समझने-समझाने तथा अहिंसा के अधिकाधिक अनुपालन के लिए जीव के अनेक प्रकार के वर्गीकरण किये गये। उनमें एक वर्गीकरण है-जीव के दो प्रकार या भेद। जीव के दो प्रकार में भी अनेक आधार हैं। उनमें एक आधार से जीव के दो प्रकार हैं-सिद्ध और संसारी।

संसारी जीवों के भी अनेक दृष्टियों से अनेक भेद बताए गए हैं। उनमें दो प्रकार के वर्गीकरण में एक प्रमुख वर्गीकरण है–स्थावर जीव और त्रस जीव।

जैनदर्शन में जीवों के जातीय वर्गीकरण के अनुसार स्थावर जीव एकमात्र स्पर्श इन्द्रिय वाले होते हैं। इसे यूँ भी कह सकते हैं कि संसार में जो भी एकेन्द्रिय जीव हैं, वे सारे स्थावर हैं। 'स्थावर' शब्द स्थिरता एवं स्थिति का बोधक है। जो जीव स्वभावत: गतिहीन तथा स्थिर होते हैं, वे स्थावर होते हैं। स्थावर जीव सुख, दु:ख, संकट आदि किसी भी परिस्थिति में एक स्थान से दूसरे स्थान पर गति नहीं कर सकते हैं। स्थावर जीव पाँच प्रकार के होते हैं–पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और वनस्पति। अपने प्राकृतिक स्वरूप में जहाँ भी पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और वनस्पति हैं, वहाँ इनमें चेतना की सत्ता होती है, ये सचेतन, सजीव होते हैं।

पाँच स्थावर काय की अवधारणा जैनदर्शन की मौलिक और निराली अवधारणा है। दो इन्द्रियाँ प्राप्त करते ही जीव स्थावर से त्रस की श्रेणी में आ जाता है। दो के बाद तीन, चार और पाँच इन्द्रियों के प्राणी भी त्रस जीवों की श्रेणी में परिगणित होते हैं। जितने भी चलने–फिरने वाले छोटे–बड़े पशु–पक्षी, जीव–जन्तु, कीट–पतंग, कीड़े–मकोड़े आदि दिखाई पड़ते हैं, वे सारे त्रस जीव कहलाते हैं। चलने–फिरने वाले अनेक जीव ऐसे भी होते हैं, जो प्राय: चर्मचक्षुओं से भी नज़र नहीं आते हैं। उन्हें सूक्ष्मदर्शी यन्त्र से देखा जा सकता है। वे भी त्रस जीव होते हैं। कितने ही त्रस जीव ऐसे भी होते हैं, जिन्हें सम्भवत: आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों से भी नहीं देखा जा सकता है। जैन ग्रन्थों में सभी प्रकार के जीवों का दिलचस्प वर्णन मिलता है।

दुनिया में मोटे तौर पर केवल चलने–फिरने वाले जीवों को ही जीव माना जाता है। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में जब जगदीशचन्द्र बसु ने वैज्ञानिक स्तर पर वनस्पति में जीवत्व सिद्ध कर दिया तो दुनिया वनस्पति में भी जीव मानने लगी। लेकिन वनस्पति में जीवत्व का तथ्य जैनधर्म और दर्शन के लिए कोई नई बात नहीं थी। बीसवीं सदी से पूर्व बड़े–बड़े वैज्ञानिकों को भी यह पता नहीं था कि वनस्पति में चेतना होती है, लेकिन सदियों–सदियों से जैन समाज का बच्चा भी यह जानता था कि वनस्पति में चेतना होती है। वस्तुत: जैनधर्म की यह आदिकालीन या आगमकालीन पर्यावरण चेतना थी, जिसकी वजह से धरती बची, धरती पर वनस्पति बची, वन और वन्य–जीव बचे तथा अन्य जीव भी बचे। इसी चेतना के साथ जैनधर्म ने हमेशा शुद्ध हवा–पानी की उपलब्धता कायम रखने और अग्नि के संयमित उपयोग का सन्देश भी दिया।

जैनधर्म की पर्यावरण चेतना और इसका जीव–विज्ञान अत्यन्त व्यापक, सूक्ष्म और गहरा है। जीव–विमर्श के सम्बन्ध में जैनधर्म सबमें अग्रणी और अनूठा है। इसमें त्रस जीवों की चर्चा है तो स्थावर जीवों की चर्चा भी है। जैनधर्म की अनेक मौलिकताएँ और विशेषताएँ हैं, उनमें स्थावर जीवों का विशद वर्णन भी एक उल्लेखनीय विशेषता है।

यह अच्छा हुआ कि जगदीशचन्द्र बसु ने वैज्ञानिक भाषा में वनस्पति में जीवत्व की सिद्धि की। अधिक अच्छा यह होता कि उनसे पूर्व ही कोई जैनबन्धु वैज्ञानिक प्रणाली से यह कार्य करता या किसी जैन प्रयोगशाला में वैज्ञानिक विधि से यह कार्य होता। आज कहीं से कोई शोध–निष्कर्ष आता है तो हम कहते हैं, यह तो हमारे शास्त्रों में भी लिखा हुआ है। जब लिखा हुआ है तो दुनिया को प्रयोग, प्रमाण और परिणाम के साथ बताना चाहिये था। प्रयोगधर्मी हुए बिना ऐसा होना मुश्किल है।

'जैनधर्म और विज्ञान' विषय अपार सम्भावनाओं से भरा है। इसे आगे बढ़ाने के लिए जैन समाज को अपनी प्रयोगधर्मिता बढ़ानी चाहिये। जैनविद्या संस्थानों और जैनदर्शन के विभागों को जैन प्रयोगशालाओं की स्थापना करनी चाहिये। जिसमें किये प्रयोग, उनके निष्कर्ष और उनके प्रस्तुतिकरण की भाषा एवं शैली इतनी विश्वसनीय हो कि सब उन्हें मानें, वे सन्दर्भ–योग्य और लोकोपयोगी बनें। वस्तुत: शोध एक सतत प्रक्रिया

है। कोई एक शोधकार्य आगे के शोधकार्यों के लिए प्रेरणा बनता या बन सकता है।

जैन ग्रन्थों में वर्णित पाँच स्थावर काय का यह विचार कोई मामूली विचार नहीं है, अपितु प्रकृति और पर्यावरण के सूक्ष्म अध्ययन का विराट् विषय है। वर्तमान के जीव-विज्ञान में भी जो अब तक अज्ञात, रहस्यमय और अविमर्शनीय है, वह जैनदर्शन के जीव-विज्ञान में विद्यमान है। जैनदर्शन का जीव-विज्ञान, जीव-विज्ञान के साथ ही जीवन-विज्ञान भी है और जगत् का विज्ञान भी है।

जैनदर्शन में यह भी बताया गया है कि कोई जीव इस जीवन से पूर्व कहाँ-कहाँ से आ सकता है और मृत्यु होने पर कहाँ-कहाँ यानी किस प्रकार की जीव-जाति में जा सकता है। आधुनिक जीव-विज्ञान और विज्ञान में इस प्रकार की बातों पर कोई चर्चा नहीं होती है। वस्तुतः विज्ञान की भी अपनी सीमाएँ हैं, सीमित क्षमताएँ हैं। इसके अलावा जहाँ तक जीव की बात है; जैनदर्शन और आधुनिक विज्ञान में जीव का स्वरूप अभिन्न नहीं है, भिन्न है। निष्पक्ष और सतत अनुसन्धान से भिन्नता से अभिन्नता और भेद से अभेद की ओर बढ़ा जा सकता है।

-निदेशक : अन्तरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र, 7, अय्या मुदली स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600001

जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका का विवरण

(फार्म 2 नियम 8 देखिए)

1. प्रकाशन स्थान	:	जयपुर
2. प्रकाशन अवधि	:	मासिक
3. मुद्रक का नाम	:	डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, जयपुर
4. प्रकाशक का नाम	:	अशोक कुमार सेठ
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार जयपुर-302003 (राज.)
5. सम्पादक का नाम	:	डॉ. धर्मचन्द जैन
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.)
6. उन व्यक्तियों के नाम व पतेः जिनका पत्र पर स्वामित्व है		सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार जयपुर-302003 (राज.)

मैं, अशोक कुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है।

मार्च 2021

हस्ताक्षर-अशोक कुमार सेठ
प्रकाशक

10 मार्च 2021
जिनवाणी 63
ISSN 2249-2011

आध्यात्मिक-चिन्तन

2021 में 21 दिन का लॉकडाउन?

श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'

(गतांक से क्रमशः)

बहुत कोशिश की, लेकिन आँसू रुक ही नहीं रहे थे ...कोरोना के कारण बैठक तो रखी नहीं ...पर हाँ जो सबसे मुख्य रिश्तेदार थे वह गाँव आये थे ...सान्त्वना प्रकट करके सभी लौट भी गए ..पीछे रह गए ...संजयजी, धर्मपत्नी सरला, बेटा सम्यक्, बहू सलोनी, बेटी सुहानी और कँवरसा...सब चुप ही थे ...बस सब की आँखों के सामने बाऊजी का चेहरा ही नज़र आ रहा था ...संजयजी ने ही चुप्पी तोड़ी ...आप सभी लोग शहर लौट जाओ... मैं 21 दिनों के बाद आ जाऊँगा ...सभी के मन में एक ही प्रश्न था ..क्यों? ..संक्षिप्त-सा उत्तर दिया कि अभी शहर लौटने का मन नहीं है ...गाँव की इस हवेली में बाऊजी की यादें समाई हुई हैं ...यहीं पर कुछ दिन एकान्त में रहकर शहर लौट आऊँगा ...वैसे तो सम्यक् पूरा व्यापार सम्भाल ही रहा था ...फिर भी उसे दो-तीन महत्त्वपूर्ण सलाह दी और चाय-नाश्ते के बाद ....कुछ सन्तप्त मन से सभी शहर लौट गए।

21 दिनों के बाद शाम को संजयजी घर पधारे ...सभी के साथ साथ बेटी और कँवरसा भी बेसब्री से इन्तजार कर रहे थे ...सभी के साथ भोजन के बाद कुछ महत्त्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की ....संघ समाज के पदाधिकारियों से फ़ोन पर कुछ संक्षिप्त बात की और सन्तुष्ट मन से जाकर अपने कमरे में विश्राम करने लगे...और सम्यक् और सलोनी कुछ जरूरी फोन करने लग गए।

अगले दिन सुबह लगभग 11 बजे ...घर के पीछे वाली खाली जगह पर सुविधायुक्त इंतजाम किये गए थे...वैसे तो कड़ाके की सर्दी का मौसम था ...पर फिर भी खिली धूप सुहावनी लग रही थी ....कोविड महामारी के अन्तर्गत ...सरकारी नियमों के अनुसार सीमित मेहमानों को ही आमन्त्रित किया गया था ...मेहमान में नजदीक के रिश्तेदार, मित्रगण, संघ-समाज के गणमान्य लोग इत्यादि सभी थे... सभी मेहमान समय पर पहुँच भी चुके थे ...पर सभी के मन में एक ही प्रश्न था कि कल रात को सम्यक् और सलोनी से फोन द्वारा आज दोपहर के भोजन हेतु आमन्त्रित किया गया था ...लेकिन भोजन किस उपलक्ष्य में आयोजित है? यह किसी भी अतिथि को पता नहीं था ... खैर ...संजयजी ने अपने परिवार के सदस्यों के साथ मिलकर बड़े प्रेम से सभी को भोजन कराया ....तत्पश्चात् सभी मेहमान कुर्सियों पर बैठने लगे ...तब तक तो संजयजी भी भोजन पूर्ण कर पधार गए...और सभी को सम्बोधित करते हुए बोले...

पधारे हुए सभी अतिथियों को सादर जय जिनेन्द्र! आप सभी का बहुत-बहुत आभार प्रकट करता हूँ कि मेरे और मेरे परिवार पर आप सभी का इतना स्नेह है ...कि कल रात को हमारे फोन पर ही आमन्त्रण का ...मान रखते हुए आप सभी हमारे घर-आँगन में पधारे। आप सभी के मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है ...कि किस प्रयोजन से आप सभी को आमन्त्रित किया गया है?

मेरे हाथ में यह एक डायरी है ...जिस पर लिखा है **मेरी वसीयत**....यह मेरे बाऊजी की अन्तिम निशानी है जो उन्होंने मेरे लिए लिखी ...और मैं यह समझता हूँ कि दुनिया में शायद ही किसी पिता ने अपने पुत्र के लिए ऐसी वसीयत लिखी होगी ...बाऊजी ने इसे मार्च में 21 दिनों के लॉकडाउन के दौरान लिखा ...इस वसीयत में कुल 21 पेज हैं। बाऊजी की ही अन्तिम इच्छानुसार ...मैंने शहर की भागदौड़ से दूर गाँव के शान्त माहौल में

...21 दिनों के एकान्तवास यानी एक तरह के आध्यात्मिक लॉकडाउन में प्रतिदिन वसीयत के एक पेज को पढ़ा ....फिर चिन्तन और मनन किया। चूँकि आप सभी को तो इतने दिनों का समय निकालना मुश्किल होगा ...इसलिए इस डायरी का सारांश ....मैं 21 शीर्षक के माध्यम से आपको सुना रहा हूँ ...जो बाऊजी की भोलावण है मेरे लिए ...

1. **सन्तोष :** इच्छाएँ आकाश के समान अनन्त हैं...शान्ति की इच्छा है तो इच्छाओं को शान्त करो ...जिसका श्रेष्ठ उपाय है सन्तोष।
2. **सरलता :** सरलता की लता पर ही धर्म के फूल खिले रहते हैं ...यानी सरल हृदय में ही धर्म टिकता है, इसलिए सरल बनो।
3. **सदाचार :** सदाचार की आधारशिला पर ही अध्यात्म के महल का निर्माण हो सकता है.. इसलिए जीवन में सदाचार को महत्त्वपूर्ण स्थान दो।
4. **सहजता :** सुख हो या दुःख ...हर परिस्थिति में सहज रहने वाला ही सुखी हो सकता है ...सुख में अहंकार मत करना और दुःख में प्रतिकार मत करना।
5. **समता :** न तो किसी से राग करना और न किसी से द्वेष करना... द्वेष तुम्हें इंसान बनने नहीं देगा और राग तुम्हें भगवान नहीं बनने देगा ...इसलिए सामायिक के द्वारा समभाव की साधना करो।
6. **सहनशीलता :** जब तक जीना तब तक सहना ...और सहना सीख जाओगे तो जीना भी सीख जाओगे।
7. **समन्वय :** बाहर में घर-परिवार और संघ-समाज में समन्वय रखना... पर भीतर में स्वयं की आत्मा से समन्वय रखना मत भूल जाना।
8. **सद्संगति :** जैसे फूलों के उपवन में हर कोना सुगन्धित रहता है ...वैसे ही गुणीजनों की संगति से जीवन को सद्गुणों की खुशबू से सुवासित रखना।
9. **सद्भाव :** हमारा भविष्य हमारे वर्तमान के भावों पर निर्भर करता है ...अतः हर जीव के प्रति सद्भाव रखना।
10. **संयम :** पाँचों इन्द्रियों एवं मन पर नियन्त्रण की कला है संयम ...और इस मर्यादा रूपी संयम को जीकर महाव्रतयुक्त संयम को धारण करना श्रेष्ठ कार्य है।
11. **संस्कार :** संस्कार न तो दिए जाते हैं और न ही लिए जाते हैं ... बल्कि संस्कार तो जीए जाते हैं... सुसंस्कारों से युक्त व्यवहार तुम्हारे जीवन की विशेष उपलब्धि मानी जाएगी।
12. **स्वाध्याय :** स्व द्वारा स्व का अध्ययन है स्वाध्याय ...और स्वाध्याय करते रहने से सभी दुःखों से मुक्ति मिलती है.... इसलिए अन्तिम साँस तक स्वाध्याय का आलम्बन बनाये रखना।
13. **सत्य :** सत्य परेशान हो सकता है, पर पराजित नहीं। सत्य के रास्ते पर ही चलना ...क्योंकि यहाँ न तो ज्यादा भीड़ होती है और न ही ज्यादा ट्रेफिक मिलता है।
14. **संवेदना :** वेदना की अनुभूति से संवेदना का जन्म होता है ... दूसरे जीवों के प्रति संवेदना से जीवदया को प्रकट करो तथा स्वजीव के प्रति संवेदना से स्वदया की अनुभूति करो।
15. **सहयोग :** व्यवहार जगत् में आपसी सहयोग से जीव प्रगति को प्राप्त करता है ...अध्यात्म जगत् में भी अनेक भव्य जीवों के सहयोग से जीव अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हो पाता है ...इसलिए स्वयं भी सभी का यथाशक्ति सहयोग करने का प्रयास करो।
16. **सदुपयोग :** मिले हुए का सदुपयोग यानी पुण्य से प्राप्त साधन सामग्री का ...सर्वश्रेष्ठ उपयोग करो ...समय, शक्ति और समझ का पूर्ण सदुपयोग करने वाला ही वास्तविक बुद्धिमान है।
17. **संघसेवा :** चतुर्विध संघ यानी चारों ही तीर्थ ... साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका .... की सेवा

से कर्मों की महानतम निर्जरा होती है ...अतः मन, वचन और काया से संघसेवा में यथासम्भव पुरुषार्थ करो।

18. **समर्पण :** जीव ने अनेक भवों में सर्व तो समर्पित किया, लेकिन स्व को समर्पित नहीं कर पाया ... परम लक्ष्य को पाने के लिए सर्वस्व समर्पण करो।
19. **संवर :** जब तक कर्मों का कर्ज़ा चुकेगा नहीं तब तक जीव अपने परमार्थ को कैसे पायेगा? ...इसलिए नया कर्ज़ा लेना मत और पुराने कर्ज़े को चुकाते जाना .... यानी संवर के कार्यों में आगे बढ़कर पुराने कर्ज़े को चुका देना ....और साथ ही पाप के कार्यों से पीछे हट जाना यानी नया कर्ज़ा मत लेना।
20. **संवेग :** मोक्ष की तीव्र अभिलाषा! संसार के सिर्फ दुःख ही नहीं, बल्कि संसार के सुख की भी चाहत मत रखना ...मात्र स्वाधीन और शाश्वत सुख प्राप्त करने की परम अभिलाषा रखना।
21. **सम्यग्दर्शन :** सम्यग्दर्शन रूपी अनमोल रत्न ... वर्तमान समय में केवलज्ञान के समान है ....अतः इस भव का लक्ष्य निर्धारित करो कि मुझे सम्यग्दर्शन प्राप्त भी करना है और अन्तिम समय तक टिकाये भी रखना है।

आप सभी के मन में जिज्ञासा उत्पन्न हुई होगी ...कि मेरे लिए लिखी गई आध्यात्मिक वसीयत... मैं आप सभी को क्यों सुना रहा हूँ? पर मैं यह पूर्ण विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि ...यह वसीयत सिर्फ मेरे लिए नहीं है, बल्कि हर उस इंसान के लिए है ....जो पूर्ण सुख और आनन्द की तलाश में भटक रहा है। कुल मिलाकर यह कहूँ कि जीवित रहते हुए भी बाऊजी ने मुझे बहुत कुछ दिया...तो जाते-जाते भी इस आध्यात्मिक वसीयत के रूप में वह समझ दे गए ...जिससे मेरा अपराध बोध तो कुछ कम हुआ ही साथ ही आगे के भविष्य के लिए भी सही दिशा निर्धारित हो गई। मुझे याद है कि जब तक बाऊजी ने दुकान सम्भाली ...तब तक वे सिर्फ देशी दवाइयों की ही बिक्री करते थे....वे भी ऐसी शुद्धभावना के साथ ग्राहक को देते ....कि उसका रोग ...आधे से ज्यादा तो उसी समय ठीक हो जाता ...लेकिन मैं ठहरा महालोभी ...मुझे उनकी कमाने की शैली लोकल मालगाड़ी लगती थी जबकि मुझे तो एक्सप्रेस रेलगाड़ी में बैठना था ...अंग्रेजी दवाइयों को बेचकर जल्दी अरबपति जो बनना था ...पर बाऊजी की वसीयत को पढ़कर स्वयं के लालच का भान हुआ...और अब जीवन में सहजता का प्रवेश हुआ।

पिछले सप्ताह यह भी पता चला कि इंग्लैंड से फैले नए कोरोना की एक वैक्सीन के प्रयोग भी फेल हो गए तथा वह वैक्सीन कम्पनी भी बन्द हो गई ....और मेरे उस कम्पनी को दिए एडवान्स के 5 करोड़ रुपए डूब गए ....लेकिन यह नुकसान भी सहजता से स्वीकार कर पाया और यह सन्तुष्टि है कि मैं हिंसात्मक तरीके से बनने वाली वैक्सीन की बिक्री से बच गया। एक समय था ...जब मैं संसार में आगे बढ़ने की सोचता था....पर बाऊजी की वसीयत में इन 21 महान हितकारी शिक्षाओं को पढ़कर अब मैंने संसार से पीछे हटने का संकल्प लिया है, क्योंकि मुझे हर कीमत पर मेरे लोभ को समाप्त करना है। अब मैं लगभग 50 वर्ष का हो चुका हूँ....इन 50 वर्षों में मेरा अधिकतम जीवन ....मौज-मस्ती, शिक्षा-व्यापार, कमाने-खर्चने में ही बीत गया। अब आगे का जीवन मैं **जैन जीवनशैली** पर आधारित ...पूर्ण आध्यात्मिक रूप से ...त्यागमय रीति से सार्थक करना चाहता हूँ ...यानी मुझे सिर्फ व्यापार से ही नहीं...बल्कि सांसारिक कार्यों से भी निवृत्ति लेनी है... और मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि इस धर्मयात्रा में ...जैसा नाम वैसे ही सरल स्वभावी मेरी धर्मपत्नी सरलाजी भी सहयोगी बनकर सच्चे अर्थों में धर्मपत्नी होने का दायित्व निभा रही है। उन्होंने भी मेरे समान... गाँव में **आध्यात्मिक निवृत्तिधाम** में ही रहने का निर्णय लिया है।

अम्माजी और बाऊजी ने ...हमारे दोनों बच्चों में इतने अच्छे और सच्चे संस्कार दिए ....कि हम दोनों पति-पत्नी के इस मंगलमय नवजीवन हेतु बच्चों ने भी

...मुश्किल से ही सही ...पर फिर भी स्वीकृति प्रदान की। बहू तो रोने भी लगी ...लेकिन बहू स्वयं बहुत समझदार भी है और धार्मिक भी ...ऐसी बहू तो बहुत किस्मत वालों को ही मिलती है। हमारे कँवरसा भी धार्मिक संस्कारों से ओतप्रोत हैं ...फिर भी इन बच्चों ने अभी जमाना देखा नहीं है ...मैं सभी रिश्तेदारों से एवं संघ-समाज के सभी अनुभवी श्रावक-श्राविकाओं से आशा रखता हूँ कि आप उन्हें हर परिस्थिति में आत्म हितैषी मार्गदर्शन प्रदान करेंगे।

अनेक श्रोताओं की आँखों से आँसू रुक नहीं पा रहे हैं ...और न ही संजयजी बोलने से रुक पा रहे हैं ... आगे बोले ...आप सभी भाई बन्धुगण एवं रिश्तेदारों का मुझ पर तो बहुत उपकार है ही ....पर उससे भी बहुत ज्यादा उपकार श्रीसंघ रूपी कल्पवृक्ष का है ...जिसकी आध्यात्मिक छाया में बाऊजी ने अपने जीवन का निर्माण तो किया ही ...साथ ही मुझे भी विरासत में ...उसकी शीतल छाया से सन्तुष्टि का सुख प्रदान किया। ऐसे संघ-समाज का ऋण मैं पूरी तरह तो कभी नहीं चुका पाऊँगा ...फिर भी कुछ अंशों में कोशिश करूँगा। लोभवश मैंने अनेक गलत कार्य किये ...मुझे मेरे लोभ का प्रायश्चित्त करना है ... तन-मन-धन का सदुपयोग करना है। मैं और मेरे परिवार ने कल रात को विचार-विमर्श करके आपसी सहमति से 81 करोड़ की राशि संघ-समाज की विभिन्न गतिविधियों में....जिसमें जीवदया, साधर्मिक सहयोग, संस्कार केन्द्र, स्वाध्याय समिति, साहित्य-प्रकाशन इत्यादि सद्कार्यों में अर्पित करने का निर्णय लिया है।

हमारी दुकान के पास ...हमारी जिस जमीन पर हमने शहर का सबसे बड़ा आधुनिक एलोपैथी अस्पताल खोलने का सोचा था ...अब वहाँ पर वह अस्पताल नहीं बनेगा ...बल्कि एक हिस्से में अहिंसात्मक पद्धति का नि:शुल्क चिकित्सालय और दूसरे हिस्से में धर्म स्थानक और पीछे के हिस्से में धर्म-ध्यान करने वाले साधार्मिकों के लिए अतिथिभवन और भोजनशाला के निर्माण का हमने निर्णय लिया है... श्रीसंघ ने एक और महान् उपकार करते हुए मेरी विनति को स्वीकार कर इनके निर्माण और सञ्चालन हेतु स्वीकृति प्रदान की है ...और इन सब निर्माण तथा अन्य व्यवस्थाओं के लिए हमने 31 करोड़ की राशि श्रीसंघ को अर्पित करने का निर्णय लिया है।

मेरी धर्मपत्नी, बहू और बेटी की इच्छानुसार ... 7 करोड़ की राशि से जैन श्राविका मण्डल के अन्तर्गत एक साधर्मिक नारी सहायता केन्द्र खोलने और 11 करोड़ की राशि से प्राणी अनुकम्पा समिति के तत्त्वावधान में गौशाला और पशुपक्षी चिकित्सालय के निर्माण का निर्णय लिया है। इसके अलावा बेटे सम्यक् और कँवरसा की सलाह के अनुसार ...श्रीसंघ की युवा समिति के नियन्त्रण में एक ट्रस्ट की स्थापना कर 10 करोड़ की राशि उसमें जमा कर ...उसके ब्याज की आमदनी से संघ समाज के जरूरतमन्द बच्चों की शिक्षा और साधर्मिक युवाओं के लिए रोजगार प्रबन्धन पर सदुपयोग करने का निर्णय लिया है। चूँकि मेरे बाऊजी ने 81 वर्ष की उम्र पाई, इसलिए सहर्ष कुल 81 करोड़ का सदुपयोग करने का लाभ हमारे परिवार को प्राप्त हुआ है ....जिसमें अस्पताल की ज़मीन और उपर्युक्त सभी योजनाओं की राशि सम्मिलित है।

मुझे अत्यन्त गौरव है कि मेरा बेटा सम्यक् मेरे पर नहीं बल्कि मेरे बाऊजी पर ...यानी अपने दादाजी पर गया है ...वैसा ही सन्तोष ...वैसा ही सादगी वाला जीवन है सम्यक् का ...इसका श्रेष्ठ उदाहरण है कि अगले महीने यानी फरवरी से ही इसने दुकान पर सिर्फ़ देशी दवाइयाँ ही ...वह भी अल्प मुनाफ़े पर ही बेचने का निर्णय किया है और साथ ही मेडिकल उपकरणों की फैक्ट्री बन्द करके उस जगह को साधर्मिक छात्रावास में परिवर्तित करने का निर्णय लिया है, जिसमें जरूरतमन्द विद्यार्थियों के रहने की नि:शुल्क व्यवस्था होगी। मेरे बाऊजी **नाम में नहीं बल्कि काम में विश्वास करते थे**... इसलिए किसी भी भवन या योजना अथवा पत्र-पत्रिकाओं में कहीं भी हमारे गोत्र या परिवार के सदस्य का नाम नहीं, बल्कि हर योजना सिर्फ **परमपिता**

भगवान महावीर के नाम से ही संयोजित और सञ्चालित होगी।

अन्त में ..आप सभी मेहमानों से पूर्ण विनम्रता पूर्वक ...मुख्य रूप से मेरे दो निवेदन भी हैं....

पहला निवेदन यह कि अब से कोई भी सांसारिक यानी पारिवारिक अथवा व्यापारिक मामलों में ..मैं आप सभी को कोई सलाह या मशवरा नहीं दे पाऊँगा... हाँ आध्यात्मिक सुझावों के लिए हमेशा उपलब्ध रहूँगा।

दूसरा निवेदन यह है कि...जैसे बाऊजी **सम्पतराजसा** ने यथा नाम अपनी इस असली **सम्पत्ति** यानी ऐसी वसीयत को मुझे प्रदान कर महानतम उपकार किया है ...वैसे ही आप सभी भी ऐसी आध्यात्मिक वसीयत अपनी सन्तानों के लिए अवश्य लिखें ...जिससे आने वाली पीढ़ियों को आध्यात्मिक संस्कार विरासत में मिल सकें।

मुझे यह बताते हुए भी अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है कि हमने हमारे गाँव की हवेली को **आध्यात्मिक निवृत्तिधाम** का रूप देने का निर्णय किया है ... जो पूर्ण रूप से **जैन जीवनशैली** पर आधारित है। जो भी धर्मानुरागी अपनी रुचि अनुसार अपना समय सामायिक-स्वाध्याय, जप-तप, संवर-पौषध इत्यादि धर्म आराधनाओं में बिताना चाहें तो ...उसमें अलग-अलग मञ्ज़िलों में श्रावक-श्राविकाओं के अलग-अलग व्यवस्था रखी गई है। कोई भी श्रावक-श्राविका जो अपने जीवन के कुछ अंश को अथवा पूर्ण रूप से .... आध्यात्मिक रंग में रंगना चाहे तो ...इस हेतु उनके रहने और सात्त्विक भोजन पानी सहित सभी मूलभूत सुविधाओं की सादगीपूर्ण व्यवस्था की गई है जो पूर्णतया नि:शुल्क है। अतः आप सभी हमें इस सेवा के लाभ का सौभाग्य भी अवश्य प्रदान करावें।

आप सभी अतिथिगण सांसारिक सफलताओं में मेरे साथ थे ...मेरे जीवन की इस सार्थक आध्यात्मिक सफलता में भी आप सभी पधारें...इस हेतु हम सपरिवार आपके आभारी हैं ...कभी किसी अवसर पर हम पति-पत्नी की वजह से आप सभी का अथवा किसी भी जीव का दिल दु:खा हो तो ...हम दोनों ...मन, वचन, काया से खमतखामना करते हैं...और... देव-गुरु-धर्म की असीम कृपा, बाऊजी और अम्माजी की हितकारी शिक्षाओं तथा आप सभी की मंगल भावनाओं के सहकार से ...अपनी इस आध्यात्मिक यात्रा का अब शुभारम्भ करते हैं।

सभी लोग हर्ष-हर्ष का जयनाद करते हुए...कोई भी अपनी जगह पर कैसे बैठा रह सकेगा....? सभी अपने स्थानों पर खड़े होकर नतमस्तक हैं ...किसी के भी नयन बिना आँसुओं के नहीं रह सके ...और भावभीनी अनुमोदना के उन आँसुओं में दिख रहे हैं ...**तीर्थंकर भगवान महावीर** द्वारा प्ररूपित ...**त्याग के मार्ग** ...पर बढ़ते दो श्रमणोपासक पथिक .... लोभ की कालिमा से रहित सन्तोष की शुद्ध चादर ओढ़े... 21 आध्यात्मिक गुणों को आत्मसात् करते ....अध्यात्म के पावन पाथेय और ...**तीर्थ** से पवित्र संकल्प के साथ !

-'जिनशासन' बी 102, वीतरागसिटी, जैसेलमेर बाईपास रोड़, जोधपुर-342008 (राज.)

(पृष्ठ 51 का शेषांश)

अपवर्तन के कारण पूर्ण आयुष्य प्रदेशोदय के रूप में भले ही भोगा जाए, किन्तु कालावधि से न्यूनता अवश्य शक्य है। इसे आज की भाषा में अकालमरण कह सकते हैं। अकालमरण को सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से समीचीन कहा जा सकता है। यदि अकालमरण को स्वीकार न किया जाए तो देश के किसी भी कत्लखाने को अवैध नहीं कहा जा सकेगा। अकालमरण को न मानने पर कोई किसी का हन्ता हो ही नहीं सकेगा। किसी को भी किसी का वध करने का दोषी नहीं समझा जा सकेगा। प्रत्येक अपराधी यह तर्क दे सकेगा कि वह तो हत्या का निमित्त मात्र बना है, मृत्यु तो जीव का आयुष्य कर्म पूर्ण होने से हुई है।

-प्रधान सम्पादक, जिनवाणी, जयपुर (राज.)

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

श्री गौत्तमचन्द जैन

स्वस्थ एवं साधक-जीवन के लिए आहार-संकलन एवं लेखन-सौ. मंगला चोरड़िया। **सम्पादक**-डॉ. धर्मचन्द जैन, नेहा चोरड़िया। **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सुबोध बॉयज सीनियर सैकेण्डरी स्कूल के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003, फोन 0141-2575997, Email : sgpmandal@yahoo.in, **अन्य प्राप्ति-स्थल**-श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर-9462543360, श्री पदमचन्दजी कोठारी, अहमदाबाद-9429303088, श्री नवरतनजी भंसाली, बेंगलूरु-9844148943, श्री प्रकाशचन्दजी सालेचा, जोधपुर-9461026279, श्री मनोजजी संचेती, जलगाँव-9422591423, **प्रथम संस्करण**-2020, **पृष्ठ**-126+18=144, **मूल्य**-40 रुपये।

प्रस्तुत पुस्तक में सामान्य मनुष्य एवं साधक के लिए आहार के सम्बन्ध में विभिन्न पहलुओं से विस्तृत जानकारी प्रस्तुत की गई है। वर्तमान में प्राय: लोग स्वाद के वशीभूत होकर खाद्य-अखाद्य वस्तुओं का भक्षण कर लेते हैं और परिणामस्वरूप बीमार हो जाते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में भोजन के सम्बन्ध में सभी महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाये गये हैं और उनका तर्कसङ्गत, धर्मसम्मत और स्वास्थ्य के लिए हितकारी जवाब भी प्रस्तुत किये गए हैं। जैसे कि भोजन किस प्रकार किया जाए और कब किया जाए? भोजन कितनी मात्रा में किया जाए? क्यों किया जाए और भोजन कैसा होना चाहिये? भोजन का हमारे शरीर के साथ-साथ मन पर भी कैसे प्रभाव पड़ता है?

आहार के सम्बन्ध में शरीर विज्ञान, आयुर्वेद तथा स्वास्थ्य की दृष्टि से भी विचार प्रस्तुत किये गये हैं। प्रस्तुत पुस्तक में आवश्यकतानुसार जैनागम और अन्य शास्त्रों से भी उद्धरण प्रस्तुत किये गये हैं, जो प्रासङ्गिक एवं ज्ञानवर्धक हैं। आधुनिक जंकफूड, फास्टफूड एवं कोल्डड्रिंक आदि के दोषों की ओर भी ध्यान आकर्षित किया गया है। एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु पर भी ध्यान आकर्षित किया गया है कि साधु-साध्वियों को अपनी संयम-यात्रा के निर्वाह हेतु गृहस्थियों के घर से आहार प्राप्त करना होता है, इसलिये गृहस्थ यदि शुद्ध, सात्त्विक एवं पौष्टिक आहार करेंगे तो साधु-साध्वियों को भी शुद्ध एवं सात्त्विक आहार सुगमता से सुलभ हो सकेगा।

प्रस्तुत पुस्तक में साधारण गृहस्थ और साधक (साधु-साध्वी) के लिए भी आहार के सम्पूर्ण तथ्यों के बारे में विस्तार से बताया गया है। सभी मनुष्यों के लिए रात्रि भोजन, मांसाहार तथा शराब आदि मद्य-पदार्थों को सर्वथा त्याज्य बताया गया है। पुस्तक को आहार विषयक पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है। साथ ही परिशिष्ट में आठ महत्त्वपूर्ण विषय सम्मिलित किये गये हैं। जैसे कि भोजन में बेमेल वस्तु का सेवन नहीं किया जाना चाहिये, जीवन का आधार-स्तम्भ आहार, आयम्बिल तप के लाभ, लाभदायी उपवास, मोटापा दूर करने के उपाय, धनादि से अतृप्ति और आगमों के उद्धरण। अन्त में आहार सम्बन्धी कतिपय कविताएँ भी दी गई हैं।

वास्तव में यह पुस्तक सभी स्वास्थ्य-प्रेमीजनों के लिए अतीव उपयोगी है और पठनीय है। इसके अध्ययन से हमें खाद्य-अखाद्य का विवेक प्राप्त होता है और हम सरलता से रोगों से बचते हुए अपने स्वास्थ्य को अच्छा बनाये रख सकते हैं और अनेक प्रकार की हिंसा से भी बच सकते हैं। पुस्तक में आहार के सम्बन्ध में दी गई जानकारी सभी के लिए अनुकरणीय एवं लाभदायक है।

बोध कथाएँ-संकलन-सम्पादन-सम्पतराज चौधरी। **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सुबोध बॉयज सीनियर सैकेण्डरी स्कूल के

ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003, फोन 0141-2575997, Email : sgpmandal@yahoo.in, **अन्य प्राप्ति-स्थल**-श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर-9462543360, श्री पदमचन्दजी कोठारी, अहमदाबाद-9429303088, श्री नवरतनजी भंसाली, बेंगलूरु-9844148943, श्री प्रकाशचन्दजी सालेचा, जोधपुर-9461026279, श्री मनोजजी संचेती, जलगाँव-9422591423, **प्रथम संस्करण**-2021, **पृष्ठ**-110+8=118, **मूल्य**-40 रुपये।

प्रस्तुत पुस्तक में दिल को छू लेने वाली 101 लघु कथाओं का संग्रह है। ये कथाएँ बालकों में सत्संस्कारों का वपन करने वाली हैं। प्रस्तुत कथाएँ मानवीय चेतना को झकझोरने वाली और सम्यक् दिशा का बोध कराने वाली हैं। जीवन से जुड़ी हुई ये कहानियाँ नैतिकता, प्रामाणिकता, क्षमा, परोपकार, करुणा, सहनशीलता, सत्य, श्रम और त्रुटि-सुधार आदि मानवीय मूल्यों की शिक्षा एवं प्रेरणा प्रदान करने वाली हैं। कहानियों की शैली रोचक, सरस, सुन्दर एवं सरल है, जो बालकों को सरलता से समझ में आ जाती है। पुस्तक छोटे बालकों के लिए तो उपयोगी है ही, युवा पीढ़ी एवं बुजुर्गों के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। बुजुर्ग एवं युवक भी इन कहानियों से प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं और बच्चों को कहानियाँ सुनाकर अच्छे संस्कारों से संस्कारित कर सकते हैं।

विचार वीथिका-लेखक-प्रो. (डॉ.) आई. एम. खींचा, **प्रकाशक**-निरन्तर प्रकाशन, जी-1/14, रीको द्वितीय, गायत्री नगर, ब्यावर-305901 (राज.), **प्रथम संस्करण**-अप्रेल, 2020, **पृष्ठ**-152, **मूल्य**-आपका स्नेह।

प्रस्तुत पुस्तक 'विचार वीथका' में डॉ. खींचा ने हमारे जीवन से सम्बन्धित विविध विषयों पर अपने विचार प्रस्तुत किये हैं, जो हमारे जीवन के लिए अति महत्त्वपूर्ण एवं जीवन को सम्यक् दिशाबोध कराने वाले हैं। लेखक ने अपने जीवन के अनुभव एवं अधीत आगम-साहित्य तथा श्रुत प्रवचनों का सार इस पुस्तक में पाठकों के समक्ष तर्कसङ्गत रूप में प्रस्तुत किया है। लेखक ने पुस्तक को हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा के रूप में दो भागों में विभाजित किया है। प्रथम हिन्दी भाग में लेखक ने 38 लेख प्रस्तुत किये हैं जिनमें कतिपय चिन्तनीय विचार एवं कविताएँ भी सम्मिलित हैं। लेखों में जीवन के सत्य, नैत्यिक जीवन, जीवनशैली के बदलाव, घर आखिर घर, अवसर बनाम चुनौती, सफलता और विफलता, जीवन की ढलती साँझ, प्रार्थना और समय-प्रबन्धन आदि अनेक जीवनोपयोगी विषयों के सम्बन्ध में सुन्दर विचार प्रस्तुत किये गये हैं। इसके साथ ही समसामायिक विषयों पर भी लेखक ने अपने विचार स्पष्ट रूप से लेखों के माध्यम से व्यक्त किये हैं। महात्मा गाँधी के दर्शन को चार अध्यायों के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए उनकी वर्तमान में प्रासङ्गिकता बतलायी है। इसी प्रकार से श्रमण भगवान महावीर के सिद्धान्तों को सात अध्यायों के माध्यम से सुन्दर तरीके से समझाया है और उनकी जीवन में उपादेयता बतलाई है। लेखक ने नमो सिद्धाणं विभाग में गुरु प्राज्ञ, आचार्य जीत, गुरुमाता अर्चना, आचार्य सोहन और आचार्य महाप्रज्ञ के जीवन एवं उनकी शिक्षाओं तथा उनके लोकोपकारी कार्यों का परिचय कराया है।

अंग्रेजी विभाग में लेखक ने Modern Economics v/s Economics of life, Man and Time Management, Our Achievements and Paradoxes आदि विषयों पर अपने महत्त्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किये हैं। इसके साथ ही Behaviour Management- A Few Basics में जीवन व्यवहार के उपयोगी सूत्र बताये हैं। अन्त में A Few Valuable Collections दिये गये हैं।

प्रस्तुत पुस्तक जीवनोपयोगी एवं ज्ञानवर्धक है और सभी के लिए पठनीय है।

-पूर्व डी.एस.ओ., 70, 'जयणा', विश्वकर्मा नगर-द्वितीय, महारानी फॉर्म, जयपुर (राजस्थान)

10 मार्च 2021
जिनवाणी 70
ISSN 2249-2011

रिपोर्ताज

आचार्य श्री हस्ती दीक्षाशताब्दी सम्पूर्ति सप्ताह के अविस्मरणीय पल

श्री ऋषभ जैन

अध्यात्म योगी युगमनीषी पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. की दीक्षाशताब्दी को पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुर व्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. की सन्निधि में सवाईमाधोपुर में 7 से 13 फरवरी, 2021 तक उत्साह, उमङ्ग एवं तप-त्याग पूर्वक मनाया गया।

शिक्षक सेवा सोपान कार्यक्रम का सफलतम आयोजन (7 फरवरी, 2021)-स्वनाम धन्य जन-जन के आराध्य पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी महाराज साहब का महनीय जीवन रहा। जिनके जीवन में महावीर का महावीरत्व था, गौतम सी लघुता थी, जम्बू सा वैराग था, स्थूलिभद्र सा शील था और सुधर्मा सा अगाध ज्ञान था। सम्पूर्ण जीवन मंगलमय आदर्श और प्रेरक उदाहरणों का संगम था। उन्हीं गुरु हस्ती का यह वर्ष दीक्षा शताब्दी वर्ष के नाम से चर्चित और प्रसिद्ध रहा।

इस शताब्दी वर्ष के शुभ अवसर पर सवाईमाधोपुर क्षेत्र में **आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुर व्याख्यानी परम श्रद्धेय श्री गौतम मुनिजी महाराज साहब** आदि ठाणा 3 ने महावीर भवन का यशस्वी चातुर्मास सम्पन्न करके उपनगरों में विचरण किया है। इस दीक्षा शताब्दी के सम्पूर्ति दिवस से ठीक पूर्व सम्पूर्ण नगर परिषद् क्षेत्र में सप्त दिवसीय विविध धार्मिक कार्यक्रम आयोजित किए गए। प्रथम कार्यक्रम शिक्षकों की प्रज्ञा एवं प्रतिभा के संघ-उन्नयन में विनियोजन के उद्देश्य को लेकर **धार्मिक शिक्षक सेवा-सोपान, शिक्षक सम्मेलन** एवं **संस्कार केन्द्र कार्यशाला** के शिक्षक एवं निरीक्षकों के सम्मेलन का आयोजन रखा गया। इस कार्यक्रम के आह्वान पर अनेक रत्नसंघीय राजकीय/निजी क्षेत्र सेवारत एवं सेवानिवृत्त शिक्षक पोरवाल-पल्लीवाल क्षेत्र तथा संस्कार केन्द्र के सञ्चालक उपस्थित हुए। उनकी उपस्थिति समारोह का गौरव बढ़ा रही थी।

इस कार्यक्रम में प्रातः कालीन रविवारीय कक्षा के बाद प्रवचन रखा गया जिसका विषय था 'शिक्षक सेवा सोपान' जिसके अन्तर्गत **श्रद्धेय श्री अविनाशमुनि जी म.सा.** ने शिक्षकों के दायित्व का भली-भाँति परिचय करवाते हुए सुन्दर विवेचन किया। मुनिश्री ने फरमाया कि शिक्षक जीवन-निर्माण का सूत्र बताते हैं और जो देव को जानता है, जो गुरु को मानता है, जो धर्म को जीता है वही ज्ञानियों की नज़र में शिक्षक है।

तत्पश्चात् जैन जगत् के मूर्धन्य विद्वान्, जिनवाणी के प्रधान-सम्पादक **डॉ. धर्मचन्दजी जैन** ने अपने विचार रखे। अनेक विषयों को छूते हुए विद्वान् महोदय ने शिक्षकों के कर्त्तव्यों को याद दिलाया और उनके गौरव का स्मरण करवाया। प्रधान-सम्पादक महोदय ने बताया कि संघ उन्नयन में पहले व्यक्ति आत्म विकास करे और फिर दूसरों का भी विकास करे, सभी के विकास में सबकी आत्मा के विकास का भाव रखे। देव-गुरु-धर्म के प्रति अटूट आस्था रखे, श्रावक व्रतों का स्वरूप समझे, व्रतधारी बने और अहिंसा, शीलव्रत इत्यादि व्रतों का पालन करे। बिना व्रत धारण किये हम श्रावक कहलाने के अधिकारी नहीं हैं। कम से कम एक व्रत तो अवश्य ग्रहण करे और एक व्रतधारी श्रावक बनें। उन्होंने सम्बोधित करते हुए कुछ मुख्य सूत्र दिये-जिसमें नियमित सामायिक करने और सामायिक में स्वाध्याय करने का सन्देश निहित था।

पूज्य आचार्य भगवन्त श्री1008 श्री हस्तीमल जी

म.सा. के शब्दों में आपने फरमाया कि व्यवसायी, शिक्षक और प्रशासक यदि तीनों नैतिकता का जीवन जियें तो सम्पूर्ण भारत भ्रष्टाचार मुक्त हो सकता है। मधु इकट्ठा करने वाली मधुमक्खी के समान बनें, मल ग्रहण करने वाली मक्खी के समान नहीं। बाँस भी परस्पर लड़कर भस्म हो जाते हैं, अत: पारस्परिक कलह से बचना श्रेष्ठ है। समाज के बीच सुई धागा बनकर आपस में जोड़ने का कार्य करें। कैंची बनकर काटने का प्रयास नहीं करें। अपने उद्‌बोधन को पूरा करते हुये डॉ. साहब ने धर्म शिक्षा में मन क्यों नहीं लगता, प्रश्न के समाधान में बताया कि पहले हमें कामवासना को शान्त करना होगा, दूसरा मोह की प्रबलता को कम करना होगा और लोभ को भी शान्त करना होगा तो धर्म में रस स्वत: आने लगेगा।

तत्पश्चात् श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. ने प्रसाङ्गिक प्रवचन फरमाया कि शिक्षक और सड़क दोनों एक जैसे हैं जो दूसरों की मञ्ज़िल के मार्गदर्शक होते हैं। शिक्षक का चरित्र छात्र और समाज के लिए पाठशाला होता है। शि-शिखर, क्ष-क्षमा, क-कमजोरी अर्थात् जो छात्र को शिखर पर ले जाने के लिए क्षमा धारण कर कमजोरी दूर करता है वह शिक्षक कहलाता है।

महाराज साहब श्री ने लोगों से अपील करते हुए कहा कि बिना संस्कार की शिक्षा ठीक ऐसी ही है जैसे- डॉक्टर ने मरीज का ऑपरेशन तो सफल किया, लेकिन मरीज बच नहीं पाया। इसलिए शिक्षा के साथ संस्कार जरूरी हैं। बात को आगे बढ़ाते हुए महाराज साहब ने हृदयस्पर्शी उदाहरणों के साथ आदर्श शिक्षक का स्वरूप बताते हुए फरमाया कि माता-पिता भी प्रथम शिक्षक होते हैं।

जैसे गुरु हस्ती की माँ ने एक सफल शिक्षिका बनकर अपने पुत्र को वे संस्कार दिये जो आगे चलकर जिनशासन की महान हस्ती के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। आज यहाँ उपस्थित शिक्षक हैं उनसे इतना ही निवेदन है कि-**शिक्षक का चरित्र छात्र और समाज के लिये पाठशाला होता है।**

प्रवचन पश्चात् मध्याह्न के कार्यक्रम में डॉ. धर्मचन्दजी जैन की सन्निधि में शिक्षकों ने अपने-अपने परिचय के साथ अपने सुन्दर विचार प्रकट किये। साथ ही शिक्षकों के इस सम्मेलन में शिक्षकों का एक संगठन गठित कर राजकीय सेवारत अध्यापक श्री निर्मलजी जैन समिधिवालों को संयोजक और अध्यापक श्री विनयजी जैन बजरिया को सचिव के रूप में नियोजित किया।

इस सुन्दर कार्यक्रम का आयोजन गुरु कृपा से श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ शाखा हाऊसिंग बोर्ड को मिलने से संघ के सभी सदस्यों ने अपने आपको धन्य-धन्य अनुभव किया।

स्वाध्यायी सम्मेलन का आयोजन (8 फरवरी, 2021)

गुरु हस्ती की दीक्षा शताब्दी वर्ष का उत्साहजनक माहौल, हर तरफ हलचल, एक ही चर्चा एक ही स्वर, धन्य हो गया हमारा सवाईमाधोपुर शहर जहाँ हमें गुरु हस्ती दीक्षा शताब्दी सम्पूर्ति कार्यक्रम मनाने की सौगात मिली। स्वाध्यायी सम्मेलन के कार्यक्रम के अन्तर्गत 'स्वाध्याय' विषय पर प्रवचन करते हुये सन्तों ने हर स्वाध्यायी को प्रभावी प्रेरणा दी और मुनि श्री ने एक ही बात की अपील की कि-हर स्वाध्यायी एक नया स्वाध्यायी तैयार करे। स्वाध्यायी में ही गुरु हस्ती की आत्मा बसती है। गुरु हस्ती ने युग की नब्ज़ को पहचानते हुए युगानुकुल सामायिक और स्वाध्याय के रूप में एक समाधान का वरदान दिया।

राष्ट्रीय उपाध्यक्ष **श्री कुशलचन्दजी गोटेवाला** ने हर स्वाध्यायी का सम्मान करते हुये आम-जनता से अपील की कि इन स्वाध्यायियों से प्रेरणा लेकर हम भी आठ दिन के लिए सन्त-जीवन जैसी त्यागमय जीवनशैली अपनाने का संकल्प करें।

श्राविकाओं और बालिकाओं में गुरु-भक्ति, संघ-भक्ति की बहार (9 फरवरी, 2021)

9 फरवरी का दिन महिला वर्ग और बालिका वर्ग से जुड़ा हुआ था। आज हर महिला चाहे वह बहू हो या

सास और हर बालिका के क़दम शहर के महावीर भवन की ओर बढ़ रहे थे। हर महिला लाल चुनरी की साड़ी में सजी सँवरी नज़र आ रही थी तो बालिकाएँ अपने निश्चित गणवेश में अलग जोश के साथ दिख रही थी। देखते ही देखते महावीर भवन का विशाल हॉल पुरुषों से और विशेषकर महिलाओं और बालिकाओं से खचाखच भर गया।

श्रद्धेय श्री अविनाशमुनिजी म.सा. ने बहुत ही सुन्दर प्रेरक प्रभावी उद्बोधन में बहनों को इंगित करते हुये कहा-''आपकी भूमिका माँ, बहन, पत्नी के रूप में है। आप हर भूमिका में पुरातन महासतियों के जीवन को याद कर वैसा ही जीवन जीने का संकल्प ग्रहण करें।''

श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. ने अपने चिर-परिचित अन्दाज़ में मातृ-शक्ति को जाग्रत करते हुए गुरु हस्ती की माता का संकल्प याद दिलाया। एक माँ ने गुरु हस्ती के व्यक्तित्व को निखारने में कैसे अद्भुत साहस का परिचय दिया। मुनि श्री ने उत्तराध्ययनसूत्र के 14वें अध्ययन का जिक्र करते हुये फरमाया कि-एक वह नारी कमलावती थी, जिसने अपने पति इषुकार राजा को चेतावनी के स्वर में सम्बोधित करते हुये कहा-''हे राजन्! जिन भृगु पुरोहित द्वारा त्यागी हुई सम्पत्ति को आप ग्रहण कर रहे हो। यह तो वमन किये हुए को चाटने जैसा है।'' कमलावती महारानी यही नहीं रुकी और अपने पति राजा से कहने लगी-

मरिहिसि रायं ! जया तया वा, मणोरमे कामगुणे पहाय।
एक्को हु धम्मो नरदेव ताणं, ण विज्जइ अण्णमहेह किंचि।।

-उत्तराध्ययनसूत्र, 14.40

अर्थात् हे राजन्! एक दिन मनोरम कामभोगों को छोड़कर जब मरोगे, तब एकमात्र धर्म ही रक्षक होगा। हे नरदेव! इस संसार में मृत्यु के अवसर पर धर्म के अतिरिक्त और कोई रक्षा करने वाला नहीं है।

बहनों मुझको एक का जवाब देना जहाँ एक महिला अपने पति के दीर्घायु की शुभकामना के लिए दिनभर भूखी रहकर करवा चौथ करती है। क्या कोई महिला अपने पति के लिए मृत्यु की बात भी मुँह से निकाल सकती है? मगर कमलावती महारानी एक सन्नारी थी, जैन सिद्धान्तों की जानकार थी। इसी कारण उसने सच्चाई का बोध कराया, परिणामस्वरूप राजा भी रानी के साथ संयम मार्ग पर आगे बढ़ने का संकल्प ग्रहण कर लेता है।

मैं उपस्थित बहनों से इतना ही कहना चाहूँगा कि आप चन्दनबाला नहीं बन सकें तो कोई बात नहीं, मगर चेलना बनकर घर परिवार में, परिजनों को धर्म के सम्मुख कर एक नया वातावरण बनायें। श्रद्धेय मुनि श्री ने उपस्थित 21सूत्रीय नियमों को पढ़कर जीवन में धारण करने का आह्वान किया।

प्रवचन के ठीक उपरान्त मुणोत भवन की ऊपरी मञ्ज़िल पर पुनः कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। जिसके मुख्य वक्ता **डॉ. सुषमाजी सिंघवी, जयपुर** थे। बहनों के मंगलाचरण के पश्चात् मुख्य वक्ता ने अपने प्रभावी उद्बोधन में अपरिग्रह सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया और अपनी असीमित इच्छाओं का सीमाकरण करने की नसीहत दी। साथ ही क्रूरता से बनी कॉस्मेटिक चीजों का बहिष्कार करने और हिंसा जनक पदार्थों का उपयोग नहीं करने की प्रेरणा दी। उन्हीं के आह्वान पर बालिकाओं के एक संगठन श्री जैन रत्न युवती मण्डल का आगाज हुआ, जिसमें अध्यक्ष और मन्त्री का चयन किया गया तथा उनको अपने दायित्व से भली-भाँति परिचित करवाया। आज के इस कार्यक्रम की चारों तरफ चर्चा थी, धूम थी कि ऐसे ही कार्यक्रम से भविष्य की मज़बूत इमारतें खड़ी होती हैं और लम्बे समय तक यह ऊर्जा बनी रहती है।

सन्तों से पावन प्रेरणा पाई-युवाओं ने आत्म-जागरणा दिखलाई (11 फरवरी, 2021)

कार्यक्रम की अगली कड़ी में महावीर नगर, मण्डी रोड़ में 11 फरवरी का युवाओं से जुड़ा हुआ दिन था। कार्यक्रम संक्षिप्त जरूर था, मगर प्रभावी था। समय युवाओं को प्रातः 7:30 बजे का दिया, पर कहना होगा

हर युवक के मन में आज की इस कार्यशाला में भाग लेने की आतुरता थी, उत्साह था और जागरूकता भी थी। देखते ही देखते युवाओं का सैलाब उमड़ पड़ा और आज की कार्यशाला के मुख्य वक्ता, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष, जयपुर के जौहरी भाई श्री जितेन्द्रजी डागा जिन्होंने अपने मार्मिक उद्बोधन में जो चर्चा की, युवाओं ने उन्हें अपलक सुना और उनकी धारा प्रवाह शैली से सब मुग्ध थे। उन्होंने गुरु हस्ती के प्रेरक-प्रसङ्गों का उल्लेख करते हुए चार बिन्दुओं पर विस्तार से वर्णन किया-1. लक्ष्य का निर्धारण, 2. संघ का दर्द, 3. प्रेम और समन्वय एवं 4. सामूहिक विकास। विस्तार से इनकी व्याख्या करते हुए उन्होंने युवकों को अपने दायित्व से अवगत कराया। इस पावन प्रसङ्ग पर ग्यारह सूत्रीय संकल्प अपने जीवन में अनुकूलतानुसार ग्रहण करने का आह्वान किया गया।

साधना का शिखर दिन आया-हर भक्त के मन उल्लास छाया (13 फरवरी, 2021)

आज का दिन हर किसी के श्रद्धा से जुड़ा हुआ था। भक्ति से जुड़ा हुआ था। हर कोई आज के दिन की बेसब्री से इन्तज़ार कर रहा था। बड़ी आतुरता से प्रतीक्षारत था। हर किसी के दिल में उमङ्ग और उल्लास का भाव था। समर्पण का ज्वार था, तपस्या का, सामायिक का, व्रत नियम करने का उत्साह ठाटे मार रहा था। आखिर वह पल, वह घड़ी, वह क्षण, वह स्वर्णिम दिन आ ही गया। विशाल पण्डाल की पहले से ही रचना थी, देखते ही देखते पण्डाल तो भरा ही, बैठने की अतिरिक्त व्यवस्था करनी पड़ी। सभी की नज़रें सन्तों पर टिकी थीं, वक्ताओं पर टिकी थीं, सभी शान्त भाव से, एकाग्र मन से सुनने को तत्पर थे।

आखिर आज का दिन **गुरु हस्ती की दीक्षा शताब्दी** सम्पूर्ति दिवस से जुड़ा हुआ था। महावीर नगर, मण्डी क्षेत्र में प्रवचन का प्रारम्भ करते हुए **श्रद्धेय श्री अविनाशमुनिजी म.सा.** ने गुरु हस्ती की अनेक विशेषताओं का जिक्र करते हुए 7 संकल्पों के आधार पर गुरु हस्ती का गुणगान कर सबको संकल्पित करने की प्रेरणा दी।

तदनन्तर आज के मुख्य वक्ता अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के **पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री ज्ञानेंद्रजी बाफना**-जो गुरु हस्ती की निकट सन्निधि का लाभ उठाए हुए थे, आज गुरु हस्ती के अनेक संस्मरणों का उल्लेख कर जनमानस को गुरु-भक्ति से आन्दोलित करते हुए बताया कि-

पूज्य गुरुदेव का विहार सोजत की ओर होने की चर्चा थी , मैं पूज्यपाद के चरणों मे बैठा था। सहज ही मैंने बालचेष्टा भरा प्रश्न कर लिया-''भगवन्! सोजत में तो अपने घर नहीं हैं।'' तत्काल उन महापुरुष का उत्तर था-''जब तक मेरे ज्ञान, दर्शन, चारित्र निर्मल हैं तब तक सभी क्षेत्र, सभी घर हमारे अपने ही हैं और जिस दिन इस चदरिया में कोई भी दाग लग गया, तो तुम भी मेरे नहीं रहोगे।'' पूज्य गुरुदेव की ज्ञान-दर्शन-चारित्र की निर्मलता के प्रति कितनी सजगता, संयम बल पर कैसा विश्वास और अन्तर्हृदय में कैसी साम्प्रदायिक निरपेक्षता। आज भी उन महापुरुष के चरणों में बिताये गये क्षण हृदय को श्रद्धा, भक्ति तथा उदारता से सराबोर कर देते हैं। संगठन तथा जैन एकता के बारे में गुरुदेव अक्सर दो उदाहरण फरमाते-देश में वायुसेना, थलसेना, और जलसेना अलग-अलग हैं, पर सबका एक ही लक्ष्य हैं-राष्ट्र की सुरक्षा एवं कभी-भी देश खतरे में हो तो सब सेनाएँ एक होकर सुरक्षा के उपाय करेंगी। ऐसे ही विभिन्न सम्प्रदायों की अलग-अलग व्यवस्था होकर भी सबका एक ही लक्ष्य जिनशासन की रक्षा हो तथा जब भी जैनत्व का सवाल हो तो सभी सम्प्रदाय जिनशासन के झण्डे तले एक होकर एक ही लक्ष्य से कार्य करें। जैन एकता नारंगी की तरह न होकर, खरबूजे की तरह हो। खरबूजे की भाँति ऊपरी व्यवस्थाएँ भिन्न-भिन्न हों, पर अन्तर्हृदय से सबका एक ही लक्ष्य जिनशासन की उन्नति और सुरक्षा हो।

श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. जिन्होंने

बचपन से ही गुरु हस्ती के चरणों की सन्निधि पाई, जिनके प्रेम, प्रेरणा और प्रोत्साहन से अपने जीवन को आगे बढ़ाया, ने श्रद्धा से सराबोर हो, गुरु-भक्ति से जुड़कर जो बातें सुनाई, उन्हें सुनकर हर व्यक्ति गद्‌गद् था, श्रद्धासिक्त था और अन्तर्हृदय की भक्ति से भीगा-भीगा था। महसूस कर रहे थे कि गुरु हस्ती का जीवन चलचित्र की तरह नज़र आ रहा है। मुनिश्री ने फरमाते हुये कहा-''कुछ व्याख्यान ऐसे हुए जिनसे जीवन बना, कुछ जीवन ऐसे हुये जिन पर व्याख्यान होता है।''

जीवन के दो तट हैं-जन्म और मरण। लेकिन न जन्म की महिमा है और न ही मरण की। महिमा है दो तटों के बीच बहने वाली संयम सरिता की।

गुरु हस्ती ने अपने 71 वर्ष संयम पर्याय को निर्दोष और निरतिचार रखा। यह वह संयम है जिसे देखकर नयसार के भव में महावीर की आत्मा ने सम्यक्त्व को पाया, मृगापुत्र ने विरक्ति का भाव जगाया और श्रीकृष्ण तथा श्रेणिक राजा ने दलाली कर तीर्थंकर गोत्र का उपार्जन किया।

गुरु हस्ती की संयम-साधना इतनी प्रखर और प्रेरणास्पद थी कि जिसमें उस साधक आत्मा में पंच-परमेष्ठी के दर्शन होते थे।

अरिहन्त सा अतिशय तुम्हारा, सिद्ध सम सुखधाम हो।
आचार से आचार्य हो, श्री संघ के विश्राम हो।
श्रुतज्ञान में उवज्झाय हो, निर्ग्रन्थ सी आराधना।
तुम पंच-परमेष्ठी स्वंय हो, भाव से नित वन्दना।

ज्योंही प्रवचन पूर्ण हुआ, सञ्चालक महोदय सेवानिवृत्त अध्यापक **श्री त्रिलोकचन्दजी जैन** ने जब गुरु-भक्ति के नाम पर तप-त्याग का अर्घ्य अर्पित करने का आह्वान किया तो सर्वप्रथम तेले तप के प्रत्याख्यान लेने का निवेदन किया तो चारों और पण्डाल के हर कोने में तेले तप के प्रत्याख्यान लेने वालों की लाइन लगी हुई थी। अनगिनत लोगों ने एकाशन व्रत के प्रत्याख्यान ग्रहण किये।

इस दीक्षा शताब्दी के सम्पूर्ति सप्ताह के कार्यक्रमों के अन्तर्गत 101 से अधिक तेले हुए या लगभग 501 एकाशन व्रत का जो संघ ने लक्ष्य रखा था वह देखते-देखते ही सहज में पूरा कर हो गया। साथ ही नौ की तपस्या का एक, आठ की तपस्या के दो और पाँच की तपस्या के दो, चौला एक, उपवास, आयम्बिल, एकलठाणा, नीवीं आदि के प्रचुर मात्रा में प्रत्याख्यान हुये।

साथ ही नौ जनों ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत ग्रहण कर गुरु-भक्ति का परिचय देकर अनन्त कर्म निर्जरा का सुयोग पाया-1. श्रीमती मंजूजी-श्री मोहनजी जैन सर्राफ, बजरिया 2. श्रीमती रजनीजी-श्री पदमचन्दजी गोटेवाला, बजरिया 3. श्रीमती मधुजी-श्री धर्मेन्द्रजी जैन, हाऊसिंग बोर्ड 4. श्रीमती रामजानकी जी-श्री रमेशचन्दजी जैन, हाउसिंग बोर्ड 5. श्रीमती पुष्पलताजी-श्री जम्बूकुमारजी जैन, महावीर नगर 6. श्रीमती शान्तिदेवीजी-श्री महावीरप्रसादजी जैन, महावीर नगर 7. श्रीमती शिमलादेवीजी-श्री ताराचन्दजी जैन, सवाई माधोपुर 8. श्रीमती धन्नादेवी जी-श्री पारसजी जैन चौधरी, सवाईमाधोपुर 9. श्रीमती शीलाजीजैन-श्री अशोकजी (कैथूदा वाले), बजरिया।

पूरे शहर भर में हर व्यक्ति की ज़ुबान पर एक ही चर्चा थी कि यह केवल मेला ही नहीं था, ऐसा तप-त्याग युक्त कार्यक्रम निश्चित ही अदभुत, प्रशंसनीय एवं अवर्णनीय कहलायेगा और यह आज का कार्यक्रम भविष्य में एक आदर्श उदाहरण के रूप में याद रखा जाएगा।

-आवासन मण्डल, सवाईमाधोपुर (राज.)

जिनशासन कहता है कि मानव! कोई भी प्रवृत्ति करो उससे पहले देखो-भालो और ख्याल करो कि तुम्हारे चलने से, खाने से, उठने-बैठने से, सम्भाषण करने से किसी को तकलीफ तो नहीं।

-आचार्यश्री हस्ती

10 मार्च 2021
जिनवाणी 75
ISSN 2249-2011

रिपोर्ताज

तपस्विनी बहिन बिन्दुजी मेहता की 150 दिवसीय तपस्या के पूर का पीपाड़ में उत्सव

श्री गिर्राज जैन

परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की पावन सन्निधि एवं कृपा प्रसाद से श्राविका रत्न श्रीमती बिन्दुजी मेहता (सुपुत्री सुश्राविका श्रीमती बीनाजी-भागचन्दजी मेहता, जोधपुर) ने 26 फरवरी, 2021 को 150 दिवसीय तपस्या पूर्ण की। यह दिन सम्पूर्ण संघ में एक उत्सवभरा दिन रहा। देश-विदेश में इस तप की अनुमोदना में तेला, बेला, उपवास, एकाशन, आयम्बिल आदि विविध प्रकार के तप सम्पन्न हुए। उपवास तप की साधना प्राय: हर नगर-ग्राम में उत्साह पूर्वक की गयी। इस तपस्या की सही संख्या तो गणना के पश्चात् ज्ञात हो सकती है, किन्तु फिर भी सहस्राधिक लोगों के द्वारा इस तप की अनुमोदना में अर्घ्य अवश्य अर्पित किया गया। श्राविका रत्न बिन्दुजी मेहता के पूर्व श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ में सुश्राविका श्रीमती इचरजकँवरजी लुणावत, जयपुर ने सन् 1974 में 165 दिवसीय तप किया था।

पीपाड़ के आचार्य श्री जयमल जैन स्वाध्याय भवन में श्राविका रत्न बिन्दुजी मेहता की 150 दिवसीय दीर्घ तपस्या के उत्सव का आयोजन किया गया। अखिल भारतीय संघ के महामन्त्री की सूचना पहले से ही प्रसारित होने के कारण बाहर के लोगों का आगमन अत्यल्प रह गया। क्योंकि जोधपुर जिले में कलेक्टर के द्वारा कोरोना के दूसरे दौर को देखते हुए धारा 144 लागू कर दी गयी थी। फिर भी निकटवर्ती क्षेत्रों से संघ सदस्यों का पीपाड़ में प्रात:काल से आगमन प्रारम्भ हो गया था। सामायिक की वेशभूषा में बैठे श्रावक-श्राविकाओं के कारण भवन में चतुर्विध संघ सुशोभित हो रहा था। प्रवचन सभा में सर्वप्रथम श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. एवं मनीषमुनिजी म.सा. का पदार्पण हुआ। मुनिश्री के मंगलाचरण के पश्चात् **महासती श्री कान्ताजी म.सा.** ने प्रवचन सभा में तपस्या का महत्त्व बताते हुए तपस्विनी बहिन बिन्दुजी की भक्ति एवं शक्ति का प्रतिपादन किया। तदनन्तर सभी महासतियों ने समवेत स्वर में गीतिका प्रस्तुत की-'करके तपस्या जिसने आत्मन तारी, रत्नसंघ में खिली एक फुलवारी।'

महासती श्री विमलावतीजी म.सा. ने अपने उद्बोधन में कहा कि गुरु हीरा की कृपा एवं अतिशय से आज बिन्दु बहिन की तपस्या पूर्ण होने जा रही है। रत्नसंघ के लिए यह गौरव की बात है। श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. ने ''आत्मा हूँ आत्मा, मैं स्वयं परमात्मा, देह है विनाशी रे, मैं अविनाशी रे'' मंगलाचरण के साथ प्रवचन प्रारम्भ करते हुए फरमाया कि जंगल में रहा कचरा दावानल से, समुद्र में रहा कचरा बड़वानल से और आत्मा में रहा हुआ कर्म रूपी कचरा तप से समाप्त होता है। तपस्या से कषाय नहीं बढ़े एवं आहार से प्रमाद नहीं बढ़े, इस बात का खयाल रखना चाहिए। तपस्या करने के पहले इन छह चीजों का ध्यान रखना चाहिए-(1) डिनर, (2) डाईनिंगटेबल, (3) टाइम (4) प्लेट (5) हेल्थ (6) इण्टरनल थोट। चार कारणों से तपस्या करनी चाहिए-(1) विकारों की शान्ति के लिए, (2) विचारों की शुद्धि के लिए, (3) वैराग्य की वृद्धि के लिए (4) वीतरागता की पुष्टि के लिए।

श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. ने ''जीवन सफल बनाना, वीर जिनराजजी'' भजन प्रस्तुत करते हुए फरमाया कि मोक्ष मार्ग के चार कारणों में ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप तथा दान, शील, तप, भाव में चौथा पाया भाव सभी में समाहित है। तप की परिभाषा बताते हुए फरमाया कि त-तत्काल, प-पवित्र अर्थात् जो आत्मा को तत्काल पवित्र करें उसे ही तप कहा जा सकता है। महावीर की साधना का क्रम बताते हुए फरमाया कि-तपस्या करने के लिए तीन चीजों की आवश्यकता रहती है-(1) दृढ़ संकल्प, (2) अखण्ड साधना और (3) अटूट समाधि। जीव शक्ति और भक्ति दोनों होने पर ही तपस्या में आगे बढ़ सकता है, बिन्दुजी ने अपने घर के सदस्यों की संख्या 5 के बराबर 5 मासक्षपण अर्थात् 150 दिवस की तपस्या पूरी की है।

सभा सञ्चालक श्री सुमतिचन्दजी मेहता ने बहिन बिन्दुजी की भावना प्रस्तुत करने के लिए उनकी माताश्री बीनाजी मेहता को आमन्त्रित किया। गीतिका के माध्यम से बिन्दुजी की भावना माताश्री बीनाजी ने प्रस्तुत की।

तपस्विनी बहन के मामा **श्री राजेन्द्रजी बीराणी** एवं बुआजी **मैनाजी डोसी** ने भी अपने उद्‌गार व्यक्त किये। तपस्विनी बहिन बिन्दुजी के भाई **बृजेशजी मेहता** ने अपनी भावना व्यक्त करते हुए कहा कि 'मेहता कुल का भाग सवाया-गुरु हीरा का आशीष पाया' हम सबको गुरु हीरा क्या मिले-बिन माँगे सब मिला।

तपस्विनी बहिन की माताश्री **श्रीमती बीनाजी मेहता** ने गीतिका के रूप में अपनी भावना व्यक्त की, **'अनेक भवों की फली साधना-बिन्दु कर पायी तपस्या की बड़ी आराधना'** भगवान महावीर के शासन में, गुरु हीरा के कृपातिशय से एवं श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. की पावन प्रेरणा से बिन्दु इस तपस्या के लक्ष्य तक पहुँची है। गुरुदेव के प्रति आस्था, श्रद्धा एवं समर्पण का ही प्रतिफल रहा कि पुण्यधरा पीपाड़ में गुरुचरणों में अपनी श्रद्धा की अभिव्यक्ति की है। पीपाड़ ही नहीं पूरे देश में अथवा विदेश में भी गुरुभक्ति एवं अनुमोदना के कार्यक्रम सम्पन्न हुये। आप सभी श्रावक-श्राविकाओं के सक्रिय सहकार एवं सहयोग से ही बिन्दु इतनी बड़ी तपस्या कर पायी है। कोरोना गाइड लाइन के कारण अनेक श्रावक-श्राविका आज इस कार्यक्रम में उपस्थित नहीं हो सके, लेकिन मेरे परिवार द्वारा एवं संघ द्वारा आह्वान करने पर सभी स्थानों पर एकाशन, आयम्बिल, उपवास एवं तीन या पाँच सामायिक की साधना के कार्यक्रम सम्पन्न हुये हैं। मैं तहेदिल से सभी श्री संघों का एवं श्रावक-श्राविकाओं का आभार व्यक्त करती हूँ तथा तपस्या के दौरान पीपाड़ संघ को सम्पूर्ण व्यवस्था के लिए श्रावक संघ, युवक परिषद्, श्राविका मण्डल, बालिका मण्डल के सभी पदाधिकारियों एवं कार्यकर्त्ताओं का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। अन्त में अपनी भावना व्यक्त करते हुए कहा कि-''गुरु आपकी कृपा से सब काम हो रहा है।''

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष **श्रीमान् प्रकाशचन्दजी टाटिया** ने सन्त-मुनिराजों द्वारा प्रस्तुत तपस्या के महत्त्व को अपने जीवन में अङ्गीकार करने हेतु प्रेरणा करते हुए कहा कि रत्नसंघ के लिए गौरव की बात है कि बहन बिन्दु ने 150 उपवास की तपस्या करके रत्नसंघ एवं जिनशासन का गौरव बढ़ाया है। मैं मेरी ओर से, संघ की ओर से, संघ के सभी पदाधिकारियों एवं कार्यकर्त्ताओं की ओर से तपस्विनी बहिन बिन्दुजी की तपस्या की सुख-साता पूछते हुए अनुमोदना करता हूँ। साथ ही आपके पिताजी, माताजी एवं परिवारजनों के प्रति आभार ज्ञापित करता हूँ कि आप सभी के सहयोग से ही बहिन बिन्दु की यह भावना सफलीभूत हुई है।

महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने अपने प्रवचन में फरमाया कि जिनशासन जयवन्त है, रत्नसंघ जयवन्त है, क्योंकि इस संघ को गुरु हस्ती, गुरु हीरा जैसे सारथी मिले हैं, गुरु हस्ती एवं गुरु हीरा के शासनकाल में नये-नये आयाम प्रस्तुत हुए हैं जो

हम सबके लिए अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय हैं।

आचार्य हीरा के शासन में चाहे तपस्या हो या दीक्षा हो चाहे संथारे हो, चाहे संयम हो, सभी क्षेत्रों में गुरु हीरा ने अपने गुरु हस्ती के शासन को चमकाया है। गुरु हस्ती एक ऐसा सारथी हम सब लोगों को देकर गये हैं जिनकी छत्रछाया में यह शासन प्रगति के साथ जयवन्त है।

इस तपस्या में बिन्दु की शक्ति एवं मेहता परिवार की भक्ति दोनों समाहित हैं, कोसाना चातुर्मास काल से प्रारम्भ तपस्या पीपाड़ शहर में आकर आज निर्विघ्न पूर्ण होने जा रही है। यह पूज्य गुरुदेव का कृपातिशय है। सभा में अखिल भारतीय संघ द्वारा प्रदत्त अभिनन्दन-पत्र का वाचन श्री प्रकाशचन्दजी सालेचा ने किया। अभिनन्दन-पत्र, प्रशस्ति पत्र एवं रजत पट्टिका संघाध्यक्ष महोदय ने बहिन बिन्दुजी को समर्पित करने लिए प्रदान की।

तपस्या का सम्मान तपस्या से हो, तदर्थ मुमुक्षु बहिन सौ. वनीताजी गेलड़ा ने मासखमण की तपस्या का संकल्प करने के साथ तपस्वी बहिन का चूनड़ी और माला से बहुमान किया। स्थानीय संघ द्वारा प्रदत्त अभिनन्दन-पत्र का वाचन संघ के पूर्व मन्त्री श्री परेशजी मूथा ने किया। प्रशस्ति-पत्र, रजत पट्टिका एवं अभिनन्दन-पत्र श्री श्रेणिकजी कटारिया ने प्रदान किया। तपस्या के सम्मान में श्री सुभाषजी धोका मैसूर, निमाज की धर्मसहायिका जी ने मासखमण की तपस्या के संकल्प के साथ बहन का चूनडी-माला से बहुमान किया।

बिन्दुजी के ननिहाल पक्ष बीराणी परिवार की ओर से प्रदत्त अभिनन्दन-पत्र का वाचन श्री सुमतिचन्दजी मेहता ने किया तथा अभिनन्दन-पत्र बीराणी परिवार के सभी सदस्यों द्वारा समर्पित किया गया।

पीपाड़ श्रीसंघ की सेवाओं को देखते हुए सभी कार्यकर्त्ताओं का व्यक्तिगत सम्मान न करते हुए श्रावक संघ, श्राविका मण्डल, युवक परिषद्, बालिका मण्डल को सामूहिक रूप से सम्मानित करते हुए प्रशस्ति-पत्र मेहता परिवार की ओर से श्री भागचन्दजी मेहता, बृजेशजी मेहता एवं डुग्गुजी द्वारा संघाध्यक्ष श्री श्रेणिकराजजी कटारिया को समर्पित किया गया। मन्त्री के आह्वान पर उपस्थित अनेक श्रावक-श्राविकाओं ने एकाशन, आयम्बिल एवं उपवास के प्रत्याख्यान अङ्गीकार किये। सकल पीपाड़ संघ (चारों सम्प्रदायों) के प्रत्येक घर से कुछ न कुछ तपस्या यथा एकाशन, बियासन, उपवास, बेला, तेला, नींवी आदि तपस्या एवं सामायिक-साधना हुई है। उल्लेखनीय है कि श्रीमती बिन्दुजी मेहता के साढ़े आठ वर्षीय सुपुत्र डुग्गुजी पूज्य आचार्यप्रवर की सन्निधि में ज्ञान-ध्यान सीख रहे हैं।

महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. के मंगल पाठ के पश्चात् प्रवचन सभा में जय-जयकार के नारों से प्रवचन सभा गुञ्जायमान हो गई। तत्पश्चात् तपस्विनी बहिन बिन्दुजी के परिवारजनों एवं श्रावक-श्राविकाओं ने गुरुदेव के चरणों में उपस्थित होकर मांगलिक श्रवण के साथ, मंगल आशीर्वाद प्राप्त किया।

जिनवाणी पर अभिमत

डॉ. अनिल कुमार जैन

जिनवाणी के जनवरी 2021 के अङ्क में श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. का लेख 'आत्म विकास का साधन है पुण्य' बहुत महत्त्वपूर्ण है। जो लोग पुण्य को हमेशा हेय मानते हैं उन्हें इसे अवश्य पढ़ना चाहिए, उनका भ्रम दूर होगा। पुण्य भी आत्म-उत्थान में उपयोगी है, साधना में सहकारी है और असाता वेदनीय के लिए संवर भी है। डॉ. एच. कुशलचन्द का लेख "Jain history, philosophy, beliefs and practice" का पहला भाग भी अच्छा है।

10 मार्च 2021
जिनवाणी 78
ISSN 2249-2011

समाचार विविधा

पीपाड़ की धर्मधरा पूज्य आचार्यप्रवर की सन्निधि में निरन्तर कीर्तिमान की ओर अग्रसर

रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर, आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, सामायिक-शीलव्रत-रात्रिभोजन-त्याग एवं व्यसनमुक्ति के प्रबल प्रेरक, जिनशासन गौरव, **परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी, सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-9 पीपाड़ के श्रीमती शरदचन्द्रिका मुणोत भवन में एवं **व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकँवरजी म.सा. आदि ठाणा-7, महासती श्री दर्शनलताजी म.सा. आदि ठाणा-3** श्री जयमल स्वाध्याय भवन में विराजित हैं।

चतुर्विध संघ समागम, सुदीर्घ तपाराधिका सुश्राविका बिन्दुजी मेहता की उत्तरोत्तर वृद्धिगत तपस्या के चलते अनुमोदन में नियमित भक्ति, तपत्याग, साधना-आराधना, विविध नियम-व्रत, प्रत्याख्यान आदि होने से पीपाड़ की पावन पुण्य धरा पर धर्म गंगा प्रवाहित है।

26 जनवरी को अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की अध्यक्ष श्रीमती मंजूजी भण्डारी, बेंगलोर श्राविका मण्डल की पदाधिकारियों सहित गुरु दर्शनार्थ एवं तपानुमोदनार्थ उपस्थित हुयी। 27 जनवरी को पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. का 111वाँ जन्म-दिवस तप-त्याग एवं सामायिक साधना के साथ मनाया गया तथा सन्त प्रवरों ने पूज्य गुरुदेव का गुणानुवाद किया। 28 जनवरी को जयपुर संघ के अध्यक्ष श्री प्रमोदजी मोहनोत, लालभवन के पदाधिकारी श्री विमलचन्दजी डागा विनति लेकर उपस्थित हुए। 2 फरवरी को अमरावती संघ की चातुर्मास हेतु विनति हुई। 3 फरवरी को श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. के सांसारिक वीरपिता श्री अमरचन्दजी लोढ़ा के देवलोकगमन के पश्चात् वीर परिवार मंगलपाठ श्रवण करने हेतु उपस्थित हुआ तथा खोह श्रीसंघ ने चातुर्मास हेतु विनति रखी। 7 फरवरी को मैसूर श्रीसंघ, 9 फरवरी को पाली श्री संघ ने चातुर्मास हेतु विनति प्रस्तुत की। 11 फरवरी को महासती श्री दर्शनलताजी म.सा. आदि ठाणा-3 का गुरु चरणों में पदार्पण हुआ। शासन सेवा समिति के संयोजक श्री रतनलाल सी. बाफणा के देवलोकगमन के पश्चात् बाफना परिवार के श्री कस्तूरचन्दजी, श्री सज्जनराज, श्री सुशीलजी, श्री सिद्धार्थजी आदि मांगलिक श्रवण करने हेतु पधारे एवं प्रेरक संकल्प किया कि आदरणीय श्री रतनलाल सी. बाफना द्वारा सञ्चालित सभी धर्मार्थकार्य, जीवदया, संस्कार केन्द्र, पाठशाला आदि की गतिविधियों को पूर्ववत् सतत सञ्चालित करते रहेंगे। शासन सेवा समिति के सदस्य श्री गौतमचन्दजी हुण्डीवाल, खेड़ली, नदबई आदि पल्लीवाल क्षेत्र का पर्यवेक्षण करते हुए सन्त-सतीवृन्द के दर्शन करते हुए संघ हित चिन्तन सम्बन्धी दायित्व बोध के साथ गुरु चरणों में उपस्थित हुए। 12 फरवरी को श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. आदि ठाणा-2 का पीपाड़ में गुरुचरणों में पदार्पण हुआ।

आचार्य हस्ती दीक्षा शताब्दी का सम्पूर्ति दिवस-अध्यात्म योगी, युग मनीषी पूज्य आचार्यप्रवर 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. के दीक्षा शताब्दी सम्पूर्ति दिवस के पावन प्रसङ्ग पर पीपाड़ में तेले, बेले, उपवास, आयम्बिल, एकाशन, नींवी आदि विविध तपाराधन हुये। प्रवचन सभा में महासती श्री कान्ताजी म.सा., श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा., महान् अध्यवसायी सरस व्याख्यानी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि ने अपने आराध्य गुरु के विविध संस्मरणों, प्रेरक प्रसङ्गों के माध्यम से गुण स्मरण करते हुए उनके संयमी जीवन एवं आचार्य के रूप में संघोन्नयन एवं अनुशासन, दूरदर्शिता पूर्वक संघ की बागडोर वर्तमान आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. को

सौंपने एवं सहयोगी के रूप में उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. का मनोनयन करने आदि का उल्लेख किया।

गुरुदेव आचार्य श्री हस्ती के सामायिक-स्वाध्याय सन्देश को आत्मसात करने, कराने हेतु चतुर्विध संघ सर्वतोभावेन दीक्षाशताब्दी को स्वर्णिम रूप से मनाने हेतु सक्रिय एवं संलग्न रहा। भावी पीढ़ी धर्म संस्कारों एवं आत्म साधना से युक्त हो, इसलिये सामायिक, प्रतिक्रमण शुद्ध कण्ठस्थ करने एवं अर्थ सहित चित्त में स्थित कर आत्मसात् करने का प्रयत्न लॉकडाउन एवं कोरोना काल में चहुँओर जारी रहा। अखिल भारतीय श्रावक संघ, श्राविका मण्डल, युवक परिषद् एवं सर्वत्र सभी शाखाओं द्वारा कृत गति-प्रगति की जानकारी समय-समय पर सम्बन्धित पदाधिकारियों ने गुरु चरणों में आकर प्रस्तुत की एवं मार्गदर्शन प्राप्त किया।

14 फरवरी को तपागच्छीय श्रद्धेय भुवनभानुसूरिजी के सुशिष्य श्री देवऋषिजी म.सा. दर्शनार्थ उपस्थित हुये एवं सुख-साता की पृच्छा की। सायंकाल श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री विनम्रमुनिजी म.सा. ठाणा-2 का कुड़ी, अरटिया, हीरादेसर, भोपालगढ़ आदि क्षेत्रों को फरसने हेतु विहार हुआ। 15 फरवरी को भरतपुर से श्री राहुलजी जैन, पल्लीवाल सम्भाग के क्षेत्रीय प्रधान श्री राजकुमारजी जैन ने चातुर्मास हेतु विनति प्रस्तुत की। 16 फरवरी को पाटन श्रीसंघ ने व्याख्यात्री महासती श्री मनोहरकँवरजी म.सा. के चातुर्मास की विनति की। 18 फरवरी को पंजाबी सम्प्रदाय के संघ सञ्चालक श्रद्धेय श्री नरेशमुनिजी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री सुप्रज्ञाजी, महासती सुधर्मजी म.सा. आदि ठाणा-5 का पीपाड़ पदार्पण हुआ एवं दर्शन, वन्दन का लाभ लिया। प्रवचन संयुक्त रूप से हुये। श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा., साध्वी सुप्रज्ञाजी एवं महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने धर्मसभा को उद्बोधित किया। 19 फरवरी को हिण्डौन श्रीसंघ चातुर्मास की विनति लेकर आया तथा 20 फरवरी को पंजाबी सम्प्रदाय की महासतियों का जोधपुर की ओर विहार हो गया। 21 फरवरी को प्रतापनगर-जयपुर श्रीसंघ ने चातुर्मास हेतु विनति प्रस्तुत की। 23 फरवरी को महासती श्री सोहनकँवरजी म.सा. आदि ठाणा-7 का साथिन से गुरुचरणों में पदार्पण हुआ। 25 फरवरी को तपस्विनी बहिन श्रीमती बिन्दुजी मेहता ने 148 में दो मिलाकर 150 की तपस्या के प्रत्याख्यान गुरुदेव के मुखारविन्द से ग्रहण किए। इसी दिन श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. एवं श्री विनम्रमुनिजी म.सा. का पीपाड़ पदार्पण हुआ।

पीपाड़ में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के पदाधिकारीगण एवं शाखाओं के पदाधिकारी गण समय-समय पर दर्शन-वन्दन हेतु उपस्थित होते रहे। इनमें श्री धनपतजी सेठिया, श्री मनमोहनजी कर्णावट, श्री सुभाषजी गुन्देचा, श्री प्रकाशजी सालेचा, श्री प्रमोदजी लोढ़ा, श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफणा, श्री नवरतनजी डागा, श्री पारसजी गिडिया आदि ने संघहित चिन्तन कर मार्गदर्शन भी प्राप्त किया। *-गिरीश जैन*

जयपुर-तपस्विनी श्राविकारत्न बिन्दुजी मेहता के 150 उपवास की तपस्या पर 26 फरवरी, 2021 को लालभवन, चौड़ा रास्ता पर व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. की सुशिष्या महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा-4 के सान्निध्य में अनुमोदना-गुणगान दिवस के रूप में मनाया गया। महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा. एवं महासती श्री मधुजी म.सा. ने तप की महिमा बताई एवं कहा कि इतना लम्बा तप आचार्य भगवन्त के आशीर्वाद से सम्भव हो पाया। उनके पुत्र डुग्गुजी की धर्म-रुचि की भी प्रशंसा की गई। यह दिन जयपुर में उपवास-दिवस के रूप में मनाया गया। *-सुरेशचन्द कोठारी, मन्त्री*

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. की दीक्षाशताब्दी की सम्पूर्ति पर देश भर में तप-त्याग

अध्यात्मयोगी युगमनीषी पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. की दीक्षाशती की सम्पूर्ति पर माघ शुक्ला द्वितीया 13 फरवरी, 2021 को देशभर में एकाशन, उपवास, आयम्बिल आदि तप-साधना के साथ पाँच-पाँच

सामायिक की गई। सम्पूर्ण देश में नियमों की पालना करते हुए कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

जोधपुर-जिनशासन गौरव व्यसनमुक्ति के प्रबल प्रेरक परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म. सा. आदि ठाणा 4 चोरड़िया भवन, दिग्विजय नगर में सुख साता पूर्वक विराजमान हैं। नियमित प्रार्थना, प्रवचन एवं आराधना के साथ-साथ ज्ञानार्जन करने वालों का भी उत्साह बना हुआ है। कोरोना काल के लम्बे अन्तराल के बाद सूर्यनगरी जोधपुर में सन्त भगवन्तों के अमृत प्रवचनों की निरन्तर वर्षा हो रही है। जिज्ञासु भक्तजन सदैव जिनवाणी श्रवण का नियमित लाभ ले रहे हैं साथ ही श्रावक-श्राविकाओं में ज्ञान ध्यान सीखने का भी उत्साह है। पौष शुक्ला चतुर्दशी 27 जनवरी, 2021 को जन-जन के आराध्य पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. का 111वाँ जन्म दिवस दिग्विजय नगर में सन्त-सती भगवन्त के पावन सान्निध्य में तप-त्याग एवं धर्म आराधना के साथ मनाया गया। महासती श्री चन्द्रकलाजी म.सा. आदि ठाणा का भी पावन सान्निध्य सभी को प्राप्त हुआ। सन्त-सती मण्डल के मुखारविन्द से गुरु हस्ती के गुणगान सुनकर श्रावक-श्राविका भी अपने आपको गुरु गुणगान करने से रोक नहीं पाए और कई श्रावक-श्राविकाओं ने अपने-अपने वक्तव्य के माध्यम से गुरु हस्ती के गुणगान कर अपनी श्रद्धा अभिव्यक्ति दी। उपाध्यायप्रवर श्रद्धेय श्री मानचन्द्रजी म.सा. का 87वाँ जन्मदिवस 1 फरवरी, 2021 माघ कृष्णा चतुर्थी दिग्विजय नगर में ही विराजमान श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. आदि ठाणा के पावन सान्निध्य में एवं महासती मण्डल के सान्निध्य में धर्म- आराधना एवं तप-साधना के साथ मनाया गया। जोधपुर की पावन धरा पर लम्बे समय तक उपाध्याय भगवन्त का सान्निध्य निरन्तर मिलता रहा, जिसके परिणामस्वरूप श्रावक-श्राविकाओं की अटूट आस्था उनके प्रति उस दिवस को मनाते समय नज़र आ रही थी। हर युवा, बुजुर्ग एवं बच्चे अपने आप को उपाध्यायप्रवर के गुणगान करने से रोक नहीं पा रहे थे और सभी ने अपनी-अपनी भावाञ्जलि प्रस्तुत की। उस दिन स्थानीय संघाध्यक्ष श्री सुभाषजी गुन्देचा एवं युवाध्यक्ष श्री गजेन्द्रजी चौपड़ा के नेतृत्व में मानव-सेवा के कार्य के रूप में लगभग 200 असहाय गरीब लोगों को भोजन कराया गया। 2 फरवरी, 2021 को श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री देवेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 2 का पदार्पण जोधपुर की पावन धरा पर हुआ और श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. ने कुछ ही दिनों में जोधपुर के प्रमुख क्षेत्र फरसते हुए नेहरू पार्क, पावटा आदि स्थानक में जिज्ञासा समाधान रूप में प्रवचन फरमाकर शक्ति नगर की ओर पधारे और लगभग चार-पाँच दिन वहाँ रुककर नियमित जिज्ञासा-समाधान किया। लोगों में एक नया उत्साह देखने को मिला और हर श्रावक-श्राविका अपनी जिज्ञासा लेकर समय पर उपस्थित होते और गुरु कृपा से श्रद्धेय मुनिश्री से अपना उचित समाधान पाकर बहुत ही हर्षित होते। देखते ही देखते चार-पाँच दिन में शक्ति नगर स्थानक में पर्व पर्युषण जैसा माहौल बनने लगा और अच्छी संख्या में श्रावक-श्राविकाओं की उपस्थिति देखने को मिली। 13 फरवरी को पूज्य आचार्य भगवन्त की सेवा में पहुँचने का भाव रखते हुए श्रद्धेय मुनिश्री ने शक्ति नगर से विहार किया। 13 फरवरी को जन-जन के आराध्य पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमलजी म.सा. का 101वाँ दीक्षा-दिवस धर्म धरा सूर्यनगरी में दिग्विजय नगर के चोरड़िया भवन में अच्छी संख्या में श्रावक-श्राविकाओं की उपस्थिति में धर्म-ध्यान के साथ मनाया गया। प्रवचन सभा का सञ्चालन करते युवा साथी श्री तरुणजी बोहरा श्रद्धेय गुरु भगवन्त के जीवन-चरित्र से प्रश्न पूछकर गुरु हस्ती के जीवन-दर्शन को साक्षात् जीवन्त कर रहे थे तो गुरु भगवन्त के मुखारविन्द से गुरु हस्ती के गुणगान सुनकर सभी श्रावक-श्राविका भावविभोर थे। कई श्रावक-श्राविकाओं ने अपनी भावाभिव्यक्ति अपने वक्तव्य के माध्यम से प्रवचन सभा में रखी। श्राविका मण्डल जोधपुर की अध्यक्ष श्रीमती सुमनजी सिंघवी के नेतृत्व में गुरु हस्ती गुणगान एवं तप अनुमोदना का भजन कार्यक्रम आयोजित किया गया। प्रसङ्ग

दिवस के अलावा भी प्रतिदिन जिनवाणी का कार्यक्रम निरन्तर जारी है और स्थानीय लोग बढ़-चढ़कर जिनवाणी श्रवण का आनन्द ले रहे हैं। *-नवरतन गिड़िया, मन्त्री*

अजमेर-पुष्कर रोड़ स्थित स्वाध्याय भवन में जैन समाज द्वारा रत्नसंघ के सप्तम पट्टधर जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. का 101वाँ दीक्षा दिवस उनकी दीक्षा स्थली अजमेर में सामायिक-दिवस के रूप में मनाया गया। प्रात: प्रवचन के दौरान महासती श्री सरलेशप्रभाजी जी म.सा. ने फरमाया कि गुरु हस्ती ने10 वर्ष की आयु में ही अजमेर में संयम जीवन अङ्गीकार किया था। आपने देशवासियों को सामायिक और स्वाध्याय करने का सन्देश दिया। नियमित सामायिक और स्वाध्याय से जीवन सरल तथा समतामयी बनता है और कर्मों की निर्जरा होती है। महासती श्री रक्षिताजी म.सा. और महासती श्री सुयशप्रभाजी म.सा. ने भी प्रवचन दिया। इस अवसर पर श्री सी.पी. गाँधी तथा श्रीमती कल्पनाजी कटारिया ने भजन के माध्यम से गुरु हस्ती का गुणानुवाद किया। दोपहर में महिलाओं के लिए सामायिकसूत्र और 25 बोल आधारित धार्मिक प्रतियोगिता भी आयोजित की गयी। *-चन्द्रप्रकाश कटारिया*

बालोतरा-जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. का 101वाँ दीक्षा दिवस सामायिक-साधना के रूप में मनाया गया। श्री गुरु हस्ती कल्याण संस्थान के मन्त्री श्री ओमप्रकाशजी बाँठिया ने गुणानुवाद सभा में कहा कि-जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. द्वारा सामायिक एवं स्वाध्याय के मंगल सन्देश के साथ ही जैनधर्म का मौलिक इतिहास एवं कई ग्रन्थों की रचना कर जिनशासन को अमूल्य निधि दी गई। आपके द्वारा भारत के विभिन्न क्षेत्रों में मंगल प्रवास कर जिनशासन की अपूर्व प्रभावना की गई, आप साधना में कठोर एवं प्राणिमात्र के प्रति करुणा रखने वाले इतिहास मार्तण्ड, युग मनीषी आचार्य हुए। श्री धनराजजी भण्डारी ने बताया कि श्री जैन रत्न युवक परिषद् एवं श्राविका मण्डल द्वारा जैन पाठशाला में आयोजित सामायिक-साधना दिवस पर श्रावक-श्राविकाओं ने गुणानुवाद करते हुए गीतिकाएँ प्रस्तुत की। गीत प्रतियोगिता एवं चित्रकला प्रतियोगिता आयोजित की गई तथा प्रथम, द्वितीय और तृतीय विजेताओं को पुरस्कृत किया गया। श्रीमती कान्तादेवीजी जागीदार ने आभार ज्ञापित किया। *-ओमप्रकाश बाँठिया*

जयपुर-27 जनवरी, 2021 को परम पूज्य आचार्य भगवन्त 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. की 111वाँ जन्म-दिवस तीन स्थानों पर धूम-धाम से त्याग-तपस्या के साथ मनाया गया। महारानी फार्म के उत्तम स्वाध्याय भवन में साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में, जवाहर नगर में व्याख्यात्री महासती श्री संगीताश्री जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में एवं नित्यानन्द नगर में व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में प्रवचन, उपवास, एकाशन आदि तप-त्याग के साथ यह दिवस मनाया गया। महारानी फार्म में महासतियों ने प्रवचनों के माध्यम से गुरु-जीवन और गुरु के गुणों पर प्रकाश डाला। श्री प्रकाशजी जैन, जिनवाणी सम्पादक डॉ. धर्मचन्दजी जैन ने गुरु-गुणगान करके हमारी आस्था और भक्ति को प्रगाढ़ बनाया। जवाहरनगर में लालभवन के मन्त्री, संघ सरक्षक श्री विमलचन्दजी डागा, डॉ. संजीव जी भानावत, श्री उम्मेदजी मूसल, रितुलजी पटवा ने आचार्य भगवन्त के कई गुणों और उनकी दूरदर्शिता के उदाहरण देकर भगवन्त के गुणगान किए। जवाहर नगर महिला प्रकोष्ठ की सेजलजी जैन और निशाजी जैन ने भजनों के माध्यम से गुरु गुणगान किया। गुरु सूर्य है, चन्द्र है, गुरु है पूर्ण प्रकाश, गुरु चरणों में ही मिलता है हमको पूर्ण सार। जवाहर नगर में कार्यक्रम सञ्चालन श्री नितिनजी दूगड तथा महारानी फार्म में डॉ. धर्मचन्दजी जैन द्वारा किया गया। इसके बाद महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. जवाहरनगर पधार गये और वहाँ पर नियमित प्रवचन 20 फरवरी तक चले। उक्त दिवस को कुल 511 एकाशन, उपवास, बेले, तेले, संवर आदि तप हुए।

13 फरवरी-आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमलजी म.सा. का 101वाँ दीक्षा दिवस एवं साध्वीप्रमुखा महासती श्री

तेजकँवरजी म.सा. का 58वाँ दीक्षा-दिवस भी उपवास दिवस के रूप में मनाया गया। इस दिन भी उपर्युक्त तीनों स्थानों पर महासतियों के प्रवचन हुए और 151 उपवास, एकाशन, दया-संवर आदि के साथ यह दिवस तप-त्याग से मनाया गया। जवाहर नगर में व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. का महारानी फार्म में महासती श्री पुष्पलताजी, महासती श्री दिव्यप्रभाजी, महासती श्री निरञ्जनाजी, महासती श्री चैतन्यप्रभाजी, महासती श्री मैत्रीप्रभाजी म.सा. के प्रवचन हुए बाद में श्री विमलचन्दजी डागा एवं श्री प्रमोदजी मोहनोत ने गुरु-गुणगान किए। साध्वीप्रमुखा महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. भी अन्त में प्रवचन सभा में पधारे एवं अपने उद्‌गार प्रकट किए।

21 फरवरी-श्री जैन रत्न युवक परिषद् और श्री जैन रत्न युवती मण्डल के संयुक्त प्रयास से 'संस्कृति का न्याय अदालत में' के अन्तर्गत चार नाटिकाओं का प्रातः 9 से 12 बजे तक महावीर साधना केन्द्र, जवाहर नगर में आयोजन किया गया। नाटक के विषय बहुत ही मार्मिक थे, विशेषकर युवक-युवतियों में आज की पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते स्वरूप को कैसे न्याय-संगत बनायें। सभी पात्रों ने धारा-प्रवाह रूप से अपने-अपने तर्क दिये। यह कार्यक्रम महासतीजी की अनुपस्थिति में दूसरी मञ्जिल पर हुआ। *-सुरेश कोठारी, मन्त्री*

आवश्यक सूत्र की लिखित परीक्षा 04 जुलाई, 2021 को

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड द्वारा आवश्यक सूत्र की लिखित परीक्षा 04 जुलाई, 2021 को आयोजित की जायेगी। शिक्षण बोर्ड की जुलाई माह में आयोजित होने वाली कक्षा 1 से 12 तक की परीक्षा इस बार नहीं होगी। थोकड़ों की कक्षा 1 से 12 तक की परीक्षा जनवरी-2022 में आयोजित की जायेगी। सभी से विनम्र निवेदन है कि आवश्यक सूत्र की लिखित परीक्षा में स्वयं भी भाग लें तथा अन्य भाई-बहिनों को भी परीक्षा में भाग लेने हेतु अवश्य प्रेरित करने की कृपा करावें। *-सुभाषचन्द नाहर, सचिव*

अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा आयोजित लेख प्रतियोगिता का परिणाम

अध्यात्मयोगी युगमनीषी प्रातः स्मरणीय परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. की दीक्षाशताब्दी के अवसर पर लेख प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें शीर्ष प्रतिभागियों को पारितोषिक प्रदान करने के साथ 10 प्रतिभागियों को सान्त्वना पुरस्कार प्रदान किया जायेगा। सर्वश्रेष्ठ को जिनवाणी पत्रिका में प्रकाशित किया जाएगा।

इस प्रतियोगिता में डॉ. ताराजी डागा-जयपुर, सौ. विजयाजी राजेन्द्रजी मलारा, जलगाँव (महाराष्ट्र) ने लेख जाँच कार्य में सहयोग प्रदान किया। प्रतिभागियों को पारितोषिक श्रीमती निर्मलाजी अमिताजी भण्डारी-बैंगलोर (कर्नाटक) के सौजन्य से दिया जा रहा है। शीर्ष तथा सान्त्वना स्थान प्राप्त करने वाले प्रतिभागी निम्नलिखित हैं:-

शीर्ष प्रतिभागी-प्रथम (2500 रुपये) रेखाजी जसवंतजी नंगावत, मैसूर। **द्वितीय (1500 रुपये)** श्री दिलीपजी गाँधी, बैंगलोर। **तृतीय (1100 रुपये)** अनिलकुमारजी जैन, कोटा। **चतुर्थ (900 रुपये)** कमलाजी हणवन्तमलजी सुराणा, जोधपुर। **पंचम (700 रुपये)** वर्षिताजी जैन, सवाईमाधोपुर।

सान्त्वना प्रतिभागी (प्रत्येक को 250 रुपये)-1. मुस्कानजी जैन, जयपुर। 2. नीरूजी जैन, जयपुर। 3. प्रियाजी सुराणा, किशनगढ़। 4. ललिताजी छाजेड़, बैंगलोर। 5. ज्योतिजी जैन, बारां। 6. टीकमचन्दजी जैन, जयपुर। 7. बरखाजी विकासजी जैन, पाली। 8. सुषमाजी सिंघवी, जोधपुर। 9. ममताजी जैन, कोलकाता। 10. कशिशजी जैन, मैसूर। *-अलका दुधेड़िया, महासचिव, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल*

पर्युषण पर्वाराधना हेतु स्वाध्यायी आमन्त्रित कीजिए

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर विगत 76 से भी अधिक वर्षों से सन्त-सतियों के चातुर्मासों से

वंचित गाँव/शहरों में 'पर्वाधिराज पर्युषण पर्व' के पावन अवसर पर धर्माराधन हेतु योग्य, अनुभवी एवं विद्वान् स्वाध्यायियों को बाहर क्षेत्र में भेजकर जिनशासन एवं समाज की महती सेवा करता आ रहा है। इस वर्ष भी उन क्षेत्रों में जहाँ जैन सन्त-सतियों के चातुर्मास नहीं है, स्वाध्यायी बन्धुओं को भेजने की व्यवस्था है। इस वर्ष **पर्युषण पर्व 04 से 11 सितम्बर 2021** तक रहेंगे। अत: देश-विदेश के इच्छुक संघ के अध्यक्ष/मन्त्री इस हेतु कार्यालय को अपनी माँग सूचित करने का श्रम करावें। **सम्पर्क सूत्र**-संयोजक/सचिव, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, प्रधान कार्यालय-प्लॉट नं. 2, सामायिक स्वाध्याय भवन, नेहरूपार्क, जोधपुर-342003 (राज.) फोन 0291-2624891, 94141-26279 (कार्यालय), 94605-51096 (संयोजक) ईमेल-**swadhyaysanghjodhpur@gmail.com**

बधाई

चेतनप्रकाश कटारिया

हिना बोहरा

शिवांगी भंसाली

प्रतीक कटारिया

प्रेक्षा बाफना

हैदराबाद-वीरभ्राता श्री चेतनप्रकाशजी सुपुत्र वीरपिता श्री राजेन्द्र कुमारजी कटारिया (बिलाड़ा वाले) ने सी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की है। आप रत्नसंघ की महासती श्री स्तुतिश्री जी म.सा. के सांसारिक भ्राता हैं।

मुम्बई-हिनाजी सुपुत्री श्री शान्तिलालजी सुपौत्री स्व. श्री सुगनचन्दजी बोहरा, दौहित्री स्व. श्री धर्मचन्दजी मूथा (निवासी पीपाड़ शहर) चार्टेड अकाउण्टेण्ट (सी.ए.) बन गई।

भीलवाड़ा-सुश्री शिवांगी सुपुत्री श्री महावीरजी-श्रीमती सुनीताजी गाँधी नवम्बर-दिसम्बर 2020 में आयोजित सी.ए. फाइनल की परीक्षा में दोनों ग्रुप पास करके चार्टेड अकाउण्टेण्ट बन गई।

पीपाड़सिटी-श्री प्रतीकजी सुपुत्र श्रीमती संगीताजी-श्री संजयजी, सुपौत्र श्री नन्दलालजी कटारिया ने प्रथम प्रयास में सी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है।

मुम्बई-सुश्री प्रेक्षाजी बाफना सुपुत्री श्रीमती सरोजजी-श्री अमरजी बाफना सुपौत्री श्री कल्याणमलजी बाफना ने प्रथम प्रयास में सी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है। संघसेवी श्री अमरजी बाफना वर्तमान में मुम्बई श्रीसंघ के कोषाध्यक्ष के रूप में अपनी सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं।

इन्दौर-डॉ. अनुपम जैन का अमेरिका में स्थापित जैन वर्ल्ड संस्था द्वारा अपने रजत जयन्ती वर्ष कार्यक्रमों की

शृङ्खला में 'ज्वेल्स ऑफ जैन वर्ल्ड' पुरस्कार हेतु चयन हुआ है। जैन गणित के क्षेत्र में उत्कृष्ट अनुसन्धान तथा आर्यभट्ट से पूर्व जैन ग्रन्थों के शून्य के प्रयोग विषयक आपके आलेखों ने विश्व समुदाय का ध्यान आकृष्ट किया है। आप शासकीय महाविद्यालय, सांवेर के प्राचार्य पद का दायित्व वहन कर रहे हैं। इस पुरस्कार के अन्तर्गत जैन वर्ल्ड संस्था द्वारा डॉ. नलिनी बलबीर (फ्रांस), डॉ. फिलिस ग्रेनॉफ (यू.एस.ए.), डॉ. धर्मचन्द जैन (कुरुक्षेत्र) और डॉ. ऋषभचन्द जैन (वैशाली) भी सम्मानित किए जाएँगे।

-कु. तन्निष्का जैन

जोधपुर-आज्ञा जैन सुपुत्री श्रीमती अंकिताजी-श्री पवनजी, सुपौत्री श्रीमती ताराजी-श्री अमृतलालजी बाफना एवं

महासती श्री कल्पयशाजी म.सा. की सांसारिक दौहित्री ने 8 वर्ष की अल्पायु में प्रतिक्रमण पूर्ण विधि सहित, दशवैकालिकसूत्र (प्रथम अध्ययन पूर्ण), पुच्छिसुं णं, सुखविपाकसूत्र पूर्ण, नमिपवज्जा, भक्तामर स्तोत्र, पच्चीस बोल, 67 बोल, बड़ी साधु वन्दना कण्ठस्थ किए हैं, जो इस उम्र में प्रशंसनीय है।

श्रद्धाञ्जलि

जयपुर-धर्मनिष्ठ, सन्तसेवी, गुरुभक्त वरिष्ठ स्वाध्यायी सुश्रावक श्री बिरदराजजी सुपुत्र स्व. श्री धनराजजी सुराणा

का 10 फरवरी, 2021 को लगभग 90 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। धर्मनिष्ठ, कर्त्तव्य-परायणता, कर्मठ-सेवाभावना, स्वधर्मी वात्सल्य, विनम्रता आदि अनेक गुणों से आपका जीवन ओतप्रोत था। आप सामायिक-स्वाध्याय, पौषध, दया, संवर आदि धर्म-ध्यान करते रहते थे। आप देव, गुरु एवं धर्म के प्रति पूर्णत: समर्पित थे तथा सन्त-सतियों की सेवा में सदैव अग्रणी रहते थे। आपने श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ जयपुर (लाल भवन) के कई वर्षों तक कार्यकारिणी सदस्य के रूप में एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के मन्त्री के पद पर रहते हुए अपनी महनीय सेवाओं से समाज को लाभान्वित किया था। आपका पूरा परिवार रत्नसंघ के समर्पित वरिष्ठ परिवारों में से एक है। आपने स्वयं संस्कारी जीवन व्यतीत करते हुए अपने पारिवारिकजनों को भी धार्मिक संस्कार देने का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया था। साथ ही संघ की विभिन्न संस्थाओं में सेवा प्रदान कर संघ का नाम गौरवान्वित किया था। आप स्वाभाविक सहिष्णुता एवं शिष्टाचार के धनी थे, आपसे मिलने वाला आपका मनमोहक बन जाता था। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के वर्तमान अध्यक्ष श्री चंचलमलजी बच्छावत के आप श्वसुर थे।

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्राविकारत्न श्रीमती कान्तादेवीजी धर्मसहायिका श्री विनयचन्दजी बम्ब का 17 फरवरी, 2021

को स्वर्गगमन हो गया। आप सामायिक-स्वाध्याय करने के साथ लालभवन एवं महावीर भवन में विराजने वाले सन्त-सती मण्डल की गोचरी का विशेष ध्यान रखती थी और उनकी सेवा में सदैव तत्पर रहती थी। आपका पूरा परिवार रत्नसंघ के प्रमुख परिवारों में गिना जाता है। आपके धर्मसहायक श्री विनयचन्दजी जयपुर के लालभवन स्थानक में अध्यक्ष पद को सुशोभित करने के अतिरिक्त अन्य संस्थाओं को अपनी महनीय सेवाओं से लाभान्वित करते रहे हैं। आपका पूरा परिवार धर्मनिष्ठ है एवं सन्त-सतियों की सेवा में सदैव तत्पर रहता है। आप भरापूरा परिवार छोड़कर गये हैं। *-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री*

श्री कालाहस्ती (आन्ध्रप्रदेश)-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री सम्पतराजजी सुपुत्र स्व. श्री माँगीलालजी बाघमार का 03 फरवरी, 2021 को देहावसान हो गया। आप धार्मिक संस्कारों के प्रति जागरूक थे एवं सन्त-सतीवृन्द की सेवा में तत्पर रहते थे। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा के मेड़ता चातुर्मास में आप सहित समस्त परिवारजनों ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण के साथ धर्म-ध्यान का लाभ प्राप्त किया। आपने स्थानीय संघ के अध्यक्ष पद का दायित्व बखूबी निर्वहन किया। स्वधर्मी वात्सल्य एवं आतिथ्य-सत्कार में भी बाघमार परिवार सदैव समर्पित रहा है। मेड़तासिटी में पधारने वाले तथा शेखेकाल सन्त-सतीवृन्द के विराजने पर आप सहित बाघमार परिवार की महनीय सेवाएँ प्राप्त होती है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जोधपुर-धर्मनिष्ठ सुश्रावक, वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री जौहरीमलजी छाजेड़ का 02 फरवरी, 2021 को देहावसान हो

गया। माता-पिता से प्राप्त संस्कारों को आपने अपने समूचे जीवन में बनाये रखा। आपने वरिष्ठ स्वाध्यायी के रूप में स्वाध्याय संघ को महनीय सेवाएँ प्रदान की। साहित्य के प्रचार-प्रसार में भी आपका निरन्तर प्रयास रहता था, उपयोगी साहित्य वितरण में सदैव तत्पर रहे थे। आप नियमित रूप से घोड़ों के चौक स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन पधारकर दया-संवर, पौषध, प्रतिक्रमण, प्रवचन-श्रवण आदि धर्म-ध्यान का लाभ प्राप्त करते थे और सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में सदैव तत्पर रहते थे। रत्नसंघ द्वारा सञ्चालित सभी प्रवृत्तियों में छाजेड़ परिवार का महत्त्वपूर्ण योगदान प्राप्त होता रहा है।

पीपाड़ शहर-उदारमना सुश्राविका श्रीमती भँवरीदेवीजी धर्मपत्नी स्व. श्री नथमलजी चौधरी का 09 फरवरी, 2021 को देहावसान हो गया। सन्त-सतीवृन्द के प्रति आपकी अनन्य आस्था और अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा के पीपाड़ शहर विराजने पर तथा रत्नसंघीय चातुर्मास में आप सहित समस्त परिवारजनों ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण के साथ धर्म-ध्यान का अपूर्व लाभ प्राप्त किया। पीपाड़ शहर में आयोजित दीक्षा समारोह, संघ के समारोह, कार्यक्रमों में चौधरी परिवार का सक्रिय योगदान प्राप्त होता है। पीपाड़ शहर में पधारने वाले सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में आप पूर्ण रूप से सन्नद्ध रहती थी। आपके सुपुत्र श्री धनेन्द्रजी चौधरी ने श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, पीपाड़ शहर के अध्यक्ष पद का दायित्व कई वर्षों तक बखूबी निर्वहन किया। आतिथ्य ही घर का वैभव है, इस पंक्ति को आपने अपने जीवन में साकार किया था।

-धनपत सेठिया, महामन्त्री

नदबई-धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ सुश्राविका श्रीमती गोमतीदेवीजी धर्मपत्नी श्री खेमचन्दजी जैन (डहरा वाले) का 10

फरवरी, 2021 को 68 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपकी धार्मिक, सामाजिक एवं पारिवारिक में अनूठी पहचान थी। आप जैन रत्न श्राविका मण्डल शाखा नदबई की वर्षों तक अध्यक्ष रही। आपने दो वर्षी तप लगातार, अठारह की तपस्या, लगभग 10 अठाई, तेले की तपस्या कई बार, आयम्बिल, ओली, नियमित सामायिक, पौषध, संवर (चार-चार माह चातुर्मास में) किए। 8 से 10 दिन तक लगातार कई बार विहार सेवा का लाभ लिया। लगभग 10 वर्षों से स्वाध्यायी सेवा दे रही थीं। वर्षों से संस्कार केन्द्र का नियमित सञ्चालन कर रही थी। आपका पूरा परिवार कई पीढ़ियों से रत्नसंघ की गतिविधियों में सक्रिय जुड़ा हुआ है। आप इस अवस्था में भी परीक्षार्थी, वीक्षक, निरीक्षक के रूप में ज्ञानार्जन कर रही थी। आपके बड़े पुत्र श्री संजयजी जैन संघ के सक्रिय सदस्य हैं, मध्यम सुपुत्र श्री सुदीपजी जैन (भोपालगढ़ में सह-सचिव जैन रत्न युवक परिषद्) एवं छोटे सुपुत्र श्री पंकजजी जैन मन्त्री-श्री जैन रत्न युवक परिषद्, नदबई है। आपकी पुत्रवधू श्रीमती सुनीताजी, बबीताजी एवं एकताजी जैन महिला मण्डल की सक्रिय सदस्या हैं। देहावसान से 7 दिन पूर्व नित्यानन्द नगर-जयपुर में महासती श्री मुक्तिप्रभाजी म.सा. आदि की 4-5 दिन तक भरपूर सेवा की। *-नरेशचन्द जैन, मन्त्री*

कोटा-धर्मनिष्ठ सुश्राविका वीरमाता श्रीमती प्रेमदेवीजी धर्मसहायिका श्री घनश्यामजी जैन पुत्रवधू स्व. श्री

मथुरालालजी जैन का 30 जनवरी, 2021 को चौविहार प्रत्याख्यान के साथ देहावसान हो गया। आप सन्त-सतियों की सेवा में सदैव अग्रणी रहती थी। आपने तीन वर्षीतप, दो ग्यारह, तेले-बेले आदि की तपस्या की। आपका जीवन सरल, सहज एवं सादगीपूर्ण था। आप रत्नसंघीय महासती श्री रक्षिताजी म.सा. की सांसारिक माताजी थी। आपके श्वसुर एवं धर्मसहायक सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित सत्साहित्य का प्रचार-प्रसार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं।

जोधपुर-अनन्य गुरुभक्त, संघसेवी, धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री देवरूपजी मेहता का 13 दिसम्बर, 2020 को स्वर्गगमन

हो गया। आप एवं आपका पूरा परिवार सन्त-सतीवृन्द की सेवा में सदैव तत्पर रहता है। आपके लघुभ्राता श्री मनीषजी मेहता सन्त-सतीवृन्द के आहार-विहार एवं गोचरी आदि की सेवाओं में सक्रिय रूप से सेवाएँ प्रदान करते हैं। संघ द्वारा सञ्चालित गतिविधियों से आपका परिवार जुड़ा हुआ है।

-धनपत सेठिया, महामन्त्री

जोधपुर-धर्मनिष्ठ श्रावकरत्न श्री माँगीलालजी रांका का 13 फरवरी, 2021 को देहावसान हो गया। आप सन्त-सतीवृन्द की सेवाभक्ति में सदैव तत्पर रहते थे। आप स्वयं ने संस्कारी जीवन जीते हुए अपने पारिवारिकजनों को भी धार्मिक संस्कार देने का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया था। रांका परिवार संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा

है। स्वधर्मी वात्सल्य एवं आतिथ्य-सत्कार में भी रांका परिवार सदैव समर्पित रहा है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जोधपुर-अनन्य गुरु भक्त, सन्तसेवी, श्रद्धानिष्ठ श्राविकारत्न श्रीमती पंखीदेवीजी धर्मसहायिका स्व. श्री

भँवरलालजी पारख (पांचला खुर्द वाले) का संलेखना संथारा के साथ 12 फरवरी, 2021 को प्रयाण हो गया। आप परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा के चातुर्मास में रहकर धर्म-ध्यान का अपूर्व लाभ प्राप्त करती थी। रत्नसंघ द्वारा सञ्चालित सभी प्रवृत्तियों में पारख परिवार का महत्त्वपूर्ण योगदान प्राप्त होता है।

गंगापुरसिटी-धर्मनिष्ठ गुरुभक्त सुश्रावक श्री अशोक कुमारजी सुपुत्र स्व. श्री मदनमोहनजी जैन (प्रेस वाले) का

18 नवम्बर, 2020 को 65 वर्ष की आयु में देवलोक गमन हो गया। आपका जीवन सरलता, मधुरता, उदारता, सेवाभावना आदि सद्गुणों से युक्त था। आप समाज एवं परिवार के लिए एक अनुभवी और अच्छे सलाहकार थे। समय-समय पर आप परिवार सहित सन्त-सतीवृन्द के दर्शन हेतु पधारते थे। आपके बड़े सुपुत्र श्री आशीषजी जैन राजस्थान सरकार में जनसम्पर्क अधिकारी (जयपुर) के रूप में कार्यरत हैं। आपके छोटे सुपुत्र श्री अंकुरजी जैन मारुति कम्पनी (गुरुग्राम) में मैनेजर के रूप में कार्यरत हैं। आपका परिवार धर्मनिष्ठ एवं संघ की गतिविधियों में अग्रणी है। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गये हैं।

नवसारी-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री ज्ञानेश कुमारजी सुपुत्र स्व. श्री रणजीतसिंहजी मुणोत (किशनगढ़-जयपुर निवासी)

का 59 वर्ष की आयु में 26 जनवरी, 2021 को स्वर्गवास हो गया। संघनिष्ठ, कर्त्तव्यनिष्ठ आपका जीवन सरलता, उदारता, सेवाभावना आदि सद्गुणों से युक्त था। आपकी सन्त-सतियों के प्रति अगाध श्रद्धा भक्ति थी। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करने वाले चिन्तनशील श्रावक थे। आप श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ नवसारी के अध्यक्ष पद पर कार्यरत थे।

-अपूर्व जैन

जयनगर (बेंगलूरु)-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती रूपाबाईजी धर्मसहायिका श्री धर्मीचन्दजी भण्डारी (निमाज

निवासी) का 16 दिसम्बर, 2020 को 80 वर्ष की वय में देहावसान हो गया। आप एक सरल, सहज, भद्रिक प्रकृति की बड़ी धर्मवान, पुण्यवान, संस्कारवान, हलुकर्मी श्राविका थी। आपने अपने जीवन में अनेक तप-जप-धर्मानुष्ठान बड़ी श्रद्धा भक्ति से किये जिसके परिणामस्वरूप आपका परिवार फला-फूला एवं व्यापारिक प्रतिष्ठा प्रगति में निरन्तर आगे बढ़ता गया। आप अपने पीछे भरापूरा संस्कार सम्पन्न, समृद्धिवान, धर्मवान परिवार छोड़कर गयी हैं। *-गौतमचन्द ओस्तवाल*

जोधपुर-धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक श्री महावीरचन्दजी भण्डारी (निवासी बारणी) का 13 जनवरी, 2021 को

100 वर्ष की वय में देहावसान हो गया। आप परम पुरुषार्थी, हिम्मतवान, स्पष्टवक्ता, कर्मठ, मेहनती सज्जन पुरुष थे। आचार्य श्री हस्ती, आचार्य श्री हीरा, उपाध्याय श्री मान की आप पर परम कृपा एवं आशीर्वाद था। भण्डारी परिवार बड़ा विशाल गुरुभक्त एवं प्रतिष्ठित परिवार है। आप अपने पीछे श्रद्धानिष्ठ एवं संस्कारवान् परिवार छोड़कर गये हैं।

मदनगंज किशनगढ़-धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक श्री भागचन्दजी जामड़ (डीडवाडा वाले) का 79 वर्ष की आयु

में देवलोकगमन हो गया। पूरा परिवार रत्नसंघ के प्रति गहरी आस्था एवं श्रद्धा वाला है। आपके ज्येष्ठ सुपुत्र श्री ताराचन्दजी रत्नसंघ के अध्यक्ष पद का दायित्व निर्वहन कर चुके हैं। आपकी सन्त-सतीवृन्द की विहार सेवा विशेष रही।

-प्रमोद मोदी, किशनगढ़

नदबई-धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक श्री कपूरचन्दजी बागपतिया जैन का 24 दिसम्बर, 2020 को 85 वर्ष की आयु

सान हो गया। आप नदबई में सामायिक-स्वाध्याय भवन के निर्माण में नींव की ईंट की भूमिका निभाई थी। आप कर्त्तव्यनिष्ठ, ईमानदार, मृदुस्वभावी थे। इन्हीं गुणों की पहचान से आप श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, अग्रवाल समाज एवं राजकीय भवन निर्माण कमेटी नदबई के वर्षों तक कोषाध्यक्ष पद पर रहे। आपके सुपुत्र श्री राजेशजी, राकेशजी (पूर्व पार्षद), श्री मुकेशजी बागपतिया जैन भी संघ के सक्रिय सदस्य हैं। आप बीमारी से पहले नियमित स्थानक आने वाले सदस्य थे।

-नरेशचन्द जैन, मन्त्री

सवाईमाधोपुर-धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ सुश्राविका श्रीमती शान्तिदेवीजी धर्मसहायिका श्री जगन्नाथजी जैन (धमूण

वाले) का 80 वर्ष की आयु में 19 जनवरी, 2021 को देवलोकगमन हो गया। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति गहरी आस्था थी। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय, माला जप-तप की साधना-आराधना किया करती थी। आप धार्मिक प्रवृत्ति की भद्र महिला थी। परिवार में श्री छीतरमलजी, राजेन्द्रजी, बनवारीजी, महावीरजी जैन (खेरदा वाले) समाज सेवा में अग्रणी है।

-बनवारी जैन

जोधपुर-धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक श्री उमरावमलजी सुपुत्र स्व. श्रीमती सुकनकँवरजी-स्व. श्री सुजानमलजी

सुराणा का 20 फरवरी, 2021 को देहावसान हो गया। आप संघ, समाज सेवा में सदैव तत्पर रहते थे। मेडिकल छात्रों के शोध एवं अध्ययन के लिए आपके परिवार ने आपकी देह एम्स अस्पताल जोधपुर में आपकी इच्छानुसार दान की। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़कर गये। आप संघ सेवा हेतु सदैव तत्पर रहते थे।

-गणपत सुराणा, एडवोकेट

पीपाड़-श्रद्धानिष्ठ सुश्री दिशाजी सुपुत्री श्री कमलचन्दजी सुपौत्री वीरपिता श्री ज्ञानचन्दजी लुणावत का 19 फरवरी, 2021 को देहावसान हो गया। परम पूज्य आचार्यप्रवर सहित समस्त मुनिमण्डल एवं महासती मण्डल के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। आप सदैव ज्ञान-ध्यान सीखने एवं धार्मिक क्रियाओं में अग्रणी रहती थी। यही कारण है कि चेन्नई से लम्बी यात्रा कर पीपाड़ पहुँचने के साथ ही आपने प्रातःकालीन प्रार्थना एवं प्रवचन का लाभ लिया था। आप सदैव हँसमुख, मिलनसार स्वभाव वाली थी। आप सहित आपका सम्पूर्ण परिवार संघ की गतिविधियों में तन-मन-धन से जुड़ा हुआ है। आप रत्नसंघीय महासती श्री संयमप्रभाजी म.सा. की सांसारिक भतीजी थी। आपके दादाजी संघ समर्पित श्रावकरत्न का दायित्व निभा रहे हैं। आपके बड़े पिताजी जोधपुर स्वाध्याय संघ के वरिष्ठ स्वाध्यायी हैं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं को जिनवाणी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के नये प्रकाशन

1. आचाराङ्ग की अनुप्रेक्षा	सम्पादक डा. धर्मचन्द जैन	मूल्य 50 रुपये
2. स्वस्थ एवं साधक-जीवन के लिए आहार	सौ. मंगला चोरड़िया	मूल्य 40 रुपये
3. हमारे जीवन की नई कहानियाँ	कमला हणवन्तमल सुराणा	मूल्य 40 रुपये
4. बोध कथाएँ	सम्पादक सम्पतराज चौधरी	मूल्य 40 रुपये
5. क्यों जरूरी?	डॉ. श्वेता जैन	मूल्य 60 रुपये

जिनवाणी पर अभिमत

प्रतिमाह की 10 तारीख के बाद एक-दो दिन ऐसे होते हैं जब जिनवाणी का इन्तजार रहता है। प्रतिमाह जिनवाणी से हमें बौद्धिक, आध्यात्मिक, रचनात्मक ज्ञान से भरे आलेख पढ़ने को मिलते हैं जो हमारे सांसारिक जीवन को भी सही दिशा प्रदान करते हैं। जिनवाणी पत्रिका के प्रति मन में विशेष आकर्षण सदैव रहता है। जब मैं छठी-सातवीं कक्षा में पढ़ता था तो पड़ोस में जिनवाणी पत्रिका आती थी। बाद में जब जीवन का दायरा बढ़ा तो जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी, सुमेर पब्लिक लाइब्रेरी, सूचना केन्द्र, गाँधी शान्ति प्रतिष्ठान हर शिक्षण संस्थान, संगठन में यह पत्रिका पढ़ने को मिलती रहती थी।

विनोबाजी ने एक नारा दिया था-THINK GLOBALLY & ACT LOCALLY इसका प्रत्यक्ष उदाहरण मुझे जिनवाणी में मिलता है। इसका हर अङ्क अलग से विशेषता लिये हुए होता है। जिनवाणी प्रतिमाह हमें ज्ञान के नये परिदृश्य से अवगत कराती है। स्वाध्याय, अहिंसा, शाकाहार, धोवन पानी, क्षमा, प्रार्थना सहित अनेक बिन्दु सीखने को मिलते हैं।

जिनवाणी का फरवरी अङ्क पढ़ा। इसमें सम्पादकीय, श्री पदमचन्द गाँधी का लेख, श्री पी. शिखरमल सुराणा, अंग्रेजी सेक्शन, वेबीनार के सारगर्भित सूत्र, श्रीमती सुशीला बोहरा के आलेख बहुत प्रेरक हैं। अन्य लेखनी भी बहुत ज्ञानवर्धक है। डॉ. दिलीप धींग को विशेष धन्यवाद। वे प्रतिमाह हमें समृद्ध लेखों से ज्ञानवान बनाते रहते हैं। जिनवाणी की पूरी टीम को बहुत-बहुत शुभकामनाएँ। *-अशोक चौधरी, संयोजक-शनिधाम, जोधपुर*

जिनवाणी के जनवरी और फरवरी 2021 के अङ्क पढ़े। इसमें न्यायाधिपति श्री जसराजजी चौपड़ा का लेख 'व्यक्तित्व विकास एवं समस्याओं के समाधान में स्वाध्याय तथा सामायिक की भूमिका' अति सुन्दर लगा। आदरणीय श्री चौपड़ा साहब ने अपने जीवन के अनुभवों और प्रेरक प्रसङ्गों के साथ स्वाध्याय, सामायिक तथा नीतिमय जीवन का सुन्दर प्रतिपादन किया है।

फरवरी के अङ्क में पूज्य आचार्यश्री हस्ती की दीक्षाशताब्दी के सन्दर्भ में प्रकाशित सामग्री भी नई और प्रेरणादायक लगी। जिनवाणी की एक और विशेषता है कि इसके हर अङ्क में नूतन साहित्य का समीक्षात्मक परिचय दिया जाता है। फरवरी अङ्क में डॉ. दिलीप धींग की पुस्तकें 'जैन दिवाकर सौ तथ्य' और 'पानी से दीप' तथा रतन चोरड़िया की 'मैं कौन हूँ' की समीक्षाएँ सारगर्भित हैं।

हमारे घर अनेक पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं। बम्बोरा पधारने वाले सन्त-सतीवृन्द को भी उनका लाभ मिलता है। कई सन्त-सतीवृन्द तो जिनवाणी के लिए चलकर पूछते हैं, क्योंकि बम्बोरा गाँव में जिनवाणी हमारे यहाँ ही आती है। जिनवाणी के पिछले अङ्क भी सहेजे हुए सहज उपलब्ध होते हैं। इस तरह हमें जिनवाणी की सेवा का लाभ मिलता है। *-सुरेशचन्द धींग, बम्बोरा, जिला-उदयपुर*

जैनत्व और जीवनशैली, जैन जीवनशैली में ध्यान, पश्चात्ताप से परिवर्तन ज्ञानी का जीवन, जीवन में संयम का महत्त्व, जैनधर्म में अहिंसा पर अधिक बल क्यों, गुरु का होना क्यों आवश्यक आदि लेख वाचनीय तथा स्तुत्य हैं। यह अङ्क प्रत्येक जैन के लिए संग्रहणीय ही नहीं बल्कि मननीय और चिन्तनीय है। परिवार के सभी सदस्य पढ़कर, आचरण करने की कोशिश करें।

आचार्य हस्ती, आचार्य हीरा, उपाध्यायप्रवर मानचन्द्रजी हमारे लिये पूजनीय हैं। इनके दर्शन, प्रवचन से हम कृतकृत्य हुए। *-श्री राजूलाल माणिकचन्द कोचर सौभाग्य, सहयाद्रि हॉ. पीछे, वडाला रोड़, नाशिक (महाराष्ट्र)*

10 मार्च 2021
जिनवाणी 89
ISSN 2249-2011

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

क्रम संख्या 16194 से 16210 तक कुल 17 सदस्य बने

'जिनवाणी' मासिक पत्रिका हेतु साभार प्राप्त

11000/- श्रीमती इन्दरकँवरजी, सुनिलजी-मधुजी, शुभमजी, मोहितजी कांकरिया एवं नीरजजी-प्रीतिजी सुराणा जोधपुर, स्व. श्री मदनचन्दजी सुपुत्र स्व. श्री सायरचन्दजी कांकरिया की प्रथम पुण्यस्मृति पर।

11000/- श्री प्रसन्नचन्दजी खारीवाल, तिरूवल्लूर, अपने सुपुत्र चि. अरिहंत (सुपौत्र स्व. श्री धर्मीचन्दजी खारीवाल) संग सौ.कां. आकांक्षा (सुपुत्री श्री रमेशचन्दजी विनायकिया) ताम्बरम चेन्नई का शुभ विवाह 11 दिसम्बर, 2020 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

11000/- श्रीमती निर्मलाजी, निलेशजी, नीरजजी सुराणा, जयपुर, श्री विरदराजजी सुराणा (सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के पूर्व मन्त्री) का 10 फरवरी, 2021 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

5100/- श्री इन्दरमलजी, सुरेन्द्रकुमारजी, नरेन्द्रकुमारजी, धनराजजी, राजेन्द्रजी, कमलजी, चौथ का बरवाडा वाले, जयपुर चि. नितिन संग सौ.कां. आकांक्षा सुपुत्री श्री गौतमचन्दजी जैन खेरदा वाले सवाईमाधोपुर के साथ 27 नवम्बर, 2020 को सम्पन्न शुभविवाह के उपलक्ष्य में।

5100/- श्री अमृतलालजी बाफणा, पवनजी बाफणा, जोधपुर सुश्री आज्ञाजी बाफणा (8 वर्ष) के धर्मध्यान सीखने के उपलक्ष्य में।

5100/- श्री मनोजकुमारजी पंकजकुमारजी जैन बराणा वाले, सवाईमाधोपुर चि. रविकुमार जैन के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में।

5100/- श्री प्रदीपजी-पुष्पाजी पारख, मुम्बई जिनवाणी में सहयोग।

5100/- श्री अमितजी जैन, मुम्बई पूज्या माताजी-पिताजी श्रीमती शिमलाजी-श्री महेन्द्रसिंहजी पीपाडा के जन्म दिन के उपलक्ष्य में।

2100/- श्रीमती कमलाजी धर्मपत्नी स्व. श्री राजकुमारजी सिंघवी, जोधपुर श्री राजकुमारजी सिंघवी के 30 नवम्बर 2020 को स्वर्गगमन होने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

2100/- श्री ताराचन्दजी राजकुमारजी, सुनीलजी रूपचन्दजी जामड़, किशनगढ़, सुश्रावक श्री भागचन्दजी जामड़ का देहावसान हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

2100/- श्री त्रिलोकचन्दजी श्रीमती मंजू जी जैन (सेवानिवृत्त अधिकारी, बी.एस.एन.एल.) जोधपुर, अपने सुपुत्र अमित का शुभ विवाह सौ. का. जयाजी सुपुत्री श्री ओमप्रकाशजी गुप्ता जयपुर के साथ 16 फरवरी को जयपुर सम्पन्न होने की खुशी में।

2100/- श्री प्रकाशमलजी-श्रीमती कमलादेवीजी बोथरा (भोपालगढ़ वाले), चेन्नई, जिनवाणी हेतु सहयोग।

2100/- श्री नाथूलालजी, राजेन्द्रजी, मोहनजी, मनीषजी नाहर, दूदू श्रीमती तारादेवीजी धर्मपत्नी स्व. श्री ताराचन्दजी नाहर का 19 जनवरी 2021 को स्वर्गवास होने पर पुण्य स्मृति में।

2100/- श्रीमती कान्ताजी मेहता, जोधपुर आचार्यप्रवर 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. के जन्मदिवस एवं अपने पड़पौत्र होने के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री आशीषजी अंकुरजी जैन, गंगापुरसिटी पूज्य पिताजी श्री अशोक कुमारजी जैन का 11 नवम्बर, 2020 को स्वर्गवास होने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

2100/- श्री महावीरजी गाँधी, भीलवाड़ा अपनी सुपुत्री सुश्री शिवांगी गाँधी के चार्टर्ड अकाउण्टेण्ट बनने की खुशी में।

2100/- श्रीमती कमलादेवीजी, श्री कल्याणमलजी, जम्बू कुमारजी, रविन्द्र कुमारजी बाफना एवं परिवारजन, मुम्बई, सुश्री प्रेक्षाजी बाफना (सुपुत्र श्रीमती सरोजजी-अमरजी बाफना) के सी.ए. होने के उपलक्ष्य में।

1101/- श्री अमोलकचन्दजी दिनेशकुमारजी जैन, (मुम्बई) सवाईमाधोपुर अपने सुपुत्र नितिनजी के

विवाहोपलक्ष्य में।

1100/- श्री रतनलालजी जैन, रामपुरा कोटा सुपुत्र ऋषभजी जैन के विवाहोपलक्ष्य में।

1100/- श्री प्रेमचन्दजी, जुगलकिशोरजी जैन, चौथ का बारवाड़ा, श्री बाबूलालजी जैन की पुण्य स्मृति में।

1100/- श्री घनश्यामजी जैन, कोटा धर्मपत्नी श्रीमती प्रेमदेवी जी जैन का 31 जनवरी, 2021 को स्वर्गगमन होने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

1100/- श्री देवेन्द्रकुमारजी, पुष्पेन्द्रकुमारजी, संजयकुमार जी जैन (बरगंमा वाले), जयपुर पूज्य पिताजी श्री मिट्ठनलालजी जैन की 13वीं पुण्य तिथि पर।

1100/- श्री संजयकुमारजी प्रतीककुमारजी नयनकुमारजी कटारिया, पीपाडसिटी श्री प्रतीक कटारिया सुपुत्र संगीताजी संजयकुमारजी कटारिया सुपौत्र श्री नन्दलालजी कटारिया के प्रथम प्रयास में सी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री बाबूलालजी हेमराजजी जैन (चितारा) सवाईमाधोपुर, चि. प्रकाशजी सुपुत्र स्व. श्री मोहनलालजी श्रीमती चन्दनबालाजी का शुभ विवाह सौ.कां. खुशबूजी सुपुत्री श्री सुरेशकुमारजी मंजूजी जैन कापरेन बून्दी के संग 16 फरवरी को सम्पन्न होने की खुशी में।

1100/- श्री धनसुरेशजी, अमितजी, सुमितजी जैन, सवाईमाधोपुर युवारत्न श्री आशीषजी जैन की वरिष्ठ अध्यापक से व्याख्याता पद पर पदोन्नति होने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्रीमती कान्ताजी, अनिलजी, हिमांशुजी मेहता, जयपुर, श्री सन्तोषजी मेहता के प्रथम पुण्य स्मृति दिवस पर।

1100/- श्रीमती फूलकँवरजी मेहता धर्मसहायिका स्व. श्री हुकमीचन्दजी मेहता, ब्यावर स्व. श्रीमती कंचनकँवरजी (सासूजी) की सातवीं पुण्य तिथि के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री अपूर्वजी जैन (मुणोत) नवसारी, पूज्य पिताजी सुश्रावक श्री ज्ञानेशकुमारजी सुपुत्र स्व. श्री रणजीतसिंहजी मुणोत का 26 जनवरी, 2021 को स्वर्गवास हो जाने पर पुण्य स्मृति में।

1100/- श्री गौतमचन्दजी, पारसचन्दजी, ओमप्रकाशजी, गणपतलालजी (मुई वाले) बजरिया, सवाई-माधोपुर पूज्या मातुश्री की पुण्य स्मुति में।

1100/- श्री गौतमचन्दजी, महेशकुमारजी जैन सवाई-माधोपुर अपने सुपुत्र पंकज के विवाहोपलक्ष्य में।

1100/- श्री मोहनलालजी, नेमीचन्दजी, राजेन्द्रकुमारजी, पंकजकुमारजी हैदराबाद (मरुधर में बिलाडा) वीरभ्राता श्री चेतनप्रकाशजी कटारिया सुपुत्र वीरपिता श्री राजेन्द्रकुमार जी कटारिया के सी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर।

1100/- डॉ. विनोदजी जैन, श्री सुबोधजी जैन, कोटा अपनी माताजी श्रीमती शीलाजी जैन धर्मपत्नी श्री सूरजमलजी जैन का 22 फरवरी, 2021 को देवलोकगमन की पुण्य स्मृति में।

आगामी पर्व तिथि

फाल्गुन कृष्णा 14, शुक्रवार	12.03.2021	चतुर्दशी
फाल्गुन अमावस्या, शनिवार	13.03.2021	पक्खी
फाल्गुन शुक्ला 8, सोमवार	22.03.2021	अष्टमी
फाल्गुन शुक्ला 14, शनिवार	27.03.2021	चतुर्दशी
फाल्गुन पूर्णिमा, रविवार	28.03.2021	फाल्गुनी चौमासी एवं पक्खी
चैत्र कृष्णा 8, रविवार	04.04.2021	अष्टमी, भगवान आदिनाथ जन्म कल्याणक और आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 83वाँ जन्मदिवस।
चैत्र कृष्णा 14, शनिवार	10.04.2021	चतुर्दशी
चैत्र कृष्णा अमावस, रविवार	11.04.2021	पक्खी।

10 मार्च 2021
जिनवाणी 91
ISSN 2249-2011

बाल-जिनवाणी

प्रतिमाह बाल-जिनवाणी के अंक पर आधारित प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को सुगनचन्द प्रेमकँवर रांका चेरिटेबल ट्रस्ट-अजमेर द्वारा श्री माणकचन्दजी, राजेन्द्र कुमारजी, सुनीलकुमारजी, नीरजकुमारजी, पंकजकुमारजी, रौनककुमारजी, नमनजी, सम्यक्जी, क्षितिजजी रांका, अजमेर की ओर से पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-600 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-400 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 300 रुपये तथा 200 रुपये के तीन सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल,जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

रामू-श्यामू

लक्ष्मी जैन

एक समय की बात है एक बुढ़िया माँ के दो बेटे थे। एक का नाम रामू और दूसरे का श्यामू। रामू की एक विशेषता थी कि उसे जितना ज्यादा धन मिलता, उतना ही कम लगता जबकि श्यामू को जितना मिलता उसमें वह खुशी-खुशी जीवन गुज़ार लेता। लेकिन रामू तो गाड़ी, घोड़ा, बंगला आदि अनेक चीज़े होने के बाद भी दु:खी रहता। एक दिन रामू और श्यामू किसी जंगल में जा रहे थे। वहाँ उन्हें एक पहुँचे हुए तपस्वी सन्त मिलते हैं। तब श्यामू ने रामू से कहा-अच्छा हुआ जो हमें सन्त के दर्शन बड़ी सहजता से मिल गये, चलो उनके पास जाकर बैठते हैं, लेकिन रामू को इन सब में रुचि नहीं थी। फिर भी भैया के अधिक ज़िद्द करने के कारण वह सन्त के पास जाकर बैठा, तब सन्त ने दोनों से उनका परिचय पूछा और दोनों से कहा-कैसे हैं आप? तब श्यामू ने सन्त से कहा-'बहुत खुश हूँ' लेकिन रामू ने सोचा श्यामू इतना खुश कैसे है इसके पास तो न ही कोई गाड़ी है, न ही कोई बंगला है। यह तो दो वक्त का खाना भी खा पाता होगा या नहीं, रामू को अनगिनत प्रश्नों ने घेर लिया तभी ज्ञानी सन्त ने रामू से प्रश्न किया-कहाँ हो वत्स?, किन विचारों में लीन हो? तब रामू ने कहा कि-हे ज्ञानी सन्त! मेरे पास अथाह सुख सम्पत्ति, ऐश्वर्य और वैभव है, लेकिन फिर भी मैं दु:खी हूँ। ज्ञानी सन्त सब जानते थे। उन्होंने रामू की मनोदशा को समझा और कहा कि-हे रामू! तुम्हारे पास सारी भौतिक सुख-सुविधाएँ हैं फिर भी तुम खुश नहीं हो, इसका एकमात्र कारण है कि तुम्हारे पास 'सन्तोष' की कमी है। अभी भी अधिक पाने की लालसा है तुम्हें। तुम्हारे दु:ख का एकमात्र यही कारण है। ज्ञानी सन्त के मुख से अमृततुल्य उपदेश पाकर रामू धन्य हुआ और उसने अपने जीवन में सन्तोष नामक बहुमूल्य गुण को हमेशा-हमेशा के लिए अपना लिया और वह भी श्यामू की तरह बहुत खुश रहने लगा था।

-सवाई माधोपुर, राजस्थान

पापाजी

श्रीमती निधि दिनेश लोढ़ा

प्रिया ने देखा जो रसगुल्ले का डिब्बा मैं लाई थी वह दिख नहीं रहा। उसने अपनी बाई से पूछा-''थोड़ी देर पहले मैं रसगुल्ले का डिब्बा लाई थी। रसोई के प्लेटफॉर्म पर रखा, दिख नहीं रहा।'' बाई ने बर्तन साफ करते-करते बोला-''दीदी, मैंने तो नहीं देखा।''

प्रिया मन ही मन सोच रही थी-'अवश्य पापाजी ने खा लिये होंगे। मीठे पर तो उनका कण्ट्रोल है ही नहीं। शुगर लेवल पहले से ही हाई रहता है, पर मन पर कण्ट्रोल है ही नहीं। मैं तो बच्चों के लिए लाई थी, सोचा आज उनकी अन्तिम परीक्षा है, आकर उनके पसन्दीदा

रसगुल्ले दूँगी, बहुत खुश हो जायेंगे। उस दुकान पर बचे भी सिर्फ़ चार ही रसगुल्ले थे। अब पापाजी को कौन समझाये। हरीश तो पापाजी को कुछ कहेंगे नहीं। वे बीमार होंगे तो सब ज़िम्मेदारी मेरी होगी। मैं भी किस-किस को सम्भालूँ। पापाजी स्कूटर भी लेकर चले गये। जरूर यार-दोस्तों से मिलने गये होंगे। स्कूटर नहीं ले जाते तो मैं जाकर बच्चों के लिए कुछ चॉकलेट ही ले आती।'

कुछ देर बाद घण्टी बजी। प्रिया ने उठकर दरवाज़ा खोला। पापाजी आये थे। पापाजी बोले-''प्रिया बेटा, यह ले रसगुल्ले का बड़ा डिब्बा। मैंने रसोईघर में रसगुल्ले का डिब्बा देखा। रसगुल्ले देखते ही मन ललचाने लगा। खाकर देखा तो वे खराब थे। शायद दुकानदार ने पुराने दे दिये। मैंने फेंक दिये। बच्चे खा लेते तो बीमार हो जाते। इसलिये मैं दिल्ली दरबार दुकान पर गया वहाँ रसगुल्ले एकदम ताजे थे। बेटा बच्चों को दे देना। आज उनकी अन्तिम परीक्षा है खुश हो जायेंगे।''

प्रिया-''ओह! पिताजी आप इतनी ठण्ड में इतनी दूर जाकर रसगुल्ले लाये हो।'' तुरन्त उसकी आँख भर आई। तुरन्त उसे मन ही मन लगा कि मैं पिताजी के लिए क्या सोचती हूँ और वे क्या सोचते हैं? हर दादा और दादी भी बच्चों को उतना ही प्यार करते हैं जितना हम अपने बच्चों से, पर कई बार हमसे भी ज्यादा। हो सकता है उनकी कोई बात हमें पहले अच्छी न लगे, पर उसमें भी हमारा हित ही होता है, यह बाद में पता लगता है।

-बी 2402, इण्डियाबुल्स ब्लू, डॉ. ई मोस रोड़, वर्ली नाका, मुम्बई-400018 (महाराष्ट्र) 9820305305

Jainism and Children

Dr. Dileep Dhing

Jainism is one of the ancient religions in the world. This religion gives a message of love towards all living beings.

The behaviour of the child depends on the type of atmosphere he gets in his house. If the family has the best values, the children of the family will be safe and the future will also be safe. The child will learn the values of reverence, humility and respect for elders. A child should be taught to avoid misconduct, theft and misrule right from childhood.

Jainism has moulded its principles into practice and pays full attention towards overall development of the child. Jain philosophy says that children should be taught the following five things from their childhood :

- Non-Violence and Vegetarianism
- De-addiction and Authenticity
- Modesty and Discipline.
- Diligence and Service
- Spiritual Development

Jainism teaches both boys and girls commonly such reasonable efforts to make them the best citizens.

Director : ICPSR,, Ayya Mudali Street, Sowcarpet, Chennai-600001

Life Time Happiness

Sh. Shrikant Gupta

A student in one of the universities was one day walking with a professor, who was commonly called the students' friend for his kindness to those who waited for his instructions. As they went along, saw lying in the path a pair of old shoes, which were supposed to belong to a poor man who was working in a field close by, and who had nearly finished his day's work.

Student turned to the professor, saying : "Let us play the man a trick : We will hide his shoes, and hide ourselves behind those bushes, and wait to see his perplexity when he cannot find them."

"My young friend", answered the professor, "We should never amuse ourselves at the expense of the poor. But you are rich, and may give yourself a much greater pleasure by means of this poor man."

"Put a coin in each shoe, and then we will hide ourselves and watch how this affects him."

The student did so and they both placed themselves behind the bushes close by. The poor man soon finished his work, and came across the field to the path where he had left his coat and shoes.

While putting on his coat he slipped his foot into one of his shoes, but feeling something hard, he stooped down to feel what it was, and found the coin, Astonishment and wonder were seen upon his countenance.

He gazed upon the coin, turned it around and looked at it again and again.

He then looked around him on all sides, but no person was to be seen. He now put the money into his pocket, and proceeded to put on the other shoe; but his surprise was doubled on finding the other coin.

His feelings overcame him. He fell upon his knees, looked up to heaven and uttered aloud a fervent thanks giving in which he spoke of his wife, sick and helpless, and his children without bread, whom this timely bounty, from some unknown hand, would save from preishing.

The student stood there deeply affected, and his eyes filled with tears. "Now", said the professor, are you not much better pleased than if you had played your intended trick?"

The youth replied, "You have taught me a lesson which I will never forget. I feel now the truth of these words, which I never understood before : "It's more blessed to give than to receive."

If you want happiness... for a lifetim - help someone

-IICS, Sardarpura, Jodhpur (Raj.)

महावीर के हम सिपाही बनेंगे

महावीर के हम सिपाही बनेंगे।
जो रखा क़दम फिर न पीछे हटेंगे।।
सिखा देंगे दुनिया को शान्ति से जीना।
अहिंसा की बिजली नसों में भरेंगे।।
महावीर के हम .....।।
लगायेंगे मरहम जो होयेंगे ज़ख्मी।
सुखी करके जग को स्वयं दुःख सहेंगे।।
महावीर के हम .....।।
न धर्म में किसी से पीछे रहेंगे।
कसेंगे कमर और आगे बढ़ेंगे।।
महावीर के हम .....।।
अहिंसा के सेवक हैं हम वीर सच्चे।
धर्म युद्ध में आगे बढ़ते रहेंगे।।
महावीर के हम .....।।
हम हैं वीर सुख-दुःख की परवाह नहीं।
अहिंसा का झण्डा लहरा के रहेंगे।।
महावीर के हम .....।।

-पुस्तक संस्कार सूत्रम् 3 से

सामायिक-प्रश्नोत्तर

प्र. 1–नवकार मन्त्र मंगल रूप क्यों है?

उत्तर– 'मं' का अर्थ है–पाप, और 'गल' का अर्थ है–गलाना। जो पाप को गलावे, वह मंगल है। नवकार मन्त्र से पाप का क्षय होता है, पाप रुकते हैं, इसलिए नवकार मन्त्र मंगल रूप है।

प्र. 2–नवकार मन्त्र में कितने पद और अक्षर हैं?

उत्तर– नवकार मन्त्र में पाँच पद और 35 अक्षर हैं। चूलिका को मिलाने पर कुल 9 पद और 68 अक्षर होते हैं।

प्र. 3–नवकार मन्त्र में धर्मपद कौन-सा है?

उत्तर– नवकार मन्त्र में 'नमो' शब्द धर्मपद है, क्योंकि 'नमो' विनय का प्रतिपादक है। विनय ही धर्म का मूल है।

प्र. 4–नवकार मन्त्र किस भाषा में है?

उत्तर– नवकार मन्त्र प्राकृत (अर्धमागधी प्राकृत) भाषा में है।

-'श्रावक सामायिक प्रतिक्रमणसूत्र' पुस्तक से

रिश्तों की मिठास मत जाने दो, किस्मत से मधुरता मिलती है

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

रिश्तों की मिठास मत जाने दो,
किस्मत से मधुरता मिलती है।
आपस की बातों में मत उलझो,
रौनक घर की चली जाती है।।
रिश्तों की मिठास मत जाने दो.....।।टेर।।

बातें अपनों की सहन करो,
वे अच्छे के लिए ही कहते हैं,
बातों को मत पकड़ो, समझो,
सब क्लेश प्रसङ्ग टल जाते हैं।
मन के धीरज को मत खोना,
चेहरे की चमक नहीं रहती है।।
रिश्तों की मिठास मत जाने दो.....।।1।।

मिलजुलकर रहना अच्छा है,
आनन्द ही आनन्द मिलता है,
मत सोचो स्वर्ग है ऊपर में,
वह स्वर्ग तो घर में दिखता है।
सौन्दर्य भरी हो अगर भाषा,
जीवन की गरिमा बढ़ती है।।
रिश्तों की मिठास मत जाने दो.....।।2।।

सदा प्रेम-प्यार से रहने में,
खुशियों का उपवन खिलता है,
बढ़ती है मान, प्रतिष्ठा भी,
फिर धर्म बाग भी सजता है।
मत करना कभी गुमान अरे,
पुण्यवानी से बगिया खिलती है।।
रिश्तों की मिठास मत जाने दो.....।।3।।

मिलना आपस में एक जगह,
यह तो रिश्तों का मेला है,
गिले-शिकवे न रहे मन में,
आए हैं, चले भी जाना है।
हम ज्ञान की बातों को समझें,
जिनवाणी हमको कहती है।।
रिश्तों की मिठास मत जाने दो.....।।4।।

पुण्यवानी बढ़े यह ध्यान रहे,
हर छोटे-बड़े का मान रहे,
अनुशासन को न भूलें कभी,
एक दूजे का सदा ध्यान रहे।
है संगठन में शक्ति बड़ी,
औरों को ताकत दिखती है।।
रिश्तों की मिठास मत जाने दो.....।।5।।

-जनता साड़ी सेण्टर, स्टेशन रोड़, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

Ladder of Achievement

Mrs. Minaxi D. Jain

1.	Will not	-	0%
2.	I can not	-	10%
3.	I don't know how	-	20%
4.	I wish I could	-	30%
5.	What is it	-	40%
6.	I think I might	-	50%
7.	I might	-	60%
8.	I think I can	-	70%
9.	I can	-	80%
10.	I will	-	90%
11.	I did	-	100%

-17/729, CHB., Jodhpur-342008 (Raj.)

10 मार्च 2021
जिनवाणी 95
ISSN 2249-2011

बाल-स्तम्भ

क्रूरता के बिना सुन्दरता

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 अप्रेल, 2021 तक **जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय, ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.)** के पते पर प्रेषित करें। **उत्तर के साथ अपनी आयु तथा पूर्ण पते का भी उल्लेख करें।** श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार-200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल,जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

सोनल और मीनल दोनों मित्र हैं। एक दिन सोनल मीनल को फोन करके कहती है-''आज मैं बहुत बोर हो रही हूँ। चल, आज मॉल में घूमने चलते हैं। मेरी एक दोस्त का जन्मदिवस भी आ रहा है तो उसके लिए उपहार भी ले आयेंगे। उसका नाम निक्की है। उसको भी मैं बुला लेती हूँ।'' (इस तरह दोपहर चार बजे मॉल पर मिलने का वे प्रोग्राम बना लेती हैं।)

चार बजे मॉल पर वे तीनों सहेलियाँ मिलती हैं और विचार करने लगीं कि हमें क्या उपहार लेना है। एक दुकान पर वे एक सुन्दर कमरबन्द (बेल्ट) और एक पर्स देखती हैं। निक्की कहती है-''हमको यह वस्तु नहीं लेनी है, क्योंकि चमड़े की बनी होती है। चमड़े की वस्तुओं के प्रयोग से हमको पाप लगता है।''

मीनल बोली-''कोई पाप-वाप नहीं लगता।''

सोनल कहती है-''अरे! पहले निक्की की बात ध्यान से सुन कि वह क्या कह रही है? तू बोल निक्की, यह क्यों नहीं खरीदना चाहिए।''

निक्की-''यह बेल्ट सोफ्ट/मुलायम लगती हैं, परन्तु इसे किस तरीके से बनाया जाता है, जब तुम्हें यह बात मालूम चलेगी तो तुम्हारी आँखों से आँसू आ जायेंगे। यह चमड़े की बेल्ट है। यह गाय आदि प्राणी के शरीर की त्वचा है। गाय और उसके बच्चों की त्वचा बहुत मुलायम होती है। चमड़े को प्राप्त करने के लिए इनको बहुत बुरी तरह से मारा जाता है।''

सोनल-''नहीं, नहीं, मैं विश्वास नहीं करती।''

निक्की-''हम सोच भी नहीं सकते कि इतनी क्रूरता इन जानवरों पर होती है। वस्तु लेने से पहले यह विचार करना चाहिए कि यह किससे बनी है? इसमें किन-किन वस्तुओं का प्रयोग किया गया है? इसमें किसी प्राणी को दु:खी करके कुछ मिलाया तो नहीं गया है।''

सोनल-''निक्की! तो हमको चमड़े की वस्तु लेनी ही नहीं चाहिए।''

निक्की-''हाँ, इसी तरह साँप की खाल को भी खींच लिया जाता है। पहले जीवित साँप को कील से पेड़ पर लटकाकर ठोंक दिया जाता है, फिर उसकी खाल खींच ली जाती है। इसी प्रकार अन्य जानवर भेड़, बकरी, बाघ, तेन्दुआ, चीते आदि की खालों को उतारा जाता है। उनकी खाल से पर्स, बेल्ट आदि बनाकर दुकानों में भेज दिया जाता है।''

सोनल-''तेरी बात सच है। हमें तो मालूम

ही नहीं है कि यह किस तरीके से बनती हैं। अन्यथा हम खरीदते ही नहीं।''

निक्की–''दुकान वाले तो अपना लाभ देखते हैं। अनेक Beauty without cruelty branch वाले और दूसरे अनेक जैन/जैनेतर संस्था वाले यह घोषणा करते ही रहते हैं कि लोगों को क्या खरीदना है अथवा क्या नहीं खरीदना है?''

बातें करते-करते वे तीनों सहेलियाँ दूसरी दुकान पर जाती हैं।

निक्की–''देखो! इस शो-पीस को। यह कितना सुन्दर है, लेना है क्या? मालूम है तुम्हें यह हाथी दाँत से बना है। शिकारी लोग इस दाँत को पाने के लिए बड़े-बड़े हाथियों को मार डालते हैं। बाद में उन दाँतों से चूड़ियाँ, पेन, कंघी, क्रॉकरी आदि वस्तुएँ बनाते हैं जो हम बिना सोचे-समझे खरीद लेते हैं।''

मीनल–''निक्की तू आज यह बता कि ऐसी कौन-कौन-सी वस्तुएँ हैं जो जानवरों को मारकर या तकलीफ़ देकर बनाई जाती हैं?''

निक्की–''देखो! साबुन और शैम्पू बनाने में भी अण्डे और जानवरों की चर्बी को मिलाया जाता है। इसी तरह टूथपेस्ट, चॉकलेट, केक, पेस्ट्रीज, अनेक प्रकार की ब्रेड, चीज़, बिस्कुट आदि में भी इनका प्रयोग किया जाता है। कुछ भी वस्तु खरीदने से पहले यह विचार अवश्य कर लें कि इसमें अण्डे आदि मिले हुए तो नहीं हैं।''

सोनल–''यह लिस्ट तो बड़ी होती जा रही है कि क्या प्रयोग में लाना और क्या नहीं लाना चाहिए।''

निक्की–''अरे! यह तो कुछ भी नहीं। कई तरीके के ब्यूटी प्रोडक्ट जैसे कि क्रीम, लोशन, लिपस्टिक, शैम्पू आदि में भी जानवरों के शरीरों के अङ्ग का कुछ हिस्सा प्रयोग में लिया जाता है और इनको प्रयोग में न लिया गया हो तो बन्दर, मेंढ़क, चूहों आदि के ऊपर इन उत्पादकों का अनुसन्धान किया जाता है जिससे इन जानवरों को बहुत पीड़ा, दुःख और वेदना होती है। जैसे कि शैम्पू, आई लाइनर आदि को खरगोश आदि की आँखों में डालकर उनकी मापदण्डता को नापा जाता है। खरगोश की कोमल आँख पर उस केमिकल का असर यदि होता है तो यह उत्पाद बड़ा ही असरकारक अथवा प्रयोग में लाने योग्य हो जाता है।''

मीनल–''यह तो क्रूरता की हद ही हो गई है।''

तीनों सहेलियाँ बातें करते-करते बॉडी स्प्रे, सेण्ट, परफ्यूम आदि की दुकान पर पहुँच जाती हैं।

निक्की–''देखों हमको खुशबू अच्छी लगती है न? परन्तु अनेक तरह के बॉडी स्प्रे, सेण्ट, परफ्यूम आदि को बनाने में हिरण, व्हेल मछली, सीवेट आदि जानवरों को मारा जाता है। उनके शरीर में जो सुगन्ध होती है, वही उनके मरने का कारण बन जाती है। हिरन के शरीर में रही कस्तूरी नाभि के पास से निकाली गई इन उत्पाद में मिलायी जाती है जिससे इनकी सुगन्ध लम्बे समय तक बनी रहती है। जरा विचार तो करो कि किस तरह इन बेजुबान पशुओं को सताया जाता है।''

सोनल–''दुनिया में इतना सब कुछ बनता है और लोग इतने खराब होते हैं कि इस बात का तो हम विचार ही नहीं कर सकते।''

मीनल–''सही बात है। हमको तो मालूम ही नहीं कि लोग पैसों के लिए इतना कुछ करते हैं। चलो, अब हमको डीओ-वीओ नहीं खरीदना। इसके बदले तो कपड़े ही अच्छे। चलो, कपड़े की दुकान पर चलते हैं।''

सभी कपड़े की दुकान पर जाते हैं तो दुकानदार से सिल्क की ड्रेस दिखाने को कहते हैं। निक्की ध्यान से देखती है और कहती है ये तो प्योर सिल्क से बनी है।

निक्की–''देखो सोनल! इस सिल्क को

बनाने के लिए अनेक कीड़ों को उबलते पानी में डाला जाता है। हजारों की संख्या में जीवित कीड़े मर जाते हैं तब कहीं सिल्क का एक धागा तैयार होता है। ऐसा सच्चा प्योर सिल्क क्यों पहनें?''

सोनल और मीनल यह बात सुनते ही चक्कर में पड़ जाती हैं। हमको सिल्क नहीं पहनना है। दोनों एक साथ बोल पड़ती हैं। वहाँ से निकलकर तीनों सहेलियाँ ज्वेलरी की दुकान पर पहुँचती हैं। चलो, यहाँ तो निक्की की बोलती बन्द हो ही जायेगी। यहीं से कुछ खरीद लेते हैं।

निक्की–''यह देखो, मोती की माला। कालु नाम की मछली जो समुद्र में होती है, वह बहुत सुन्दर होती है। उसके शरीर में सुई घुसाकर एक प्रकार का तरल निकाला जाता है, जिसमें से मोती बनता है। जब तक यह तरल निकलता है तब तक उसके शरीर में सुई घुसी रहती है जो उसको अत्यन्त वेदना पहुँचाती है। मोती बनने के बाद सीप को मारा जाता है जिसके दो टुकड़े कर दिए जाते हैं।''

सोनल–''अरे! सुन्दर-सुन्दर मोती के आभूषणों को देखकर उन्हें लेने का मन करता है, किन्तु यह तो बहुत क्रूरता से बने होते हैं। अतः यह हमको नहीं खरीदना है।''

निक्की–''हाँ सोनल! हमारा जीवन इन सभी साधनों के बिना चल सकता है तो हमें कम से कम हिंसा करके जीवन जीना चाहिए।''

हमको याद रखना है कि अपना जीवन सादा बनायें। फैंशन में हिंसा छिपी है। जबकि सादगी में सौन्दर्य छुपा है।

सोनल–''निक्की! तुम्हारी बातें सुनकर तो हमारे होश ही उड़ गए हैं और अहसास हो गया है कि आज तक फैशन करके दूसरों को दुःख देकर हमने कितना पाप बाँधा होगा। मेरी तो आँखें खुल गई हैं। आज से जन्मदिन पर उपहार में कुछ अलग, परन्तु हिंसा बिना की वस्तु दूँगी।

-'आओ Jainism सीखें 2' पुस्तक से

प्र. 1. हम किस तरह अप्रत्यक्ष रूप से हिंसा में भागीदार बन जाते हैं?

प्र. 2. दैनिक जीवन में काम आने वाली वस्तुओं के उपयोग से हम कैसे अहिंसक बन सकते हैं?

प्र. 3. इस प्रकार की हिंसा से बचने हेतु लोगों को हम किस प्रकार जागरूक कर सकते हैं?

प्र. 4. सिल्क के वस्त्र क्यों नहीं पहनने चाहिए?

प्र. 5. जैन होने के नाते हमारी जीवनशैली कैसी होनी चाहिए?

प्र. 6. कहानी से चार उपसर्ग युक्त शब्द छाँटकर उनसे उपसर्ग और मूल शब्द अलग कीजिए।

बाल-स्तम्भ [जनवरी-2021] का परिणाम

जिनवाणी के जनवरी-2021 के अंक में बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत 'सुख की लक्ष्मी' के प्रश्नों के उत्तर जिन बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, वे धन्यवाद के पात्र हैं। पूर्णांक 25 हैं।

पुरस्कार एवं राशि नाम		अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	अदिति बाँठिया, नागपुर (महाराष्ट्र)	24.5
द्वितीय पुरस्कार-300/-	सिद्धार्थ जैन,सरवाड़-अजमेर (राजस्थान)	24
तृतीय पुरस्कार- 200/-	आशीष जैन, बजरिया-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	23.5
सान्त्वना पुरस्कार- 150/-	साँची छाजेड़, जयपुर (राजस्थान)	23
	नैतिक अमर जैन, जलगाँव (महाराष्ट्र)	23
	श्रेष्ठा जैन, गुलाबपुरा-भीलवाड़ा (राजस्थान)	23
	सितेश जैन, सेक्टर-4, कोटा (राजस्थान)	23
	प्रहर जैन, आसीन्द-भीलवाड़ा (राजस्थान)	23

बाल-जिनवाणी फरवरी, 2021 के अंक से प्रश्न (अन्तिम तिथि 15 अप्रेल, 2021)

प्र. 1. 'विद्यावान्' कौन कहलाता है?
प्र. 2. नवकार मन्त्र की क्या महत्ता है?
प्र. 3. अपनी कार्य प्रकृति को संगी-साथी किस तरह प्रभावित करते हैं?
प्र. 4. How can we say Jaina values bring happiness?
प्र. 5. कवि पञ्चेन्द्रिय विषयों से डरने की बात क्यों करते हैं?
प्र. 6. कहानी में नितिन और उसकी पत्नी को अपनी किस बात पर पछतावा हुआ और क्यों?
प्र. 7. 'जीवन की रेल चली' कविता में निहित सन्देश लिखिए।
प्र. 8. हम अपनी इन्द्रियों का सदुपयोग कैसे कर सकते हैं?
प्र. 9. 'पश्चात्ताप का भाव' कहानी से हमें क्या शिक्षा मिलती है?
प्र. 10. Write three synonyns of each :-doctrine, interfaith, rivalry, conflict.

बाल-जिनवाणी [अक्टूबर-2020] का परिणाम

जिनवाणी के अक्टूबर-2020 के अंक की बाल-जिनवाणी पर आधृत प्रश्नों के उत्तरदाता बालक-बालिकाओं का परिणाम इस प्रकार है। पूर्णांक 40 हैं।

पुरस्कार एवं राशि नाम		अंक
प्रथम पुरस्कार-600/-	सुहानी सुराणा, अजमेर (राजस्थान)	39
द्वितीय पुरस्कार-400/-	अरिन चोरड़िया, जयपुर (राजस्थान)	38
तृतीय पुरस्कार- 300/-	जतिन जैन, कोटा (राजस्थान)	37
सान्त्वना पुरस्कार (3)- 200/-	भावित सुराणा, किशनगढ़ (राजस्थान)	36
	प्रणव भण्डारी, जोधपुर (राजस्थान)	36
	वंश जैन, जोधपुर (महाराष्ट्र)	36

संस्कार केन्द्र एवं पाठशाला अध्यापकों से निवेदन

आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र एवं धार्मिक पाठशालाओं के अध्यापकों से निवेदन है कि वे जिनवाणी पत्रिका में प्रकाशित 'बाल-जिनवाणी' का वाचन कक्षा में करावें एवं उसमें पूछे गए प्रश्नों के उत्तर भेजने हेतु व्यवस्था करावें। बालकों को संस्कारित करने का यह भी एक उत्तम साधन है।

-सम्पादक

अहंकार के वृक्ष पर
विनाश के फल लगते हैं।

ओसवाल मेट्रीमोनी बायोडाटा बैंक

जैन परिवारों के लिये एक शीर्ष वैवाहिक बायोडाटा बैंक

विवाहोत्सुक युवा/युवती
तथा पुनर्विवाह उत्सुक उम्मीदवारों की
एवं उनके परिवार की पूरी जानकारी
यहाँ उपलब्ध है।

ओसवाल मित्र मंडल मेट्रीमोनियल सेंटर

४७, रत्नज्योत इंडस्ट्रियल इस्टेट, पहला माला,
इरला गांवठण, इरला लेन, विलेपार्ले (प.), मुंबई - ४०० ०५६.

फोन : 022 2628 7187

ई-मेल : oswalmatrimony@gmail.com

सुबह १०.३० से सायं ४.०० बजे तक प्रतिदिन (बुधवार और बैंक छुट्टियों के दिन सेंटर बंद है)

गजेन्द्र निधि

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्जवल भविष्य की ओर एक कदम.....

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

Acharya Hasti Meghavi Chatravritti Yojna Has Successfully Completed 13 Years And Contributed Scholarship To Nearly 4500 Students. Many Of The Students Have Become Graduates, Doctors, Software-Professionals, Engineers And Businessmen. We Look Forward To Your Valuable Contribution Towards This Noble Cause And Continue In Our Endeavour To Provide Education And Spirituals Knowledge Towards A Better Future For The Students. Please Donate For This Noble Cause And Make This Scholarship Programme More Successful. **We Have Launched Membership Plans For Donors.**

We Have Launched Membership Plans For Donors

MEMBERSHIP PLAN (ONE YEAR)		
SILVER MEMBER RS.50000	GOLD MEMBER RS.75000	PLATINUM MEMBER RS.100000
DIAMOND MEMBER RS.200000		KOHINOOR MEMBER RS.500000

Note - Your Name Will Be Published In Jinwani Every Month For One Year.

The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad, Chennai (+91 95001 14455)

The Bank A/c Details is as follows - Bank Name & Address - AXIS BANK Anna Salai, Chennai (TN)

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund IFSC Code - UTIB0000168

A/c No. 168010100120722 PAN No. - AAATG1995J

Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पूण्यार्जन किया, ऐसे संघनिष्ठ, श्रेष्ठीवर्यो एवं अर्थ सहयोग एकत्रित करने करने वालों के नाम की सूची –

KOHINOOR MEMBER (RS.500000)

श्रीमान् मोफतराज सा मुणोत, मुम्बई।
श्रीमान् राजीव सा नीता जी डागा, ह्यूस्टन।
युवारत्न श्री हरीश सा कवाड़, चैन्नई।

SILVER MEMBER (RS.50000)

श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमती गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमान् महावीर सोहनलाल जी बोथरा, जलगांव (भोपालगढ़)
श्रीमान् सोहनराज जी बाघमार, कोयम्बटूर।
कन्हैयालाल विमलादेवी हिरण चैरिटेबल ट्रस्ट, अहमदाबाद।
श्रीमान् विजयकुमार जी मुकेश जी विनीत जी गोठी, मदनगंज-किशनगढ़
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, अहमदाबाद।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, मुम्बई।
श्रीमान् अमीरचन्द जी जैन (गंगापुरसिटी वाले), मानसरोवर, जयपुर

PLATINUM MEMBER (RS.100000)

श्रीमान् दूलीचन्द बाघमार एण्ड संस, चैन्नई।
श्रीमान् दलीचन्द सा सुरेश सा कवाड़, पून्नामल्लई।
श्रीमान् राजेश सा विमल सा पवन सा बोहरा, चैन्नई।
श्रीमान् प्रेम सा कवाड़, चैन्नई।
श्रीमान् अम्बालाल सा बसंतीदेवी जी कर्नावट, चैन्नई।
श्रीमान् सम्पतराज सा राजकवंर जी भंडारी, ट्रिपलीकेन-चैन्नई।
कन्हैयालाल विमलादेवी हिरण चैरिटेबल ट्रस्ट, अहमदाबाद।
प्रो. डॉ. शैला विजयकुमार जी सांखला, चालीसगांव (महा.)
श्रीमान् विजय जतिन जी नाहर, इन्दौर
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें - M.Harish Kavad - No. 5, Car Street, Poonamallee, CHENNAI-56
छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें - मनीष जैन, चैन्नई (+91 95430 68382)

'छोटा सा चिन्तन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाइयों को शिक्षा में सहयोग करने का'

जिनवाणी की प्रकाशन योजना में आपका स्वागत है

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा विगत 77 वर्षों से प्रकाशित 'जिनवाणी' हिन्दी मासिक पत्रिका मानव के व्यक्तित्व को निखारने एवं ज्ञानवर्धक सामग्री परोसने का महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है। इसमें अध्यात्म, जीवन-व्यवहार, इतिहास, संस्कृति, जीवन मूल्य, तत्त्व-चर्चा आदि विविध विषयों पर पाठ्य सामग्री उपलब्ध रहती है। अनेक स्तम्भ निरन्तर प्रकाशित हो रहे हैं, जिनमें सम्पादकीय, विचार-वारिधि, प्रवचन, शोधालेख, अंग्रेजीलेख, युवा-स्तम्भ, नारी-स्तम्भ आदि के साथ विभिन्न गीत, कविताएँ, विचार, प्रेरक प्रसङ्ग आदि प्रकाशित होते हैं। नूतन प्रकाशित साहित्य की समीक्षा भी की जाती है।

जैनधर्म, संघ, समाज, संगोष्ठी आदि के प्रासङ्गिक महत्त्वपूर्ण समाचार भी इसकी उपयोगिता बढ़ाते हैं। जनवरी, 2017 से 8 पृष्ठों की 'बाल जिनवाणी' ने इस पत्रिका का दायरा बढ़ाया है। अनेक पाठकों को प्रतिमाह इस पत्रिका की प्रतीक्षा रहती है तथा वे इसे चाव से पढ़ते हैं। जैन पत्रिकाओं में जिनवाणी पत्रिका की विशेष प्रतिष्ठा है। इस पत्रिका का आकार बढ़ने तथा कागज, मुद्रण आदि की महँगाई बढ़ने से समस्या का सामना करना पड़ रहा है। जिनवाणी पत्रिका की आर्थिक स्थिति को सम्बल प्रदान करने के लिए पाली में 28 सितम्बर, 2019 को आयोजित कार्यकारिणी बैठक में निम्नाङ्कित निर्णय लिये गए, जिन्हें अप्रेल 2020 से लागू किया गया है-

वर्तमान में श्वेत-श्याम विज्ञापनों से जिनवाणी पत्रिका को विशेष आय नहीं होती है। वर्ष भर में उसके प्रकाशन में आय अधिक राशि व्यय हो जाती है। अत: इन विज्ञापनों को बन्दकर पाठ्य सामग्री प्रकाशित करने का निर्णय लिया गया।

आर्थिक-व्यवस्था हेतु एक-एक लाख की राशि के प्रतिमाह दो महानुभावों के सहयोग का निर्णय लिया गया। ऐसे महानुभावों का एक-एक पृष्ठ में उनके द्वारा प्रेषित परिचय/सामग्री प्रकाशित करने के साथ वर्षभर उनके नामों का उल्लेख करने का प्रावधान भी रखा गया।

जिनवाणी पत्रिका के प्रति अनुराग रखने वाले एवं हितैषी महानुभावों से निवेदन है कि उपर्युक्त योजना से जुड़कर श्रुतसेवा का लाभ प्राप्त कर पुण्य के उपार्जक बनें। जो उदारमना श्रावक जुड़ना चाहते हैं वे शीघ्र मण्डल कार्यालय या पदाधिकारियों से शीघ्र सम्पर्क करें।

अर्थसहयोगकर्ता जिनवाणी (JINWANI) के नाम से चैक प्रेषित कर सकते हैं अथवा जिनवाणी के निम्नाङ्कित बैंक खाते में राशि नेफ्ट/नेट बैंकिंग/चैक के माध्यम से सीधे जमा करा सकते हैं।

बैंक खाता नाम-JINWANI, बैंक-State Bank of India, बैंक खाता संख्या-51026632986, बैंक खाता-SAVING Account, आई.एफ.एस. कोड-SBIN0031843, ब्रॉच-Bapu Bazar, Jaipur

राशि जमा करने के पश्चात् राशि की स्लिप मण्डल कार्यालय या पदाधिकारियों की जानकारी में लाने की कृपा करें जिससे आपकी सेवा में रसीद प्रेषित की जा सके।

'जिनवाणी' के खाते में जमा करायी गई राशि पर आपको आयकर विभाग की धारा 80G के अन्तर्गत छूट प्राप्त होगी, जिसका उल्लेख रसीद पर किया हुआ है। 'जिनवाणी' पत्रिका में जन्मदिवस, शुभविवाह, नव प्रतिष्ठान, नव गृहप्रवेश एवं स्वजनों की पुण्य-स्मृति के अवसर पर सहयोग राशि प्रदान करने वाले सभी महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। आप जिनवाणी पत्रिका को सहयोग प्रदान करके अपनी खुशियाँ बढ़ाना न भूलें।

-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 9314625596

जिनवाणी प्रकाशन योजना के लाभार्थी

'जिनवाणी' हिन्दी मासिक पत्रिका की अर्थ-व्यवस्था को सम्बल प्रदान करने हेतु निम्नाङ्कित धर्मनिष्ठ उदारमना श्रावकरत्नों से राशि रुपये 1,00,000/- प्राप्त हुई है। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं जिनवाणी परिवार उनका हार्दिक आभारी है।

(1) श्री चंचलमलजी बच्छावत, कोलकाता, अध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
(2) श्रीमती मंजूजी भण्डारी, बेंगलोर, अध्यक्ष-अ. भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल
(3) श्री पी. शिखरमलजी सुराणा, चेन्नई, पूर्व संघाध्यक्ष एवं पूर्व मण्डल अध्यक्ष
(4) श्री विनयचन्दजी डागा, जयपुर, कार्याध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
(5) डॉ. धर्मचन्दजी जैन, जयपुर, कार्याध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
(6) श्री अशोक कुमारजी सेठ, जयपुर, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
(7) श्री राजेन्द्र कुमारजी रितुलजी पटवा, जयपुर, कोषाध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
(8) श्री हिमांशुजी सुपुत्र श्री सोहनलालजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा, जिला-टोंक
(9) श्री गौत्तमचन्दजी जैन, पूर्व जिला रसद अधिकारी (अलीगढ़-रामपुरा वाले), जयपुर
(10) न्यायमूर्ति श्री जसराजजी श्री आनन्दजी चौपड़ा, जयपुर
(11) श्री सुशीलजी सोलंकी, मुम्बई
(12) श्री रतनराजजी नेमीचन्दजी भण्डारी, मुम्बई (पीपाड़ सिटी वाले)
(13) नयनतारा रतनलाल सी. बाफणा एण्ड सन्स, जलगाँव
(14) श्री राजरूपमलजी, संजयजी, अंजयजी, दिवेशजी मेहता, शिवाकाशी
(15) डॉ. एस. एल. नागौरीजी, बून्दी
(16) श्री अरुणजी मेहता, सुनीताजी मेहता छत्तरछाया फाउण्डेशन, जोधपुर
(17) श्री उम्मेदराजजी, एवन्तकुमारजी, राजेशकुमारजी डूंगरवाल (थाँवला वाले), पाँच्यावाला-जयपुर
(18) श्री दुलीचन्दजी-श्रीमती कमलाजी बाघमार, चेन्नई
(19) श्री चंचलमलजी, अशोक कुमारजी चोरड़िया, जोधपुर
(20) श्री प्रमोदजी महनोत, जयपुर, अध्यक्ष-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जयपुर
(21) श्री चंचलराजजी मेहता, अहमदाबाद
(22) श्री जिनेश कुमारजी, रोहितराजजी जैन (ढहरा वाले), हिण्डौनसिटी-जयपुर
(23) श्री सागरमलजी, हुकमचन्दजी नागसेठिया, शिरपुर

वित्तीय वर्ष 2021-22 हेतु अग्रिम रूप से लाभार्थी

(24) श्री भागचन्दजी हेमेशजी सेठ, जयपुर
(25) श्री स्वरूपचन्दजी बाफना, सूरत
(26) श्री सुमतिचन्दजी कोठारी, जयपुर
(27) श्री पवनलालजी मोतीलालजी सेठिया, होलनांथा
(28) श्रीमती अलकाजी, विजयजी नाहर, इन्दौर
(29) श्री कैलाशचन्दजी हीरावत, जयपुर
(30) श्री क्रान्तिचन्दजी मेहता, अलवर
(31) श्री सौभाग्यमलजी, हरकचन्दजी, हनुमान प्रसादजी, महावीर प्रसादजी, कपूरचन्दजी जैन (बिलोता वाले), अलीगढ़-रामपुरा, सवाईमाधोपुर, कोटा एवं जयपुर

JVS PURITY

JVS Foods Pvt. Ltd.

Manufacturer of :
NUTRITION FOODS
BREAKFAST CEREALS
FORTIFIED RICE KERNELS
WHOLE & BLENDED SPICES
VITAMIN AND MINERAL PREMIXES

Special Foods for undernourished Children
Supplementary Nutrition Food for Mass Feeding Programmes

With Best Wishes :

JVS Foods Pvt. Ltd.

CERTIFIED ISO 22000 CERTIFIED

G-220, Sitapura Ind. Area,
Tonk Road, Jaipur-302022 (Raj.)
Tel.: 0141-2770294
Email-jvsfoods@yahoo.com
Website-www.jvsfoods.com
FSSAI LIC. No. 10012013000138

Food Safety System Certification 22000

KALPA-TARU®

WELCOME TO A HOME THAT DOESN'T FORCE YOU TO CHOOSE. BUT, GIVES YOU EVERYTHING INSTEAD.

Life is all about choices. So, at the end of your long day, your home should give you everything, instead of making you choose. Kalpataru welcomes you to a home that simply gives you everything under the sun.

022 3064 3065

Centrally located in Thane (W) | Sky park | Sky community | Lavish clubhouse | Swimming pools | Indoor squash court | Badminton courts

PROJECT
IMMENSA
THANE (W)
EVERYTHING UNDER THE SUN

TO BOOK 1, 2 & 3 BHK HOMES, CALL: +91 22 3064 3065

Site Address: Bayer Compound, Kolshet Road, Thane (W) - 400 601. | **Head Office**:101, Kalpataru Synergy, Opposite Grand Hyatt, Santacruz (E), Mumbai - 400 055. | Tel: +91 22 3064 5000 | Fax: +91 22 3064 3131 | **Email**: sales@kalpataru.com | **Website**: www.kalpataru.com

In association with HDFC PROPERTY FUND

This property is secured with Axis Trustee Services Ltd. and Housing Development Finance Corporation Limited. The No Objection Certificate/Permission would be provided, if required. All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. *Conditions apply.

If undelivered, Please return to

Samyaggyan Pracharak Mandal
Above Shop No. 182,
Bapu Bazar, Jaipur-302003 (Raj.)
Tel. : 0141-2575997

स्वामी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए प्रकाशक, मुद्रक - अशोक कुमार सेठ द्वारा डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन